

यत्र विश्वं भवत्येकनीडम ।





भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा एवं प्रयोग

पाद्यपुस्तक

वेद-विभूषण - II वर्ष / उत्तरमध्यमा - II वर्ष / कक्षा 12वीं

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

(शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार द्वारा स्थापित एवं मान्यता प्राप्त)

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पृष्टिवर्धनम्। ऊर्वारुकिमव वन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्॥

सं ते मज्जा भवतु समु ते परुषा परुः। सं ते मांसस्य विस्नस्तं समस्वयपि रोहतु॥

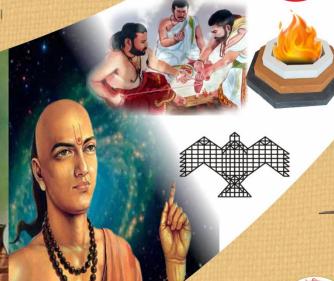
समदोष: समाग्निश्च समधातुमलिकयः। प्रसन्नात्मोन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते॥

लवणेन सुवर्णं सन्द्ध्यात्, सुवर्णेन रजतं, रजतेन लोहं, लोहेन सीसं, सीसेन त्रपु।

यास्ते पृषन् नावो अन्तः समुद्रे हिरण्ययीरन्तिरक्षे चरन्ति।

त्रिपाद्ध्वं उदैत् पुरुषः, पादोऽस्येहाभवत् पुनः।

त्वामग्ने पुष्कराद्धि अथर्वा निरमन्थत ।





महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

Phone: (0734) 2502266, 2502254, E-mail: msrvvpujn@gmail.com, website - www.msrvvp.ac.in

# भारतीय ज्ञान–विज्ञान परम्परा एवं प्रयोग पाढ्यपुस्तक

वेद-विभूषण - II वर्ष / उत्तरमध्यमा - II वर्ष / कक्षा 12वीं

# महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

(शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार द्वारा स्थापित एवं मान्यता प्राप्त)



# महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Phone: (0734) 2502266, 2502254, E-mail: msrvvpujn@gmail.com, website-www.msrvvp.ac.in

लेखकगण	:			
आवरण एवं सज्जा	:			
चित्राङ्कन	:			
तकनीकी सहयोग	:			
अक्षरविन्यास	:			
© महर्षिसान्दीपनिराष्ट्रियवेदविद्याप्रतिष्ठानम्, उज्जयिनी				
ISBN	7			
मूल्य				
संस्करण 💍	4			
प्रकाशित प्रति				
पेपर उपयोगः	:	आर.सी.टी.बी. वाटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित		
प्रकाशक	:	महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान		
		(शिक्षामन्त्रालय भारत सरकार की स्वायत्तशासी संस्था)		
		वेद्विद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)		
		email: msrvvpujn@gmail.com,		
		Web: msrvvp.ac.in		
		दूरभाषा (0734) 2502255, 2502254		

### प्रस्तावना

### (राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के आलोक में)

शिक्षा मन्त्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग), भारत सरकार ने माननीय शिक्षा मन्त्री जी (तत्कालीन मानव संसाधन विकास मन्त्री) की अध्यक्षता में राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान की स्थापना दिल्ली में 20 जनवरी, 1987 को सोसायटी पञ्जीकरण अधिनियम, 1860 के तहत की थी। भारत सरकार ने वेदों की श्रुति परम्परा का संरक्षण, संवर्धन, प्रसार और विकास के लिए प्रतिष्ठान की स्थापना का संकल्प संख्या 6-3/85-SKT-IV दिनाङ्क 30-3-1987 को भारत के राजपत्र में अधिसूचित किया था। वेदों के अध्ययन की श्रुति परम्परा (वेद संहिता, पद पाठ से घनपाठ तक, वेदाङ्क, वेद भाष्य आदि), वेदों का पाठ संरक्षण, वैदिक स्वर तथा वैज्ञानिक आधार पर वेदों की व्याख्या का दायित्व वेद विद्या प्रतिष्ठान को दिया गया था। वर्ष 1993 में राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान के कार्यालय को उज्जैन में स्थानान्तरित करने के पश्चात संगठन का नाम महर्षि सान्दीपिन राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान कर दिया गया। वर्तमान में यह संगठन मध्यप्रदेश सरकार द्वारा प्रदत्त भूमि- पिरसर, महाकाल नगरी, उज्जैन में स्थित है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 के संशोधित नीति-1992 और कार्यप्रणाली (प्रोग्राम ऑफ एक्शन)-1992 में भी वैदिक शिक्षा को वढावा देने के लिए राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान को उत्तरदायित्व दिया गया था। भारत के प्राचीन ज्ञान कोष, मौखिक परम्परा और इस तरह की शिक्षा के लिए पारंपिरक गुरुओं को संयोजित करने के उद्देश्य को 1992 के कार्यप्रणाली (प्रोग्राम ऑफ एक्शन) में उल्लेखित किया गया था।

राष्ट्र की आकांक्षाओं के अनुरूप, राष्ट्रीय स्तर पर वेद और संस्कृत शिक्षा के लिए एक बोर्ड की स्थापना के पक्ष में राष्ट्रीय सहमित, जनादेश, नीति, विशिष्ट उद्देश्य और कार्यान्वयन रणनीतियों के अनुरूप, भारत सरकार के माननीय शिक्षा मन्त्रीजी की अध्यक्षता में महासभा और शासी परिषद के समावेश में "महर्षि सान्दीपिन राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड" की स्थापना 2019 में हुई है। MSRVVP का वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड भी वैदिक शिक्षा का एक भाग है और MSRVVP के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक है जैसा कि MOA और नियमों में संकल्पना की गई है। महर्षि सान्दीपिन राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड को शिक्षा मन्त्रालय,भारत सरकार तथा भारतीय

विश्वविद्यालय संघ, केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली से मान्यता प्राप्त है।

यहाँ यह भी उछुखनीय है कि भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय द्वारा वर्ष 2015 में श्री एन. गोपालस्वामी (पूर्व चुनाव आयुक्त) की अध्यक्षता में गठित सिमिति ''संस्कृत के विकास के लिए विजन और रोडमैप - दस वर्षीय परिप्रेक्ष्य योजना'' की रिपोर्ट में अनुशंसा की गई है कि माध्यमिक विद्यालय स्तर तक वेद संस्कृत शिक्षा के पाठ्यक्रम मानकीकरण, संबद्धता, परीक्षा मान्यता, प्रमाणीकरण के लिए राष्ट्रस्तर पर वेद संस्कृत परीक्षा बोर्ड की स्थापना की जाए। सिमिति की अनुशंसा थी कि प्राथमिक स्तर का वैदिक एवं संस्कृत अध्ययन अभिप्रेरक, सम्प्रेरक एवं आनन्ददायी होना चाहिए। आधुनिक शिक्षा के विषयों को वैदिक और संस्कृत पाठशालाओं में सन्तुलित रूप से सिम्मिलित करना भी आवश्यक है। इन पाठशालाओं की पाठ्यक्रम सामग्री को समकालीन समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप और प्राचीन ज्ञान का उपयोग करते हुए आधुनिक समस्याओं का समाधान खोजने के लिए प्रारूपित किया जाना चाहिए।

वेद पाठशालाओं के संबंध में सिमिति ने यह संस्तुति की है कि संस्कृत और आधुनिक विषयों की श्रेणीबद्ध सामग्री के परिचय के साथ-साथ वेद पाठ कौशल संवर्धन और वेद उच्चारण में मानकीकरण की आवश्यकता है तािक वेद छात्र अन्ततः वेद भाष्य के अध्ययन तक पहुंच सकें और छात्रों को आगे की पढ़ाई के लिए मुख्यधारा में लाया जा सके। उचित स्तर पर वेदों के विकृति पाठ के अध्ययन पर बढ़ावा दिया जाना चािहए। सिमिति के सदस्यों ने यह भी चिंता व्यक्त की है कि वैदिक सस्वर पाठ पूरे भारत में समान रूप से नहीं फैला है, इसलिए वैदिक सस्वर पाठ की शैलियों और शिक्षण पद्धित की क्षेत्रीय विविधताओं में हस्तक्षेप किए बिना स्थित में सुधार के लिए उचित कदम उठाया जाना है।

यह भी अनुभव किया गया कि वेद और संस्कृत अविभाज्य हैं और एक दूसरे के पूरक हैं और देश भर में सभी वेद पाठशालाओं और संस्कृत पाठशालाओं के लिए परीक्षा मान्यता और सम्बद्धता की समस्याएँ समान है, इसलिए दोनों के लिए एक साथ वेद संस्कृत हेतु एक बोर्ड का गठन किया जा सकता है। समिति ने यह पाया कि बोर्ड द्वारा आयोजित परीक्षाओं को कानूनी रूप से वैध मान्यता प्राप्त होनी चाहिए, जो शिक्षा की आधुनिक बोर्ड प्रणाली के साथ समानता रखे। समिति ने पाया कि महर्षि सान्दीपनि

राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान उज्जैन को ''महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत विद्या परिषद्'' के नाम से परीक्षा बोर्ड का दर्जा दिया जाये, जिसका मुख्यालय उज्जैन में रहे। परीक्षा बोर्ड होने के अतिरिक्त अब तक जो सभी वेद कार्यक्रम और वेद पर गतिविधियाँ हैं, वे सभी प्रतिष्ठान में जारी रहेंगे।

वैदिक शिक्षा का प्रचार भारत की गौरवशाली ज्ञान परम्परा का एक व्यापक अध्ययन है और इसमें वैदिक अध्ययन (वेद संहिता, पद पाठ से घनपाठ तक, स्वर का सम्यक् प्रयोग ज्ञान आदि), सस्वर पाठ कौशल, मन्त्र उच्चारण और संस्कृत ज्ञान प्रणाली सामग्री की बहुस्तरीय श्रुति परम्परा सिम्मिलित है। प्रतिष्ठान में NEP 2020 अनुरूप 3 + 4 (सात साल तक) के वेद अध्ययन की योजना में पारम्परिक छात्रों को मुख्य धारा में लाने की नीति के परिप्रेक्ष्य में अन्य विभिन्न आधुनिक विषयों जैसे संस्कृत, अंग्रेजी, मातृभाषा, गणित, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान, दर्शन, योग, वैदिक कृषि आदि पाठ्यक्रम के अनुसार तथा वैदिक शिक्षा पर केन्द्रित नीति निर्धारक निकायों में राष्ट्रीय सहमित, समय की उपलब्धता के आधार पर सभी अध्ययन संयोजित हैं। अध्ययन की यह योजना NEP 2020 के परिप्रेक्ष्य में भारतीय ज्ञान प्रणाली पर ध्यान केन्द्रित करने वाले पाठ्यक्रम सामग्री में आधुनिक ज्ञान के साथ एवं भारतीय ग्रंथों से तैयार वैदिक ज्ञान के उपयुक्त सामग्री के साथ है।

प्रतिष्ठान बोर्ड की वेद पाठशालाओं, गुरु शिष्य ईकाइयों और गुरुकुलों में, पाठ्यक्रम मुख्य रूप से सम्पूर्ण सस्वर कण्ठस्थीकरण के साथ संपूर्ण वेद शाखा का अध्ययन होता है तथा संस्कृत, अंग्रेजी, मातृभाषा, गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान, दर्शन, योग, वैदिक कृषि और SUPW जैसे अतिरिक्त सहायक विषयों के साथ वेद अध्ययन होता है।

यह सर्वविदित तथ्य है कि वेदों की 1131 शाखाएँ सस्वर पाठ के साथ थे, अर्थात् 21 ऋग्वेद में, 101 यजुर्वेद में, 1000 सामवेद में और 9 अर्थवंवेद में। समय के साथ इन शाखाओं की एक बड़ी संख्या विलुप्त हो गई और वर्तमान में केवल 10 शाखाएँ, अर्थात् ऋग्वेद में एक, यजुर्वेद में 4, सामवेद में 3 और अर्थवंवेद में 2 सस्वर पाठ के रूप में विद्यमान हैं, जिन पर भारतीय ज्ञान प्रणाली आधारित है, इन 10 शाखाओं के संबंध में भी बहुत कम प्रतिनिधि वेदपाठी पंडित है जो श्रुति परम्परा/पाठ/वेद ज्ञान परम्परा को उसके प्राचीन और पूर्ण रूप में संरक्षित किये हुए हैं। जब तक श्रुति परम्परा के अनुसार वैदिक शिक्षा पर मूलरूप से ध्यान नहीं दिया जाएगा, तब तक यह व्यवस्था सुदृढ़ नहीं हो पायेगी। वैदिक

श्रुति परम्परा की श्रुति अध्ययनों के पहलुओं को सामान्य/अध्ययन में स्कूल में न तो पढ़ाया जाता है और न ही किसी स्कूली शिक्षा के पाठ्यक्रम में सिम्मिलित किया जाता है, और न ही स्कूलों/बोर्डों के पास उन्हें आधुनिक स्कूल पाठ्यक्रम में सिम्मिलित करने और सञ्चालित करने की विशेषज्ञता है।

वैदिक छात्र जो श्रुति परम्परा / वेद का पाठ सीखते हैं, वे दूर-दराज के गाँवों, सीमावर्ती गाँवों आदि में वेद गुरुकुलों में, वेद पाठशालाओं में, वैदिक आश्रमों में हैं, और वेद अध्ययन के लिए उनका समर्पण लगभग 1900 - 2100 घंटे प्रतिवर्ष है। जो अन्य स्कूल बोर्ड की सीखने की प्रणाली के समय से दोगुना है और वैदिक छात्रों को ''गुरु-मुख-उच्चारण अनुचारण'' - वेद गुरु के सामने बैठकर शब्दशः उच्चारण सीखना होता है, संपूर्ण वेद, शब्दशः उच्चारण (उदात्त, अनुदात्त, स्विरत आदि) के साथ कण्ठस्थ करना होता है और स्मृति के बल पर बिना किसी पुस्तक/पोथी को देखे।

ज्ञात हो कि इस प्रकार के वैदिक अध्ययन, वेद मन्त्रपाठ की रीति, गुरु शिष्य की अखण्ड मौखिक परम्परा से प्रचित कम के कारण वेदों के मौखिक प्रसारण को मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत रूप में यूनेस्को-विश्व मौखिक विरासत सूची में मान्यता प्राप्त हुई है। इसिलए, सिद्यों पुरानी वैदिक शिक्षा (श्रुति परम्परा/सस्वर पाठ/वेद ज्ञान परम्परा) की प्राचीनता और सम्पूर्ण अखण्डता को बनाए रखने के लिए सुयोग्य कार्यनीति की आवश्यकता है। इसिलए, प्रतिष्ठान और इस बोर्ड ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 द्वारा निर्धारित कौशल और व्यावसायिक विषयों के साथ-साथ आधुनिक विषयों जैसे संस्कृत, अंग्रेजी, मातृभाषा, गणित, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान, दर्शन, योग, वैदिक कृषि आदि के साथ विशिष्ट प्रकार के वेद पाठ्यक्रम को अपनाया है।

कोई भी व्यक्ति तब सुखी होकर जी सकता है जब वह परा-विद्या और अपरा-विद्या दोनों का अध्ययन करता है। वेदों में से भौतिक ज्ञान, उनकी सहायक शाखाएँ और भौतिक रुचि के विषय अपरा-विद्या कहलाते थे। सर्वोच्च वास्तविकता का ज्ञान, उपनिषदों की अंतिम खोज, परा-विद्या कहलाती है। वेद और उसके सहायक के रूप में अध्ययन किए जाने वाले विषयों की कुल संख्या 14 है। विद्या की 14 शाखाएँ ये हैं - चार वेद, छह वेदांग, मीमांसा (पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा), न्याय, पुराण और धर्मशास्त्र। आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धवंवेद और अर्थशास्त्र सहित चौदह विद्याएं अठारह हो जाते हैं। सदियों

से भारत उपमहाद्वीप में सभी शिक्षा संस्कृत भाषा में ही थी, क्योंकि इस उपमहाद्वीप में लम्बे समय तक संस्कृत बोली जाने वाली भाषा रही। इसलिए वेद भी सुलभता से समझे जाते थे।

तक्षशिला के विद्यालयों के सम्बन्ध में अठारह शिल्प-या औद्योगिक और तकनीकी कला और शिल्प का उल्लेख किया गया है। छान्देग्य उपनिषद् तथा नीति ग्रन्थों में भी इन का विवरण है। निम्नलिखित 18 कौशल/व्यावसायिक विषय अध्ययन के विषय बताए गए हैं- (1) गायन सङ्गीत (2) वाद्य सङ्गीत (3) नृत्य (4) चित्रकला (5) गणित (6) लेखाशास्त्र (7) इञ्जीनियरिङ्ग (8) मूर्तिकला (9) प्रजनन (10) वाणिज्य (11) चिकित्सा (12) कृषि (13) परिवहन और कानून (14) प्रशासनिक प्रशिक्षण (15) तीरंदाजी, किला निर्माण और सैन्य कला (16) नये वस्तु या उपज का निर्माण। उपर्युक्त कला और शिल्प में तकनीकी शिक्षा के लिए प्राचीन भारत में एक प्रशिक्ष प्रणाली विकसित की गई थी। विद्या और अविद्या मनुष्य को इस प्रपंच में सन्तुष्ट जीवन व्यतीत करने के लिए समर्थ और परलोक में मुक्ति योग्य सिद्ध करती है।

दुनिया की सबसे पुरानी सभ्यताओं में सर्व प्रथम भारतीय सभ्यता में शास्त्रों, विज्ञान और प्रौद्योगिकी को सीखने की एक विशाल एवं सुदृढ परम्परा रही है। भारत प्राचीन काल से ही ऋषियों, ज्ञानियों और संतों की भूमि के साथ-साथ विद्वानों और वैज्ञानिकों की भूमि भी रही है। शोध से पता चला है कि भारत सीखने सिखाने (विद्या-आध्यात्मिक ज्ञान और अविद्या- भौतिक ज्ञान) के क्षेत्र में विश्व गुरु तो था ही, सिक्कय रूप से भी सम्पूर्ण प्रपञ्च में योगदान दे रहा था और भारत में आधुनिक विश्वविद्यालयों जैसे सीखने के विशाल केन्द्र स्थापित किए गए थे, जहाँ हजारों शिक्षार्थी आते थे। प्राचीन ऋषियों द्वारा खोजी गई कई विज्ञान और प्रौद्योगिकी तकनीकी, सीखने की पद्धतियाँ, सिद्धान्तों और तकनीकों ने कई पहलुओं पर हमारे विश्व के ज्ञान के मूल सिद्धान्तों को बनाया और प्रवल किया है, खगोल विज्ञान, भौतिकी, रसायन विज्ञान, गणित, चिकित्सा, प्रौद्योगिकी, ध्वन्यात्मकता, व्याकरण आदि पर दुनिया में भारत का योगदान समझा जाता है। प्रत्येक भारतीय बालक, बालिका द्वारा इस महान् देश का गौरवान्वित नागरिक होने के कारण इन विषयों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये। भारत की संसद के प्रवेश द्वार पर उद्धृत ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' जैसे भारत के विचार और विभिन्न अवसरों पर संवैधानिक प्राधिकरणों द्वारा उद्धृत कई वेद मंत्र के अर्थ वेदों के अध्ययन से ही ज्ञात होते हैं और उन पर मनन करके

ही वास्तविक प्रेरणा प्राप्त की जा सकती है। वेदों और सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में "सत्, चित, आनंद" के रूप में सभी प्राणियों की अन्तर्निहित समानता पर जोर दिया गया है।

यह भी उल्लेख किया गया है कि वेद वैज्ञानिक ज्ञान के स्रोत हैं और हमें आधुनिक समस्याओं के समाधान के लिए वेदों और भारतीय शास्त्रों के स्रोतों की ओर पुनः निष्ठा से देखना होगा। जब तक छात्रों को वेदों का पाठ, शुद्ध वैदिक ज्ञान सामग्री और वैदिक दर्शन को आध्यात्मिक ज्ञान और वैज्ञानिक ज्ञान के रूप में नहीं पढ़ाया जाता है, तब तक आधुनिक भारत की आकांक्षा को पूरा करने के लिए वेदों के सन्देश का प्रसार पूर्ण रूप से सम्भव नहीं है।

वेद की शिक्षा (वैदिक मौिखक एवं श्रुति परंपरा/वेद पाठ/वेद ज्ञान परम्परा) केवल धार्मिक शिक्षा नहीं है। यह कहना अनुचित होगा कि वेदों का अध्ययन केवल धार्मिक निर्देश है। वेद केवल धार्मिक ग्रन्थ नहीं हैं और इनमें केवल धार्मिक सिद्धान्त ही नहीं हैं, बल्कि वेद शुद्ध ज्ञान के कोष है, मानव जीवन की कुजी वेदों में है इसलिए, वेदों में निर्देश या शिक्षा को केवल "धार्मिक शिक्षा/धार्मिक निर्देश" के रूप में नहीं माना जा सकता है।

2004 की सिविल अपील संख्या 6736 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय (AIR 2013: 15 SCC 677); (निर्णय की दिनाङ्क- 3 जुलाई 2013), जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में यह स्पष्ट है कि वेद केवल धार्मिक ग्रन्थ नहीं हैं। वेदों में गणित, खगोल विज्ञान, मौसम विज्ञान, रसायन विज्ञान, हाइड्रोलिक्स, भौतिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी, कृषि, दर्शन, योग, शिक्षा, काव्यशास्त्र, व्याकरण, भाषा विज्ञान आदि के विषय सम्मिलित हैं, जिन्हें माननीय भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रकाशित किया गया है।

# राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के अनुपालन में प्रतिष्ठान एवं बोर्ड के माध्यम से वैदिक शिक्षा -

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में भारतीय ज्ञान प्रणाली 'संस्कृत ज्ञान प्रणाली' के रूप में भी जाना जाता है, उनके महत्त्व और पाठ्यक्रम में उनका समावेश और विविध विषयों के संयोजन में लचीले दृष्टिकोण को मजबूती से प्रदर्शित किया गया है। कला एवं मानविकी के छात्र भी विज्ञान सीखेंगे, प्रयास करना होगा कि सभी व्यावसायिक विषय और व्यावहारिक कौशलों (सॉफ्ट स्किल्स) को प्राप्त करें। कला, विज्ञान और अन्य क्षेत्रों में भारत की गौरवशाली परम्परा इस तरह की शिक्षा की ओर बढ़ने में

सहायक होगी। भारत की समृद्ध, विविध प्राचीन और आधुनिक संस्कृति और ज्ञान प्रणालियों और परम्पराओं को संयोजित करने और उससे प्रेरणा पाने हेतु यह नीति बनायी गयी है। भारत की शास्त्रीय भाषाओं और साहित्य के महत्त्व, प्रासिङ्गकता और सुन्दरता की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। संस्कृत, संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्णित एक महत्त्वपूर्ण आधुनिक भाषा है यदि सम्पूर्ण लैटिन और ग्रीक साहित्य को मिलाकर भी इसकी तुलना की जाए तो भी वह संस्कृत शास्त्रीय साहित्य की बराबरी नहीं कर सकता। संस्कृत साहित्य में गणित, दर्शन, व्याकरण, सङ्गीत, राजनीति, चिकित्सा, वास्तुकला, धातुविज्ञान, नाटक, कविता, कहानी, और बहुत कुछ (जिन्हें "संस्कृत ज्ञान प्रणालियों" के रूप में जाना जाता है) के विशाल भण्डार हैं। विश्व विरासत के लिए इन समृद्ध संस्कृत ज्ञान प्रणाली विरासतों को न केवल पोषण और भविष्य के लिए संरक्षित किया जाना चाहिए बल्कि हमारी शिक्षा प्रणाली के माध्यम से शोध कराकर इन्हें बढ़ाते हुए नए उपयोगों में भी रखा जाना चाहिए। इन सबको हजारों वर्षों में जीवन के सभी क्षेत्रों के लोगों द्वारा, सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के एक विस्तृत जीवन्त दर्शन के साथ लिखा गया है। संस्कृत को रूचिकर और अनुभावात्मक होने के साथ-साथ समकालीन रूप से प्रासिक्षक विधियों से पढ़ाया जाएगा । संस्कृत ज्ञान प्रणाली का उपयोग विशेष रूप से ध्वनि और उच्चारण के माध्यम से है। फाउंडेशन और माध्यमिक स्कूल स्तर पर संस्कृत की पाठ्यपुरत्तकों को संस्कृत के माध्यम से संस्कृत पढ़ाने (एस्.टी.एस्.) और इसके अध्ययन को आनन्ददायी बनाने के लिए सरल मानक संस्कृत (एस्.एस्.एस्.) में लिखा जाना है। ध्वन्यात्मकता और उच्चारण वेदों की मौखिक परम्परा पर लागू होता है। वैदिक शिक्षा ध्वन्यात्मकता और उच्चारण पर आधारित है।

कला और विज्ञान के बीच, पाठ्यक्रम और पाठ्येतर गतिविधियों के बीच, व्यावसायिक और शैक्षणिक धाराओं, आदि के बीच कोई स्पष्ट विभेद नहीं किया गया है। सभी ज्ञान की एकता और अखण्डता को सुनिश्चित करने के लिए, एक बहु-विषयक दुनिया के लिए विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, कला, मानविकी और खेल के बीच एक बहु-विषयक (Multi-Disciplinary) एवं समग्र शिक्षा के विकास पर बल दिया गया है। नैतिकता, मानवीय और संवैधानिक मूल्य जैसे, सहानुभूति, दूसरों के लिए सम्मान, स्वच्छता, शिष्टाचार, लोकतान्त्रिक भावना, सेवा की भावना, सार्वजनिक सम्पत्ति के

िलए सम्मान, वैज्ञानिक चिन्तन, स्वतन्त्रता, उत्तरदायित्व, बहुलतावाद, समानता और न्याय पर जोर दिया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के बिन्दु कं. 4.23 में अनिवार्य विषयों, कौशलों और क्षमताओं का शिक्षाकमीय एकीकरण के विषय में निर्देश है। विद्यार्थियों को अपने व्यक्तिगत पाठ्यक्रम को चुनने में बड़ी मात्रा में लचीले विकल्प मिलेगें, लेकिन आज की तेजी से बदलती दुनिया में सभी विद्यार्थियों को एक अच्छे, सफल, अनुभवी, अनुकूलनीय और उत्पादक व्यक्ति बनने के लिए कुछ विषयों, कौशलों और क्षमताओं को सीखना भी आवश्यक है। वैज्ञानिक स्वभाव और साक्ष्य आधारित सोच, रचनात्मकता और नवीनता, सौंद्र्यशास्त्र और कला की भावना, मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति और संवाद, स्वास्थ्य और पोषण, शारीरिक शिक्षा, शारीरिक दक्षता, स्वास्थ्य और खेल, सहयोग और टीम वर्क, समस्या को हल करने और तार्किक चिन्तन, व्यावसायिक एक्सपोजर और कौशल, डिजिटल साक्षरता, कोडिंग और कम्प्यूटेशनल चिन्तन, नैतिकता और नैतिक तर्क, मानव और संवैधानिक मूल्यों का ज्ञान और अभ्यास, लिङ्ग संवेदनशीलता, मौलिक कर्तव्य, नागरिकता कौशल और मूल्य, भारत का ज्ञान, पर्यावरण सम्बन्धी जागरूकता, जिसमें पानी और संसाधन संरक्षण, स्वच्छता और साफ-सफाई, समसामयिक घटना और स्थानीय समुदायों, राज्यों, देश और दुनिया द्वारा जिन महत्त्वपूर्ण मुद्दों का सामना किया जा रहा है उनका ज्ञान, भाषाओं में प्रवीणता के अलावा, इन कौशलों में सम्मिलित है। बच्चों के भाषा कौशल संवर्धन के लिए और इन समृद्ध भाषाओं और उनके कलात्मक निधि के संरक्षण के लिए, सार्वजनिक या निजी सभी विद्यालयों में सभी छात्रों को भारत की एक शास्त्रीय भाषा और उससे सम्बन्धित साहित्य सीखने का कम से कम दो साल का विकल्प मिलेगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के बिन्दु कं. 4.27 में "भारत का ज्ञान" के विषय में महत्त्वपूर्ण निर्देश है। "भारत का ज्ञान" में आधुनिक भारत और उसकी सफलताओं और चुनौतियों के प्रति प्राचीन भारत का ज्ञान और उसका योगदान - भारतीय ज्ञान प्रणाली जैसे गणित, खगोल विज्ञान, दर्शन, योग, वास्तुकला, चिकित्सा, कृषि, इंजीनियरिंग, भाषा विज्ञान, साहित्य, खेल के साथ –साथ शासन, राजव्यवस्था, संरक्षण आदि जहाँ भी प्रासिक्षक हो, विषयों में सिम्मिलित किया जाएगा। इसमें औषधीय

प्रथाओं, वन प्रबन्धन, पारम्परिक (जैविक) फसल की खेती, प्राकृतिक खेती, स्वदेशी खेलों, विज्ञान और अन्य क्षेत्रों में प्राचीन और आधुनिक भारत के प्रेरणादायक व्यक्तित्वों पर ज्ञानदायी विषय हो सकेंगे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के बिन्दु कं. 11.1 में समग्र और बहु-विषयक शिक्षा की ओर प्रवृत्त करने के निर्देश हैं। भारत में समग्र एवं बहु-विषयक विधि से सीखने की एक प्राचीन परम्परा पर बल दिया गया है, तक्षशिला और नालन्दा जैसे विश्वविद्यालयों के उल्लेख सहित 64 कलाओं के ज्ञान के रूप में गायन और चित्रकला, वैज्ञानिक क्षेत्र जैसे रसायनशास्त्र और गणित, व्यावसायिक क्षेत्र जैसे बढ़ई का काम और कपड़े सिलने का कार्य, व्यावसायिक कार्य जैसे औषि तथा अभियान्त्रिकी और साथ ही साथ सम्प्रेषण, चर्चा और वाद-संवाद करने के व्यावहारिक कौशल (सॉफ्ट स्किल्स) भी सम्मिलित है। यह विचार है कि गणित, विज्ञान, व्यावसायिक विषयों और सॉफ्ट स्किल सहित रचनात्मक मानव प्रयास की सभी शाखाओं को 'कला' माना जाना चाहिए, जिसका मूल भारत है। 'कई कलाओं के ज्ञान' या जिसे आधुनिक समय में प्राय: 'उदार कला' कहा जाता है (अर्थात, कलाओं की एक उदार धारणा) की इस धारणा को भारतीय शिक्षा में वापस लाया जाना चाहिए, क्योंकि यह ठीक उसी तरह की शिक्षा है जो 21वीं सदी के लिए आवश्यक है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के बिन्दु कं. 22.1 में भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का संवर्धन हेतु निर्देश हैं। भारत संस्कृति का समृद्ध भण्डार है – जो हजारों वर्षों में विकित्तत हुआ है, और यहाँ की कला, साहित्यिक कृतियों, प्रथाओं, परम्पराओं, भाषायी अभिव्यक्तियों, कलाकृतियों, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहरों के स्थलों इत्यादि में परिलक्षित होता हुआ दिखता है। भारत में भ्रमण, भारतीय अतिथि सत्कार का अनुभव होना, भारत के आकर्षक हस्तिशिल्प एवं हाथ से बने कपड़ों को खरीदना, भारत के प्राचीन साहित्य को पढ़ना, योग एवं ध्यान का अभ्यास करना, भारतीय दर्शनशास्त्र से प्रेरित होना, भारत के अनुपम त्यौहारों में भाग लेना, भारत के वैविध्यपूर्ण सङ्गीत एवं कला की सराहना करना और भारतीय फिल्मों को देखना आदि ऐसे कुछ आयाम हैं जिनके माध्यम से दुनिया भर के करोड़ो लोग प्रतिदिन इस सांस्कृतिक विरासत में सिम्मिलित होते हैं, इसका आनन्द उठाते हैं और लाभ प्राप्त करते हैं।

यही सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक सम्पदा है भारत की इस सांस्कृतिक सम्पदा का संरक्षण, संवर्धन एवं प्रसार, देश की उच्चतर प्राथमिकता होनी चाहिए क्योंकि इस देश की पहचान के साथ-साथ इसकी अर्थव्यवस्था के लिए भी बहुत महत्त्वपूर्ण है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के बिन्दु कं. 22.2 में कलाओं के विषय में निर्देश हैं। भारतीय कला एवं संस्कृति का संवर्धन राष्ट्र एवं राष्ट्र के नागरिकों के लिए महत्त्वपूर्ण है। बच्चों में अपनी पहचान और अपनेपन के भाव तथा अन्य संस्कृतियों और पहचानों की सराहना का भाव पैदा करने के लिए सांस्कृतिक जागरूकता और अभिव्यक्ति जैसी प्रमुख क्षमताओं को बच्चों में विकसित करना जरूरी है। बच्चों में अपने सांस्कृतिक इतिहास, कला, भाषा एवं परम्परा की भावना और ज्ञान के विकास द्वारा ही एकता, सकारात्मक सांस्कृतिक पहचान और आत्म-सम्मान निर्मित किया जा सकता है। अतः व्यक्तिगत एवं सामाजिक कल्याण के लिए सांस्कृतिक जागरूकता और अभिव्यक्ति का योगदान महत्त्वपूर्ण है।

प्रतिष्ठान की मुख्य वैदिक शिक्षा (वेदों की श्रुति या मौिखक परम्परा/वेद पाठ/वैदिक ज्ञान परम्परा) सिंहत अन्य आवश्यक आधुनिक विषय- संस्कृत, अंग्रेजी, मातृभाषा, गणित, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान, दर्शन, योग, वैदिक कृषि, भारतीय कला, SUPW आदि महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड की पाठ्य पुस्तकों की नींव/स्रोत भारतीय ज्ञान परम्परा (IKS) विषयों की अनुप्रविष्टि (इनपुट) पर आधारित हैं। ये सभी निर्देश राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के दिशानिर्देशों के अनुरूप है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन के शैक्षिक चिन्तकों, प्राधिकरणों के परामर्श एवं नीति को ध्यान में रखते हुए प्रारूप पुस्तकें पीडीएफ फॉर्मेट में उपलब्ध करायी गयी हैं। इन पुस्तकों को भविष्य में NCF के अनुरूप अद्यतन किया जाएगा और अन्त में प्रिन्ट रूप में उपलब्ध कराया जाएगा।

महर्षि सान्दीपिन राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन के राष्ट्रीय आदर्श वेदिवद्यालय के अध्यापक महानुभावों ने, वेद अध्यापन (वैदिक मौखिक एवं श्रुति परम्परा/वेद पाठ/वेद ज्ञान परम्परा) में समर्पित आचार्यों ने, सम्बद्ध वेद पाठशालओं के संस्कृत एवं आधुनिक विषयों के अध्यापकों ने, आधुनिक विषय पाठ्यपुस्तकों को इस रूप में प्रस्तुत करने में पिछले दो वर्षों में अथक परिश्रम किया है। उन सभी को हृदय की गहराई से धन्यवाद समर्पण करता हूँ। राष्ट्र स्तर के विविध विशेषज्ञों ने

समय-समय पर पधार कर पाठ्यपुस्तकों में गुणवत्ता लाने में विशेष सहायता प्रदान की है। उन सभी विशेषज्ञों एवं विद्यालयों के अध्यापक महानुभावों को भी धन्यवाद अर्पित करता हूँ। अक्षर योजना हेतु, चित्राङ्कन हेतु, पेज सेटिंग हेतु मेरे सहयोगी कर्मचारियों ने कार्य किया है, उन सभी को हृदय की गहराई से कृतज्ञता समर्पण करता हूँ।

पाठ्य पुस्तकों की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए रचनात्मक आलोचना सहित सभी सुझावों का स्वागत है।

> आपरितोषात् विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम्। बलवदपि शिक्षितानाम् आत्मन्यप्रत्ययं चेतः॥

> > (अभिज्ञानशाकुन्तलम् १.०२)

(जब तक विद्वानों को पूर्ण सन्तुष्टि न हो जाए तब तक विशिष्ट प्रयोग को सब तरह से सफल नहीं मानता क्योंकि प्रयोग में विशेष योग्यता प्राप्त विद्वान भी पहले प्रयोग के सफलता में आश्वस्त नहीं रहता है।)

प्रो. विरूपाक्ष वि जड्डीपाल्

सचिव

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

#### प्राक्कथन

कक्षा वेदिवभूषण द्वितीयवर्ष/उत्तरमध्यमा—II/कक्षा 12वीं के लिए भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा एवं प्रयोग की प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के मार्गदर्शी, सिद्धान्तों के अनुपालन में प्रकाशित की गई है। इस पाठ्यक्रम में खगोल विज्ञान, धातु विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, शल्य चिकित्सा, सिविल इंजीनियरिंग, भवन निर्माण, नौकायान-निर्माण और दिशा ज्ञान, योग, आयुर्वेद की प्राचीन परम्परा, भौतिकी के प्राचीन भारतीय स्रोत, आहार-विहार विचार, संस्कृत वाड्य में जैव विविधता आदि के सम्बन्ध में भारत को भविष्य की आकाङ्क्षाओं की स्पष्ट भावना को शामिल किया गया है। विशेष रूप से भारतीय ज्ञान प्रणाली पर आधारित सीखने के स्वदेशी तरीकों और वन प्रबन्धन, पारम्परिक (जैविक) फसल की खेती, प्राकृतिक खेती, आदि विशिष्ट पाठ्यक्रम को शामिल किया गया है।

इस पाठ्यपुस्तक के द्वारा छात्रों को संस्कृत वाङ्मय की व्यापक वैज्ञानिक चिन्तन परम्परा से आधुनिक विज्ञान को जोड़कर, प्राचीन भारतीय मनीषियों (आर्यभट्ट, वराहमिहिर, बोधायन, चरक, सुश्रुत, पराश्चर, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त, चाणक्य, चक्रपाणि, दत्ता, माधव, पाणिनि, पतञ्जलि, नागार्जुन, गौतम, पिङ्गल, शङ्करदेव, मैत्रेयी, गार्गी और तिरुवल्लुवर आदि) के विशिष्ट योगदान से परिचित कराया जाएगा।

वेदों में निहित विज्ञान की सङ्कल्पनाओं को आधुनिक विज्ञान से जोड़कर छात्रों को अवगत कराया जाएगा। आधुनिक विज्ञान के सिद्धान्तों और उनके अनुप्रयोगों का उल्लेख हमारे संस्कृत वाड्यय में उपलब्ध है तथा उनका समन्वय आधुनिकतम वैज्ञानिक नियमों से किया जा सकता है। इतना ही नहीं, इन ग्रन्थों का विश्वद अध्ययन, अवलोकन और विवेचन करके नए सिद्धान्तों की सङ्कलपना भी की जा सकती है। इस अवधारणा को मानते हुए छात्रों एवं जिज्ञासुओं में इस पुस्तक को पढ़ कर शोध के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होगी, इस आशा के साथ इस पुस्तक की रचना की गई है।

अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए, जहाँ कहीं भी आवश्यक है, हल किए गए उदाहरण भी दिए गए है। विद्यार्थियों के विषय की समझ को जाँचने के लिए प्रत्येक पाठ के अन्त में अभ्यास प्रश्न शामिल किए हैं जिनमें बहुविकल्पीय प्रश्न, वर्णनात्मक प्रश्नों को रखा है। पुस्तक के अन्त में मॉडल प्रश्न पत्रों को शामिल किया है जिससे विद्यार्थी अपना स्वतः मूल्याङ्कन कर सके।

# विषयानुक्रमणिका

क्रमाङ्क	अध्याय	पृष्ठ कमाङ्क
1	जीवन, स्वास्थ्य और कल्याण के लिये आयुर्वेद	1 - 10
2	प्राचीन भारत में चिकित्सा परम्परा का ऐतिहासिक विकास	11 - 19
3	भौतिकी के प्राचीन भारतीय स्रोत	20 - 36
4	भारत में वनस्पति और पशु विज्ञान	37 - 52
5	भारत में रसायन शास्त्र	53 - 67
62	समुद्रयान और नौका निर्माण विज्ञान	68 - 78
7	शुल्बसूत्र एवं मित्ति	79 - 107
8	स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता के लिए योग	108 - 118
9	प्राचीन भारतीय गणित	119 - 137
10	सामाजिक वानिकी एवं जैवविविधता की परिकल्पना	138 - 153
	मॉडल प्रश्न पत्र	154 - 165

### अध्याय - 1

# जीवन, स्वास्थ्य और कल्याण के लिए आयुर्वेद

### अध्ययन बिंदु

- 1.1 आयुर्वेद की परिभाषा
- 1.2 आयुर्वेद का प्रयोजन
- 1.3 स्वास्थ्य सेवा के लिए एकीकृत दृष्टिकोण
- 1.4 शरीर के आंतरिक वातावरण का सन्तुलन
- 1.5 बाहरी वातावरण के साथ सामंजस्य
- 1.6 आयुर्वेदिक चिकित्सा के सिद्धान्त
- 1.7 पञ्चमहाभूत सिद्धान्त
- 1.8 शरीर के रोगों का उपचार
- 1.9 आयुर्वेद के प्रमुख ग्रन्थ

# 1.1 आयुर्वेद की परिभाषा -

आयुर्वेद शब्द का निर्माण दो शब्दों से मिलकर हुआ है, यथा आयु अर्थात् जीवन और वेद अर्थात् ज्ञान जिससे जीवन का ज्ञान प्राप्त हो वह ''आयुर्वेद'' कहलाता है।

### एति गच्छति इति आयुः।

जो निरंतर गतिमान रहती है, उसे आयु कहते हैं।

# आयुर्जीवितकालः

(अमरकोष 2.8.120)

जीवन काल को आयु कहते हैं। जीवित अर्थात् प्राणयुक्त काल को ''आयु'' कहते हैं।

चेतनानिवृत्तिर्जीवितमनुबन्धः॥

(च.सू. 30.22)

जन्म से लेकर चेतना बने रहने तक के काल को आयु कहते हैं। इस प्रकार आयुर्वेद जीवन या जीवन विज्ञान का ज्ञान है। शरीर के चेतन्य भाव को ''आयु'' कहते हैं। आचार्य चरक के अनुसार आयुर्वेद वह ज्ञान है जिसके द्वारा आयु के हित एवं अहित के साथ सुख दुःख एवं मान (प्रमाण) का विचार किया जाय।

# हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्। मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते॥

(च.सू.1.41.)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार आयुर्वेद आयु का वह ज्ञान है जो आयु सम्बन्धित हित और अहित का ज्ञान कराएँ, आयु के सुख और दुःख रूपी स्वरूप का ज्ञान कराए और आयु के मान (प्रमाण) का ज्ञान कराए।

आचार्य सुश्रुत कहते हैं -

# आयुरस्मिन् विद्यते, अनेन वा आयुर्विन्दतीति आयुर्वेदः

(सुश्रुतसंहिता 1.15)

अर्थात् जिसमें आयु के हिताहित का विचार किया जाएँ तथा जिसके उपदेशों से दीर्घायु की प्राप्ति हो सके, वही आयुर्वेद है।

### पश्येम शरदः शतम्।

(अथर्व. 19.67.1)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र में बताया गया है कि हम सौ वर्षों तक सूर्य को देखते रहें। अर्थात् हमारा जीवनकाल सौ वर्षों का हो।

### जीवेम शरदः शतम्

(अथर्व. 19.67.2)

अथर्ववेद के इस मन्त्र में सूर्य देवता से प्रार्थना की गई है कि हम सौ वर्षों तक जीवित रहे।

# त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। ऊर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

(यजुर्वेद 3.60)

यजुर्वेद के इस मन्त्र में सुगन्धित पुष्टिवर्धक औषिधयों के उपचार के द्वारा रोगों से मुक्ति की प्रार्थना की गई है।

# 1.2 आयुर्वेद का प्रयोजन –

प्राचीन ग्रंथकारों ने आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान के 2 प्रयोजन बताएँ हैं -

- 1) स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा
- 2) रोगयस्त व्यक्ति के रोग का निवारण

इस विषय में चरकसंहिता (सूत्रस्थान 30.26) का उद्धरण प्रासिङ्ग है –

# प्रयोजनं चास्य स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणमातुरस्य विकारप्रशमनं च।

(च.सू. 30.26)

यदि कोई व्यक्ति अपने स्वास्थ्य की रक्षा किसी कारणवश मिथ्या आहार-विहारादि के कारण नहीं कर पाता है और अस्वस्थ हो जाता है तो उसके रोग निवारण के उपाय भी आयुर्वेद में वर्णित हैं। आधुनिक युग में भी स्वास्थ्य रक्षा और रोगनिवारण के रूप में औषधियों का प्रयोग किया जाता है। अपने विविध प्रकरणों के द्वारा आयुर्वेद अपने उपर्युक्त दोनो प्रयोजनों को प्राप्त करने का प्रयास करता है। मनुष्य के शारीरिक ही नहीं, अपितु मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा भी इसका महत्वपूर्ण उद्देश्य है। इसिलिए आयुर्वेद सम्पूर्ण आयु का संरक्षण करने वाला विज्ञान है। माना जाता है कि मन की स्वस्थता भी स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। आयुर्वेद शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के साथ-साथ सामाजिक स्वास्थ्य पर भी बल देता हैं।

### व्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्षः स्वस्थस्य रक्षणं च।

(सु.सू. 1.14)

आयुर्वेदिक चिकित्सा के द्वारा रोगियों को रोग से मुक्ति मिलती है और स्वस्थ व्यक्तियों के स्वास्थ्य की रक्षा होती हैं।

> आयुः कामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम्। आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः॥

> > (अष्टाङ्गहृदयम् सू. 1.2)

आयुर्वेद की विधि एवं निर्देशों का पालन करने से आयु का लाभ होता है।

# 1.3 स्वास्थ्य सेवा के लिए एकीकृत दृष्टिकोण –

आयुर्वेद के सिद्धांतों ने संसार की प्रथम ओषधी के रूप में कार्य किया। आयुर्वेद की परिभाषा एकीकृत चिकित्सा की आधुनिक धारणाओं के अनुरूप ही है। एकीकृत चिकित्सा एक ही समय में शरीर, मन और स्वयं को स्वस्थ करने का प्रयास करती है या मानव को संपूर्ण रूप स्वस्थ करती है। एकीकृत चिकित्सा पद्धित सुरक्षित और उच्च गुणवत्ता वाले वैकित्पक चिकित्सा उपचारों को मुख्य चिकित्सा पद्धित से जोड़ती है। आयुर्वेद के अनुसार मानव जीवन शरीर, मन और स्वयं के तिपाई पर स्थित है। आयुर्वेद के अनुसार संसार में उपचार की कई प्रणालियाँ प्रचलित है, हमें सभी प्रणालियों की जाँच करके एकीकृत प्रणाली बनाना चाहिए।

# 1.4 शरीर के आंतरिक वातावरण का सन्तुलन –

आयुर्वेद, स्वास्थ्य को शरीर के आंतरिक वातावरण के गतिशील सन्तुलन के रूप में परिभाषित करता है। यह इंद्रियों, शरीर अङ्गों, मन और स्वयं पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। जैसे सूर्य, चन्द्रमा और हवा बाहरी वातावरण के सन्तुलन को बनाए रखतें हैं, शरीर स्व विनियमन द्वारा उपचय और अपचयी गतिविधियों को सन्तुलित करके स्वयं को बनाए रखता है।

### 1.5 बाहरी वातावरण के साथ सामञ्जस्य -

आयुर्वेद बताता है कि बाहरी वातावरण के साथ सामञ्जस्य स्थापित करके आंतरिक वातावरण का सन्तुलन बनाए रखा जा सकता है। आयुर्वेद के अनुसार मानव, ब्रह्माण्ड का एक प्रतीक है। सूक्ष्म जगत, स्थूल जगत का एक लघु निरूपण है। मनुष्य एक ही तत्त्व से बने होते हैं जो प्रकृति को बनाते हैं।

# 1.6 आयुर्वेदिक चिकित्सा के सिद्वान्त -

आयुर्वेदिक चिकित्सा निवारण और उपचारात्मक दोनों औषधियों से संबंधित हैं। आयुर्वेद में दिनचर्या एवं ऋतुचर्या का प्रावधान कर उसके माध्यम से प्रातः काल उठने से लेकर रात को शयन तक की व्यवस्थित विधि का निर्देश दिया गया है। इसमें मलत्याग, दन्तधावन (मन्जन), अभ्यन्ग (मालिश), व्यायाम, उबटन, स्नान, गन्ध माला आदि सुन्गधित द्रव्यों का धारण, वस्त्र धारण करने के बाद विधिवत आहार ग्रहण कर जीविकोपार्जन के लिए कर्म करने का उल्लेख है। इस दिनचर्या में ऋतु के अनुसार परिवर्तन भी हो जाता है। अतः जो व्यक्ति ऋतुचर्या को ध्यान में रखते हुए दिनचर्या का प्रयोग करता है वह स्वस्थ रहता हैं। इसी क्रम में आयुर्वेद के विशिष्ट उपक्रम – पञ्चकर्म, रसायन एवं वाजीकरण हैं। रसायन तथा वाजीकरण शरीर को अधिक पुष्ट बनाते हैं।

याभिः क्रियाभिर्जायन्ते शरीरे धातवः समाः। सा चिकित्सा विकारणां कर्म तद्भिषजां स्मृतम्॥

(च.सू. 16.34)

जिन क्रियाओं के द्वारा शरीर में दोषों की समता उत्पन्न हो, वही चिकित्सा है तथा चिकित्सकों का कर्तव्य भी यही है।

### 1.7 पञ्चमहाभूत सिद्धान्त –

मानव शरीर प्रकृति के पाँच तत्त्वों से मिलकर बना है।

# सर्वं द्रव्यं पाञ्चभौतिकमस्मिन्नर्थे । तच्चेतनावदचेतनं च।

तस्य गुणाः शब्दादयो गुर्वादयश्च द्रवान्ताः । (च.सू. 26.10)

सेन्द्रियं चेतनं द्रव्यं, निरिन्द्रियमचेतनम्। (च.सू. 1.48)

भौतिक ब्रह्माण्ड पाँच तत्त्वों या पञ्चमहाभूतों से मिलकर बना है, जो प्रतीकात्मक रूप से पृथिवी, जल (आप), अग्नि (तेजस), वायु और अन्तरिक्ष द्वारा दर्शाए गए हैं। सरल रूप में भौतिक पदार्थ स्थान ठोस, द्रव, गैस और तापीय अवस्थाओं को निरुपित करते हैं और ध्वनि, गन्ध, स्वाद, रंग, स्पर्श पाँच अनुभूतियों के अनुरूप होते हैं। शरीर में उत्पन्न असन्तुलन को पर्यावरण से उपर्युक्त पदार्थों का उपयोग करके ठीक किया जा सकता है।

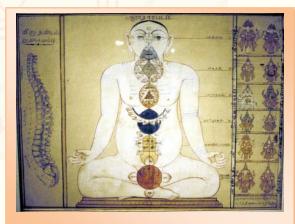
पञ्चमहाभूतों का शरीर में व्यावहारिक स्वरूप वात, पित्त एवं कफ इन तीन दोषों के माध्यम से होता है। इन दोषों की साम्य अवस्था

चित्र 1.1 – आयुर्वेद की परम्परा में सचित्र चिकित्सा टैक्सट

स्वास्थ्य का परिचायक है और उनकी विषम अवस्था रोग का लक्षण है वात, पित्त एवं कफ

शरीर की कियात्मक इकाई है। कफ, पृथिवी और जल के सिद्धान्तों का एक संयोजन है जो उपचय की किया का प्रतिनिधित्व करता है। पित्त जल और अग्नि के सिद्धांतों का एक संयोजन है जो परिवर्तन एवं अपचय का प्रतिनिधित्व करता है।

हम जो भोजन ग्रहण करते हैं वह



चित्र 1.2- चक्र की स्थिति

तीनों दोषों और पाचन अग्नि के प्रभाव से शरीर के सात संरचनात्मक घटक (धातु) में बदल जाता है। शरीर में रस, रक्त, माँस, फैट (मेद्), अस्थि, मज्जा और शुक्र ये सात धातुएँ है। शरीर से अपशिष्ट उत्पाद मल, मूत्र एवं पसीने के रूप में उत्सर्जित होते हैं। जब यह परिवर्तन

पूरा हो जाता है, तो ओज या जीवन शक्ति और शरीर की प्रतिरक्षा क्षमता स्वास्थ्य के उच्च स्तर का निर्माण करती है।

#### 1.8 शरीर के रोगों का उपचार -

शरीर के तीन दोषों वात, पित, कफ की विषम अवस्था एवं शरीर की धातु के असन्तुलन की स्थिति में रोग उत्पन्न होते हैं। पौधे, जीव और खनिज लवणों के उत्पादों के उचित संयोजन से तैयार की गई औषधि द्वारा एवं आहार और व्यवहार के परिवर्तन के द्वारा रोग का उपचार किया जा सकता है। चिकित्सा, आहार और व्यवहार आयुर्वेदिक उपचार के तीन घटक है।

### रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता।

दोषों की विषमता ही रोग है।

#### उपचारात्मक इलाज –

आन्तरिक उपाय जिसमें शोधन (डिटॉक्सिफिकेशन) और शमन दर्द निवारक उपचार के माध्यम से जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए उपयोग किए जाने वाले तरीके सिम्मिलित है। बाहरी उपाय, स्नेहल (तेल से उपचार), स्वोदन (हर्बल भाप का उपयोग करके भाप चिकित्सा) और हर्बल पेस्ट के उपयोग आदि।

सर्जिकल तरीके, इनमें ऊतकों, अङ्गों और किसी भी हानिकारक शारीरिक वृद्धि को हटाना शामिल है।

हर्बल उपाय, जिसमें रसशास्त्र (विभिन्न हर्बल और सूक्ष्म मात्रा में धातु के मिश्रण) का उपयोग सम्मिलित है।

आयुर्वेद में पञ्चकर्म सबसे महत्वपूर्ण उपचार प्रिक्रिया होती है। यह आयुर्वेद की शोधन प्रिक्रिया है, जिसमें शरीर से विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालने और शरीर के त्रिदोषों में सन्तुलन की स्थिति को प्राप्त करने के लिए पाँच क्रियाएँ या विधि अपनाई जाती है। पञ्चकर्म मानसिक कार्यों, पाचन प्रिक्रिया और ऊतक चैनलों की बहाली और उपचार को बढ़ावा देता है।

# 1.9 आयुर्वेद के प्रमुख ग्रंथ -

- 1. चरकसंहिता आयुर्वेद के उपलब्ध ग्रंथों में यह प्राचीनतम है। इसमें पञ्चकर्म का बहुत ही व्यवस्थित वर्णन है। अनेक रोगों की चिकित्सा औषधियों द्वारा विस्तृत वर्णन सहित उपलब्ध है।
- 2. सुश्रुतसंहिता यह शल्यशास्त्र का प्रमुख ग्रंथ है।
- 3. अष्टांग्रहृद्य अष्टांगहृद्य में आयुर्वेद के अन्य विषयों के साथ रसायनों का विशेष रूप से वर्णन मिलता है।
- 4. भावप्रकाश इसमें सभी अंगो की चिकित्सा का वर्णन है। फिरंग रोग तथा शितला रोगों का वर्णन इसमें किया गया है। यह द्रव्यगुण विज्ञान का प्रसिद्ध ग्रंथ है।
- 5. **माधवनिदान** इसमें ज्वर, अतिसार, अर्श, अग्निमंदता, कृमि, कामला, राजयक्ष्मा (टी.बी.), उन्माद, हृदयरोग, अश्मरी, प्रमेह आदि का वर्णन है।
- 6. शार्क्रधरसंहिता रसायन तथा स्वर्ण आदि धातुओं की भस्म बनाने की प्रक्रिया का भी इसमें विवरण है। सर्वप्रथम नाड़ी परीक्षा का विवेचन इसी ग्रंथ में किया गया है।

#### अभ्यास प्रश्न 🖋

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए।

- मानव शरीर प्रकृति के कितने तत्त्वों से मिलकर बना हुआ है -
  - क) 5
- ख) 4
- ग) 3
- घ) 6
- चरक सूत्र के अनुसार जन्म से लेकर चेतना बने रहने तक के काल को कहते हैं 2)
  - क) आयु
- ख) आयुर्वेद
- ग) हित
- घ) अहित
- चरक सूत्र के अनुसार जिन क्रियाओं से शरीर में दोषों की समता उत्पन्न होती है 3) कहलाती है -
  - क) निवारण

- ख) चिकित्सा ग) आयुर्वेद घ) इनमें से कोई नहीं

### प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

- आयुर्वेदिक चिकित्सा निवारण और....दोनों औषधियों से संबंधित है। 1)
- आयुर्वेद की विधि एवं निर्देशों का पालन करने से.....का लाभ होता है। 2)
- अमरकोश के अनुसार जो निरंतर गतिमान रहती है, उसे......कहते हैं।

#### प्र.3 सही जोड़ी मिलान कीजिए।

पञ्चमहाभूत 1)

जीवन शक्ति

दोष 2)

शरीर, मन, स्वयं

ओज 3)

सात आधारभूत घटक

4) धातु पाँच चिकित्सा पद्धति

पञ्चकर्म 5)

- पाँच तत्त्व
- मानव जीवन के त्रिपद
- वात्त, पित्त, कफ

### प्र.4 निम्नलिखित कथनों के सामने सत्य (✔) अथवा असत्य (ع) का चिह्न अंकित कीजिए।

- सुश्रुतसंहिता शल्यचिकित्सा से संबंधित है।
- मानव शरीर प्रकृति के 5 तत्त्वों से मिलकर बना हुआ है।

वात्त, पित्त, कफ (त्रिदोषों) की साम्य अवस्था स्वास्थ्य का परिचायक है।

### प्र.5 अति लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) आयुर्वेद के ग्रंथो में सबसे प्राचीनतम ग्रंथ है?
- 2) शरीर की कार्यात्मक इकाई का क्या नाम है?
- 3) शरीर के 7 संरचनात्मक घटकों के नाम लिखिए।

### प्र.6 लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) आयुर्वेद के प्रमुख ग्रंथों के नाम लिखिए।
- 2) आयुर्वेद की व्यक्तिगत चिकित्सा की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
- 3) पञ्चकर्म पद्धति क्या है ?

### प्र.7 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

- 1) पञ्चमहाभूत सिद्धान्त को समझाइए।
- 2) आयुर्वेद में रोगों का उपचार किस प्रकार होता है? विस्तारपूर्वक समझाइए।

# परियोजना कार्य

- 1) पाँच चिकित्सकीय औषधीय पौधों की सूची बनाइए जिनका उपयोग घरों में रसोई में या औषधीय पौधों के रूप में किया जाता हैं।
- 2) अपनी पाठशाला में औषधीय महत्व के 5 पौधों का रोपण कीजिए।

### अध्याय - 2

# प्राचीन भारत में चिकित्सा परम्परा का ऐतिहासिक विकास

### अध्ययन बिन्दु

- 2.1 आयुर्विज्ञान के प्रमुख अङ्ग
- 2.2 सर्जरी की परम्परा
- 2.3 अनुवांशिक रोगों की चिकित्सा
- 2.4 चेचक रोग का टीका निर्माण
- 2.5 संकामक रोग एवं महामारी
- 2.6 वैदिक वाड्मय में औषधियाँ
- 2.7 अनुसंधान

### 2.1 आयुर्विज्ञान के प्रमुख अङ्ग -

भारत में चिकित्सा परम्परा का इतिहास कई हजार वर्ष पूर्व का है। ऋग्वेद में आयुर्विज्ञान सन्बन्धी प्रसंग वर्णित है। अथवंवेद में रोगों के नाम, लक्षण, औषध-द्रव्यों एवं रोगनिवारण हेतु उपायों के बारे में विस्तार से वर्णन किया है, इसलिए आयुर्वेद को ऋग्वेद का उपवेद कहा जाता है।

आयुर्वेद की महत्ता के कारण ही चरक संहिता (सामान्य चिकित्सा), सुश्रुत संहिता (सर्जरी), कश्यप संहिता (बाल चिकित्सा) को एक हजार से अधिक बार संपादित एवं संशोधित किया गया। आयुर्वेद आठ शाखाओं में विभक्त है – सामान्य चिकित्सा, सर्जरी, नेत्र विज्ञान, दंत चिकित्सा, बाल चिकित्सा, मनोचिकित्सा, विष विज्ञान, काय चिकित्सा, प्रजनन चिकित्सा। आठ भागों को अष्टांग आयुर्वेद के नाम से भी जाना जाता हैं।

### 2.2 सर्जरी की परम्परा -

# यदि कर्तं पतित्वा संशश्रे यदि वाश्मा प्रहृतो जघान।

### ऋभू रथस्येवाङ्गानि सं द्घत्परुषा परुः॥

(अथर्व. 4.12.7)

अथर्ववेद के इस मन्त्र में रारीर से पृथक् हुई अस्थियों को रथ के विभिन्न अङ्गों के सदश जोड़कर रथ की तरह मनुष्य को स्वस्थ बनाये रखने का उल्लेख है।

# शीर्षिक्तं शीर्षामयं कर्णशूलं विलोहितम्। सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे॥

(अथर्व. 9.8.1)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र में सिर के रोगों तथा कान के रोगों को दूर करने का उल्लेख है।

सुश्रुतसंहिता में इस शल्यचिकित्सा का विस्तृत वर्णन किया है। शरीर में प्रविष्ट या अवस्थित दूषित पदार्थों को निकालने के लिए यंत्रों, कियाओं तथा वर्णों के निचय को शल्यतन्त्र कहते हैं।

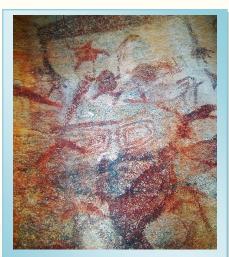
महतस्तस्य तन्त्रस्य दुर्गाधस्याम्बुधेरिव । आदावेवोत्तमाङ्गस्थान् रोगानभिद्धाम्यहम् । सङ्खयया लक्षणैश्चापि साध्यासाध्यक्रमेण च ।

(सुश्रुतसंहिता, सूत्रस्थान 1.9)

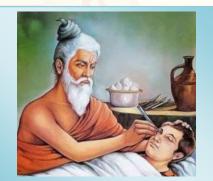
सुश्रुत ने शल्यचिकित्सा को आयुर्वेद का प्रधान भाग कहा है क्योंकि प्रहारजन्य व्रणों (इंजुरी) के विरोपण तथा कटे हुए अङ्गों के पुनः स्थापन का चमत्कार इसमें होता है। शरीर के अवयवों कों चीर-फाड़ करने से त्वरित रोग-निवारण होता है। शस्त्रकर्म (ऑपरेशन) के साथ ही क्षार प्रयोग (क्षार सूत्र) जलों का प्रयोग, अग्निकर्म आदि को शल्य के अन्तर्गत ही माना जाता हैं। सिन्धु घाटी सभ्यता की खुदाई के दौरान मेहरगढ़ शहर से छिद्र किए हुए दाँतो की संरचना प्राप्त हुई जो दंत्तचिकित्सा को बताता है। हड़प्पा और लोथल से कांस्ययुगीन खोपड़ी प्राप्त हुई जो सर्जिकल प्रयोग को बताता है।

ट्रैपेशन (कपाल छेदन), प्रागैतिहासिक समाज में प्रचलित शल्य चिकित्सा का एक सामान्य तरीका था। जो पाषाण युग से चल रहा है। इस पद्धित में वाल्ट के माध्यम से खोपड़ी की ड्रिलिंग होती है इस पद्धित का उपयोग सिर की चोट एवं सिर में रक्त के थक्के को हटाने के लिए इसका उपयोग किया जाता था।

सुश्रुत संहिता में शल्य चिकित्सा के विभिन्न प्रकरणों को बताया गया है। शल्य किया के लिए सुश्रुत 125 तरह के उपकरणों का प्रयोग करते थे। ये उपकरण शल्य किया की जिटलता को देखते हुए खोजे गए थे। इन उपकरणों में विशेष प्रकार के चाकू, सुईयां, चिमिटया आदि हैं। सुश्रुत ने 300 प्रकार की ऑपरेशन प्रक्रियाओं की खोज की। सुश्रुत ने कॉस्मेटिक सर्जरी में विशेष निपुणता हासिल कर ली थी। सुश्रुत नेत्र शल्य चिकित्सा भी करते थे। सुश्रुतसंहिता में मोतियाबिन्द के ऑपरेशन करने की विधि को विस्तार से बताया गया है। उन्हें शल्य किया द्वारा प्रसव कराने का भी ज्ञान था तथा टूटी हुई हिंडुयों का पता लगाने और उनको जोड़ने में विशेषता प्राप्त थी। शल्य किया के दौरान होने वाले दर्द को कम करने के लिए विशेष औषधियों का प्रयोग करते थे इसके अतिरिक्त मधुमेह एवं मोटापे रोग की



चित्र 2.1– भीमबेटिका (म.प्र.) में मेसोलिथिक रॉक पेंटिङ्ग



चित्र 2.2 - आँख पर सर्जरी का चित्रण



भी जानकारी थी। प्रारम्भिक अवस्था में शल्य किया के अभ्यास के लिए फलों, सिंबियों और मोम के पुतलों का उपयोग करते थे। मानव शरीर की आन्तरिक रचना को समझाने के लिए सुश्रुत शव पर शल्य किया करके अपने शिष्यों को समझाते थे।

### शरीर की चिकित्सा (शल्य चिकित्सा) -

### रोहण्यसि रोहण्यस्थ्निदछन्नस्य रोहणी।

### रोहयेदमरुन्धति॥

(अथर्व. 4.12.1)

अथर्ववेद के इस मन्त्र में रोहणी (लाख) वनस्पति के द्वारा लोहे की धार से कटे हुए अङ्ग से बहते हुए रक्त को रोकने का उल्लेख किया गया है। यह वनस्पति घाव भरने का कार्य करती है।

# सं ते मज्जा मज्ज्ञा भवतु समु ते परुषा परुः। सं ते मांसस्य विस्नस्तं समस्थ्यपि रोहतु॥

(अथर्व. 4.12.3)

अथर्ववेद के इस मन्त्र में बताया गया है कि चोट लगने के कारण घायल हुए व्यक्ति की चमडी, मांसपेशियाँ एवं हड्डी उपचार के द्वारा जुड़ने का उल्लेख किया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि हमारे ऋषि शल्य चिकित्सा की किया को जानते थे।

# मजा मज्ज्ञा सं धीयतां चर्मणा चर्म रोहतु। असृक् ते अस्थि रोहतु मांसं मांसेन रोहतु॥

(अथर्व. 4.12.4)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र में चोट लगने के कारण टूटी हुयी चमडी से चमडी, हड्डी से हड्डी, मांस से मांस जुड़ने का उल्लेख किया गया है।

# ऊरुभ्यां ते अष्ठीवद्भ्यां पार्ष्णिभ्यां प्रपदाभ्याम्। यक्ष्मं भसद्यं श्रोणिभ्यां भासदं भंससो वि वृहामि ते॥

(अथर्व. 2.33.5)

अथर्ववेद के इस मन्त्र में शरीर के विभिन्न अंगों जैसे जंघा, घुटने, घुटने से नीचे वाले भाग पैरो के पंजे, कमर, नितम्भ, गुर्दे आदि से यक्ष्मा (बुखार) रोग को बाहर निकालने या यक्ष्मा रोग से शरीर के इन अंगों की सुरक्षा करने का उल्लेख है।

> अस्थिभ्यस्ते मज्जभ्यः स्नावभ्यो धमनिभ्यः। यक्ष्मं पाणिभ्यामङ्गुलिभ्यो नखेभ्यो वि वृहामि ते॥

> > (अथर्व. 2.33.6)

अथर्ववेद के इस मन्त्र में शरीर के विभिन्न अंगों जैसे हड्डी, मांस, शिराएँ, धमनी, हाथ, हाथ की उंगली, नाखून आदि से यक्ष्मा (बुखार) रोग को बाहर निकालने या यक्ष्मा रोग से शरीर के इन अंगों की सुरक्षा करने का उल्लेख है।

# 2.3 आनुवांशिक रोगों की चिकित्सा -

# अपामार्गोंऽप मार्ष्ट्र क्षेत्रियं रापथरच यः। (39264.18.7)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र मे अपामार्ग औषधि के द्वारा अनुवांशिक रोग जैसे :- कुष्ठ, अपस्मार आदि को दूर करने का उल्लेख है। इस मन्त्र से स्पष्ठ होता है कि प्राचीनकाल से हमें अनुवांशिक रोगों की चिकित्सा प्रणाली का ज्ञान है।

चरक संहिता में आनुवांशिक रोगों का विवरण मिलता है। ऋषि चरक के अनुसार प्रजनन तत्त्व का निर्माण बीजों से मिलकर हुआ है जो भागों और उपभागों में विभाजित हो जाता है।

प्रत्येक भाग या एक बीज का उपभाग शरीर के एक विशेष अङ्ग का प्रतिनिधित्व करता है। माता-पिता में होने वाले आनुवांशिक रोगों का स्थानान्तरण बीजों के द्वारा अगली पीढी में होता है। चरक संहिता से आनुवांशिक रोगों की चिकित्सा के विषय में वर्णन प्राप्त होता है।

### 2.4 चेचक के लिए टीका निर्माण -

चेचक के टीके निर्माण के समय एडवर्ड जेनर द्वारा भारतीय टीकाकरण पद्धित का भी अभ्यास किया गया इसे लन्दन कॉलेज के फिजिशन होल्वेल द्वारा प्रमाणित किया गया। चेचक के टीके का निर्माण एडवर्ड जेनर ने किया। सूक्ष्मजीव एवं परजीवी सिद्धान्त – चरक संहिता में जीवाणुओं को दो भागों में विभाजित किया हैं।

- 1) रोगजनक जीवाणु
- 2) गैर रोगजनक जीवाण

रोगजनक जीवाणुओं में रोगाणु आते हैं जिन्हे हम नग्न आँखों के द्वारा नहीं देख सकते हैं। रोगाणुओं को देखने के लिए सूक्ष्मदर्शी यन्त्र का उपयोग किया जाता है। रोगाणु के आकार एवं आकृत्ति का वर्णन भी किया गया है।

### 2.5 सन्कामक रोग एवं महामारी -

सुश्रुत संहिता में सन्क्रामक रोगों का वर्णन मिलता है। इस प्रकार के रोगों का सञ्चरण एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के सम्पर्क में आने से, वायु के द्वारा, कपड़ों के आदान प्रदान से एवं यौन सम्बन्धों के द्वारा होता है। चरक संहिता में महामारी एवं सन्चरणीय रोगों से बचने के उपायों के बारे में बताया गया है।

### 2.6 वैदिक वाड्यय में औषधियाँ -

अग्रमेष्योषधीनां ज्योतिषेवाभिदीपयन्। (अथर्व 4.19.3)

अपामार्ग तेजोमय है और औषधियों में मुख्य है।

अजश्रज्ञाऽराटकी तीक्ष्णश्रङ्गी व्यृषतु।

(अथर्व 4.37.3)

अथो अमीवचातनः पूतुदूर्नाम भेषजम्।

(अथर्व 8.2.28)

जिस प्रकार प्रकाश स्त्रोतों में सूर्य प्रकाश का मुख्य स्त्रोत है उसी प्रकार औषधियों में रोगों से शरीर की रक्षा के लिए अजशृंगी, अशटकी तथा तीक्ष्ण शृंगी औषधि के प्रयोग करने का उल्लेख है।

इस अथर्ववेदीय मन्त्र मे पूतुद्र औषिध को रोगनाशक बताया गया है।

नडमा रोह न ते अत्र लोक इदं सीसं भागधेयं त एहि। यो गोषु यक्ष्मः पुरुषेषु यक्ष्मस्तेन त्वं साकम धराङ् परेहि।

(अथर्व 12.02.01)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र मे टी.बी. (यक्ष्मा) रोग निवारण के लिए सीस अस्म का प्रयोग करने का उल्लेख है नड़ (पौधो) की आग के द्वारा उपचार किएँ जाने का उल्लेख हैं।

अथो बलासनाशनीः कृत्यादूषणीश्च यास्ता इहा यन्त्वोषधीः।

(अथर्व 8.7.10)

कुछ औषधियाँ कफनाशक और कुछ कृत्य नाशक हैं।

# उतासि परिपाणं यातुजग्भनमाञ्जन । उतामृतस्य त्वं वेत्थाथो असि जीवभोजनमथो हरितभेषजम् ॥

(अथर्व 4.9.3)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र में अंजन औषधि के द्वारा पांडु रोग से उत्पन्न कालेपन को दूर करने का उल्लेख है।

अपामार्ग त्वया वयं सर्वं तद्प मृज्महे। (अथर्व 4.17.7)

इस मन्त्र से स्पष्ट होता है कि अपामार्ग भूख-प्यास के रोगों को दूर करता है।

वेदाहं तस्य भेषजं चीपुदूरभिचक्षणम्। (अथर्व 6.127.2)

कफ रोग की दवा चीपुद्र (चीड़) है। इसका वर्णन अथर्ववेद के इस मन्त्र मे बताया गया है।

### 2.7 अनुसन्धान -

भारत में आयुर्वेद का अनुसन्धान आयुष मन्त्रालय द्वारा किया जाता हैं। जो अनुसन्धान संस्थानों के लिए राष्ट्रीय नेटवर्क है। यह आयुर्वेद, योग और प्राकृतिक चिकित्सा, विभाग, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी के लिए संक्षिप्त नाम है।

# किलासं च पिलतं च निरितो नाशया पृषत्। आ त्वा स्वो विशतां वर्णः परा शुक्कानि पातय॥

(अथर्व. 1.23.2)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र में कुष्ठ रोग एवं समय पूर्व श्वेत हुए बालों की औषधि के द्वारा चिकित्सा करने के बारे में बताया गया है।

### अप्स्वऽन्तरमृतमप्सु भेषजम्।

(अथर्व 1.4.4)

जल में सभी औषधि स्थित है।

#### अभ्यास प्रश्न 🖊

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए।

- अ) चेचक के टीके का निर्माण ने किसने किया था -
  - क) राबर्ट ब्राउन
- ख) एडवर्ड जेनर
- ग) ल्यूवेनहॉक
- घ) इनमें से कोई नहीं
- ब) आयुर्वेद को किस वेद का उपवेद कहा जाता हैं -
  - क) ऋग्वेद
- ख) अथर्ववेद
- ग) सामवेद
- घ) यजुर्वेद
- स) भीमबेटिका किस राज्य में स्थित हैं -
  - क) उत्तरप्रदेश
- ख) राजस्थान
- ग) मध्यप्रदेश
- घ) पंजाब

### प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

- 1) अथर्ववेद में टी.बी. रोग निवारण के लिए......धातु का प्रयोग करने का उल्लेख है।
- 2) चरक संहिता में जीवाणुओं को......भागों में विभाजित किया गया है।
- 3) एक पीढी से दूसरी पीढी में स्थानांतरित होने वाले रोग......कहलाते हैं।

### प्र.3 निम्नलिखित कथनों के सामने सत्य (√) अथवा असत्य (×) का चिह्न अंकित कीजिए।

- 1) रोगजनक जीवाणुओं को नग्न आँखो के द्वारा देखा जा सकता है।
- 2) संक्रामक रोग परस्पर सम्पर्क में आने से फैलते हैं।
- 3) कुछ औषधियाँ कफनाशक होती है।

### प्र.4 सही जोड़ी मिलान कीजिए।

- 1) चरक संहिता सर्जरी चिकित्सा
- 2) सुश्रुत संहिता बाल चिकित्सा

3) कश्यप संहिता - सामान्य चिकित्सा

# प्र.5 अति लघूत्तरीय प्रश्न

1) एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्थानांतरित होने वाले रोग क्या कहलाते हैं ?

# प्र.6 लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) अष्टांग आयुर्वेद क्या है ?
- 2) आयुर्वेद के तीन मूलग्रंथो के नाम लिखिए।

# प्र.7 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1) प्राचीन भारतीय सर्जरी प्रणाली को समझाइए।



# अध्याय - 3

# भौतिकी के प्राचीन भारतीय स्रोत

### अध्ययन बिन्दु

- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 वैदिक वाड्मय में भौतिकी के तत्त्व
- 3.3 द्रव्य और ऊर्जा का रूपांतरण
- 3.4 गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त
- 3.5 ऊर्जा
- 3.6 गति एवं उसके प्रकार
- 3.7 प्रकाश की विभिन्न घटनाएँ
- 3.8 प्रकाशवर्णकम मापक यंत्र (स्पेक्ट्रोमीटर)
- 3.9 यांत्रिकी विज्ञान

#### 3.1 प्रस्तावना -

वैदिक वाङ्मय एवं संस्कृत वाङ्मय के संस्कृत ग्रन्थों में उपलब्ध ज्ञान-विज्ञान सर्वांगीण दृष्टि पर आधारित है जबिक आधुनिक विज्ञान की दृष्टि, विशेषतामूलक है। यही कारण है कि वैदिक वाङ्मय एवं संस्कृत वाङ्मय में वैज्ञानिक तथ्य भिन्न-भिन्न स्रोतों में उपलब्ध होते हैं।

# 3.2 वैदिक वाड्यय में भौतिकी के तत्त्व -

1. वेद –

को अद्धा वेद क इह प्र वोचत् कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः।

- ऋग्वेद 10.129.6

ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में संसार की उत्पत्ति के विषय में बताया गया है। इसमें ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का दार्शनिक वर्णन अत्यन्त उत्कृष्ट रूप से किया गया है।

2. उपनिषद् – वैदिक विज्ञान के विकास में उपनिषद् का महत्वपूर्ण योगदान है। आकाश, वायु, जल, अग्नि, प्राण एवं मन आदि के विषय में अनेक संकेत प्राप्त हुए है।

### 3.3 द्रव्य और ऊर्जा का रूपान्तरण –

## अदितेर्दक्षो अजायत दक्षाद्वदितिः परि । (ऋग 10.72.4)

ऋग्वेद के इस मन्त्र में वर्णन है कि अदिति (प्रकृति, द्रव्य) से दक्ष (ऊर्जा) उत्पन्न होती है तथा दक्ष (ऊर्जा) से अदिति (द्रव्य) इसका अभिप्राय यह है कि द्रव्य और ऊर्जा परस्पर रूपान्तरित हो सकते हैं अर्थात् द्रव्य से ऊर्जा और ऊर्जा से द्रव्य।

इसी सिद्धान्त को आधुनिक भौतिकी में प्रो. आइंस्टाइन ने प्रतिपादित किया है कि द्रव्य एवं ऊर्जा न नष्ट किया जा सकती है और न ही उत्पन्न की जा सकती है।

## 3.4 गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त –

बृहत् जाबाल उपनिषद् में गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त को आधारशक्ति नाम से जाना जाता है। इसके 2 भाग है।

(1) ऊर्ध्वशक्ति या ऊर्ध्वगः ऊपर की ओर खीचकर जाना जैसे – जल का नीचे की ओर जाना या पत्थर आदि का नीचे आना।

### अग्नीषोमात्मकं जगत्

(बृ.जा.उप.24)

## आधारशक्त्यावधृतः कालाग्निश्यमूर्ध्वगः। तथैव निम्नगः सोमः।

(बृ.जा.उप.28)

महर्षि पतञ्जिल (150 ई. पूर्व) ने व्याकरण महाभाष्य में इस गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का उल्लेख करते हूए पृथिवी के आकर्षण शक्ति का वर्णन किया है कि यदि मिट्टी का ढेला ऊपर की ओर फेंका जाता है तो वह अधिकतम वेग को पूरा करने पर न टेढ़ा जाता है और न ऊपर चढता है वह पुनः पृथिवी पर आ जाता है।

> लोष्ठः क्षिप्तो बाहुवेगं गत्वा नैव तिर्यग्च्छति, नोर्ध्वमारोहति। पृथिवीविकारः पृथिवीमेव गच्छति, आन्तर्यतः।

> > (महाभाष्य स्थानेऽन्तरतमः 1.1.49 सूत्र)

आकृष्टिशक्ति – भास्कराचार्य द्वितीय (1114) ई. ने अपने ग्रन्थ सिद्धान्त शिरोमणि में गुरुत्वाकर्षण के लिए आकृष्टिशक्ति शब्द का प्रयोग किया हैं। भास्कराचार्य का कथन है कि पृथिवी में आकर्षण शक्ति है, अतः वह ऊपर के ओर की भारी वस्तु को अपनी ओर खीचती हैं। वह वस्तु पृथिवी पर गिरती है।

# आकृष्टशक्तिश्च मही तथा यत् सस्थं गुरुं स्वाभिमुख स्वशक्त्या। आकृष्यते तत् पततीव भाति समे समन्तात् क्व पतित्वयं इवे॥

सिद्धान्त भुवन 16

आर्कषण के इसी सिद्धान्त को भौतिकी में न्यूटन द्वारा प्रतिपादित किया गया।

सूर्य में आर्कषण शिक्त – ऋग्वेद और यजुर्वेद में उल्लेख है कि सूर्य ने अपने किरणरुपी यन्त्रों से
पृथिवी को रोका हुआ हैं।

# सविता यन्त्रेः पृथिवीमरम्णाद्स्कम्भने सविता द्यामदृंहत। अश्वमिवाधुक्षद्धुनिमन्तरिक्षमतूर्ते बद्धं सविता समुद्रम्॥

(ऋग. 10.149.1)

दाधर्त्थ पृथिवीम् अभितो मयूखैः।

(यजु. 5.16)

### 3.5 ऊर्जा संरक्षण का नियम –

ऊर्जा को न तो उत्पन्न किया जा सकता है और न ही नष्ट किया जा सकता है इसे एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। यह सिद्धान्त आइन्स्टाइन ने प्रतिपादित किया।

यजुर्वेद में इसका उल्लेख है -

अग्निरमृतो अभवद् वयोभिः।

(यजु 12.25)

मर्त्येषु अग्निरमृतो नि धायि।

(यजु. 12.24)

यजुर्वेद के इस मन्त्र का कथन है कि अग्नि (ऊर्जा) अमर और अक्षय है। इसमें आयु है, अतः यह अमर है। ऊर्जा का क्षय नहीं होता है बल्कि रुपान्तरण होता है।

## वेद वाड्यय मे अविनाशी ऊर्जा -

### यो देवानां नामधा एक एव तं संप्रश्नं भुवना यन्त्यन्या ।

(ऋग. 10.82.3)

इस ऋगवेदीय मन्त्र में बताया गया है कि अग्नि ऊर्जा एक ही है। इसमें सभी कार्यों को करने की क्षमता होती है।

## स्तीर्णा अस्य संहतो विश्वरूपा घृतस्य योनौ स्रवथे मधूनाम् ।

(ऋग. 3.1.7)

ऋग्वेद के इस मन्त्र में अग्नि (ऊर्जा) को अनेक रुपों को धारण करने वाली बताया गया है अर्थात ऊर्जा को विभिन्न रुपों मे अभिव्यक्त किया जा सकता है।

## दुहाना धेनुर्वृजनेषु कारवेत्मना शतिनं पुरुरूपिमषणि ।

(ऋग. 2.2.9)

ऋग्वेद के इस मन्त्र मे ऊर्जा को शतिनं (100 अश्वशक्ति) कहा गया है।

## अग्निः प्रातःसवने पात्वस्मान् वैश्वानरो विश्वकृदु विश्वशंभूः ।

(अथर्व. 6.47.1)

अथर्ववेद के इस मन्त्र मे विश्ववापी ऊर्जा को वैश्ववानर अग्नि (ऊर्जा) कहा गया है। ऊर्जा को सृष्टि की प्रत्येक वस्तु का उत्पादक कहा गया है।

### यो हत्वाहिमारिणात् सप्त सिन्धून् यो गा उदाजदपधा वलस्य ।

(ऋग. 2.12.3)



ऋग्वेद के इस मन्त्र मे उल्लेख है कि दो पत्थरों की रगड़ से अग्नि (ऊर्जा) उत्पन्न की जा सकती है।

## अग्नि (ऊर्जा) द्वारा परमाणुओं में गति –

## अग्निर्मूर्घा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् । अपां रेतांसि जिन्वति ॥

(ऋग. 8.44.16, यजु. 3.12)

इस मन्त्र मे बताया गया है कि अग्नि (ऊर्जा) परमाणुओं को गति प्रदान करने का कार्य करती है, ऊर्जा के द्वारा ही परमाणु गतिशील होता है। ऊर्जा के द्वारा ही परमाणुओं में विस्तार होता है। अणु के लिए 'रेतस' शब्द का प्रयोग किया गया है।

### विद्युत चुम्बकीय तरंगे -

विद्युत चुम्बकीय तरंगों के सन्चरण के लिए माध्यम की आवश्यकता नहीं होती है तथा ये तरंगे निर्वात में भी सन्चारित हो सकती है। ये तरंगे चुम्बकीय एवं विद्युत क्षेत्रों के दोलन से विद्युत चुम्बकीय तरंगे उत्पन्न होती है।

प्रकाश तरंगे, ऊष्मीय विकिरण, X-किरणे, रेडियो तरंगे, विद्युत चुम्बकीय तरंगों का उदाहरण है।

ऋग्वेद के **एवयामरुदात्रेयः** सूक्त (5.87) के नौ मन्त्रों मे विद्युत चुम्बकीय तरंगों का उल्लेख किया गया है।

- विद्युत चुम्बकीय तरंगों को अत्यधिक ऊर्जा वाली एवं तीव्र गति से चलने वाली तरंगों के
   रूप में बताया गया है ।
- 2. ये तरंगें स्वयं की शक्ति से उत्पन्न होने वाली तरंगें है।
- इन तरंगों में अत्यधिक ज्योति है एवं यह तरंगें अग्नि की लपट की तरह चलती है।
- $4.\quad$  ये किरणे अत्यधिक वेग से सन्चरण करती है ।
- 5. ये तरंगें विशाल क्षेत्र (स्पेक्ट्रम) का निर्माण करती है।

#### 2) ऊर्जा के विभिन्न रूप –

ऋग्वेद में अग्नि (ऊर्जा) के अनेक रूपों का उल्लेख है। यजुर्वेद में समुद्री अग्नि जलीय ऊर्जा, सौर ऊर्जा, आकाशीय ऊर्जा, भूगभीय ऊर्जा, वृक्षादि से उत्पन्न ऊर्जा का उल्लेख मिलता है।

> दिवस्परि प्रथमं जज्ञे अग्निरस्मद् द्वितीयं परि जातवेदाः तृतीयमप्सु नृमणा ऽ अजस्त्रमिन्धान ऽ एनं जरते स्वाधीः

> > (यजु. 12.18)

समुद्रे त्वा नृमणा ऽ अप्स्वन्तर्नृचक्षा ऽ ईधे दिवो अग्न ऽ ऊधन् तृतीये त्वा रजिस तिस्थवा छं समपामुपस्थे महिषा अवर्धन् ।

(यजु. 12.20)

अकन्दद्गिः स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद्वीरुधः समञ्जन् सद्यो जज्ञानो वि हीमिद्धो अख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः

(यजु. 12.21)

जल मंथन से अग्नि (ऊर्जा) – वेदिक वाङ्मय में उल्लेख है कि अथर्वा ऋषि द्वारा तालाब के जल के मंथन से जलीय विद्युत के बारे में बताया गया।

## त्वामग्ने पुष्कराद्ध्यथर्वा निरमन्थत।

(ऋग. 6.16.13 यजु. 11.32 तैति. 3.5.11.3)

नदी, तालाब पर बाँध बनाकर जलीय विद्युत संयंत्र द्वारा जलीय ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में रूपांतरित किया।

सौर ऊर्जा – ऋग्वेद और यजुर्वेद में सौर ऊर्जा के आविष्कार और सफल प्रयोग का श्रेय त्रित (इन्द्र, गंधर्व और वसु) को जाता है।

# यमेन दत्तं त्रित एनमायुनगिन्द्र ऽ एणं प्रथमो अध्यतिष्ठत् । गन्धर्वौ अस्य रशनामगृभ्णात् सूरादश्वं वसवो निरतष्ट ॥

(यजु. 29.13)

सूर्य से प्राप्त ऊर्जा सौर ऊर्जा कहलाती हैं।

सूर्य ऊर्जा का स्रोत - अथवंवेद का कथन है कि सूर्य समस्त ऊर्जा का स्रोत है।

सविता प्रसवानाम अधिपतिः।

(अथर्व 5.24.1)

### 3.6 गति एवं उसके प्रकार -

"गमन कर्म को गति कहते हैं"

कालिदास द्वारा रचित रघुवंश में कहा गया है मिण को पिरोने में खीचे गए धागे के समान मेरी गित हो गई हैं। यह स्थानांतरण गित का उदाहरण हैं। किसी पिण्ड के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने की किया को स्थानांतरीय गित कहते हैं।

जयदेव के गीतगोविंद (1600 ई.) में गोल-गोल घूमते हुए भगवान श्रीकृष्ण तथा हरिवंश पुराण में स्तुति करते हुए देवताओं के परिक्रमा करने का वृतांत घूर्णन गित का उदाहरण है। यहाँ जिसकी परिक्रमा की जा रही है वह स्थिर है तथा जो परिक्रमा कर रहे है, वे उससे निश्चित दूरी पर घूर्णन कर रहें हैं।

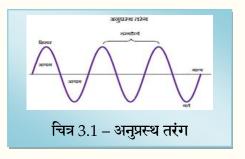
संस्कृत वाङ्मय में स्थान-स्थान पर कालचक्र के घूमने का वर्णन है, जो कि हमारे विद्युत पंखों की घूर्णन गति से सादृश्य रखता हैं।

दोलन गित का उल्लेख स्कंदपुराण (200 ई.पू.) में फाल्गुन मास में होने वाले भगवान कृष्ण के झूला उत्सव में किया गया है झूले की गित दोलनी गित का उदाहरण है। ध्विन के प्रसारण के संदर्भ में न्यायदर्शन (500-600 ई.पू.) में तरंग गित के दो उदाहरण मिलते हैं।

## वीचितरङ्गन्यायेन तदुत्पत्तिः प्रकीर्तिता।

अर्थात तालाब में उठने वाली तरंगो की भाँति ध्वनि का प्रसारण होता है।

आधुनिक भौतिकी में ऐसी तरंगों को अनुप्रस्थ तरंगे कहते हैं, क्योंकि इसमें माध्यम के कण तरंग की गति के लम्बवत् दोलन करते हैं।



## कदम्बकुसुमग्रन्थिकसरप्रसरैरिव

कदम्ब के पुष्प में जिस प्रकार केसर का प्रसार होता हैं, यहाँ तरंग माध्यम के दोलन की दिशा में ही चल रही है, अतः इसमें कमशः संपीड़न और विरलन होता है। ऐसी तरंगे अनुदेर्ध्य तरंगे कहलाती हैं

सायणचार्य ने सूर्यसूक्त की व्याख्या में उस काल में मात्रकों के अनुसार प्रकाश की गति 2202 योजन प्रतिअर्द्धनिमेष बताई है, जो लगभग 186300 मील प्रति सेकेण्ड या 3 108 किमी/से. के समान हैं। गतियों के विवेचन में वैशेषिक दर्शन के स्थिति स्थापक सिद्धान्त में महिष् कणाद एक उदाहरण देते है जिसमें बताया गया है कि वृक्ष की टहनी को हम जितना खींचते हैं, उतना ही वह वापस जाती हैं।

### इस उदाहरण में हम देखते हैं कि

- (1) किया की समान प्रतिक्रिया हो रही है, यहाँ हम न्यूटन द्वारा प्रतिपादित गति के तृतीय नियम की झलक पाते हैं।
- (2) टहनी अपनी पूर्व स्थिति में रहने का प्रयास कर रही हैं, यहाँ हम न्यूटन के जड़त्व के नियम का उदाहरण पाते हैं।
- (3) किसी वस्तु के अपनी पूर्व स्थिति में वापस जाने के प्रयास के गुण को आधुनिक विज्ञान में प्रत्यास्थता कहते हैं। इस प्रकार उपर्युक्त स्थितिस्थापक सिद्धान्त हुक के प्रत्यास्थता नियम का भी आधार हैं।

## पृथिवी की गतिशीलता -

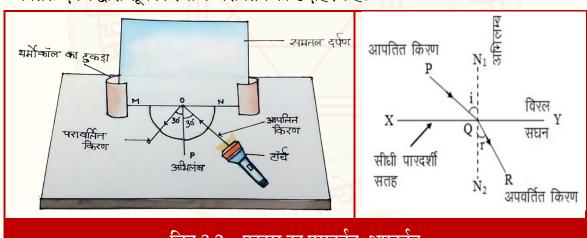
अनुलोमगतिर्नौस्थः पश्यत्यचलं विलोमगं यद्वत् । अचलानि भानि तद्वत् समपश्चिमगानि लङ्कायाम् ॥ (आर्यभट्टीय गोलपाद – 9)

आर्यभट्ट ने पृथिवी को गतिशील रूप में बताया है। जिस प्रकार नाव में यात्रा करने वाला यात्री किनारे पर स्थिर रहने वाले पेड़, पौधों, चट्टानों आदि को विपरीत दिशा में गति करते हुए दिखाई देते हैं। उसी प्रकार अचल नक्षत्र लंका में पूर्व से पश्चिम की ओर गति करते हूए दिखाई देते हैं।

### 3.7 प्रकाश की विभिन्न घटनाएँ -

#### प्रकाश की परावर्तन घटना का विवरण -1)

सिद्धान्त तत्त्व विवेक कमलाकर भट्ट (1600 ई.) पूर्व रचित ग्रंथ में दिया गया हैं। सूर्य सिद्धान्त में भी ग्रहयुति अध्याय में दुर्पणों को विभिन्न कोणों पर एवं समानान्तर जोड़कर ग्रहों को देखने की पद्धति है। यास्क के निरूक्त (700 ई.पू.) में सातवें अध्याय में वैश्वानर के स्वरूप के प्रसंग में सूर्य रिमयों को कांस अथवा मणि के द्वारा केन्द्रित करके गोमय (गोबर) के जलाने का उदाहरण हैं। जो आधुनिक विज्ञान में उत्तल लैंस द्वारा सूर्य किरणों के अपवर्तन अथवा अवतल दुर्पण द्वारा सूर्य किरणों के परावर्तन का उदाहरण हैं।



चित्र 3.2 – प्रकाश का परावर्तन, अपवर्तन

### आधुनिक भौतिकी में प्रकाश का परावर्तन —

जब कोई प्रकाश किरण किसी परावर्तक पृष्ठ से टकराकर वापस उसी माध्यम में लौट जाये तो इस घटना को प्रकाश का परावर्तन कहते हैं।

आधुनिक भौतिकी में प्रकाश का अपवर्तन — जब कोई प्रकाश किरण एक माध्यम से दूसरे माध्यम में प्रवेश करती है तो वह अपने मार्ग से विचित्तित हो जाती है इस घटना को प्रकाश का अपवर्तन कहते हैं।

### 2) प्रतिबिंब का निर्माण -

परवर्ती संस्कृत वाड्यय में पञ्चतंत्र (300 ई.पू.) की कथा **बुद्धियस्य बलं तस्य** में खरगोश जब सिंह को कुएँ के पास ले जाता है, तो सिंह जल में अपना प्रतिबिंब देखकर गर्जना करता है, यहाँ उल्लेख है कि अपनी गर्जना की प्रतिध्विन दुगुनी सुनाई देती हैं। इस प्रकार प्रतिबिंब और प्रतिध्विन का ज्ञान भी हमारे भारतीय ऋषियों को था।

### 3) इन्द्रधनुष का निर्माण –

आचार्य वाराहिमिहिर ने बृहत्संहिता में इन्द्रधनुष के निर्माण की प्रिक्रिया दी है किस प्रकार सूर्य की सात रंगों की किरणे इन्द्रधनुष बनाती है। वाराहिमिहिर का कथन है कि सूर्य की विविध रङ्गों वाली किरणे जब मेघयुक्त आकाश में वायु से टकराकर छिटकती है, तब धनुष का रूप धारण करतीं है। इसे इन्द्रधनुष कहते हैं।

सूर्यस्य विविधवर्णाः पवनेन विघट्टिता कराः साभ्रे। वियति धनुः संस्थाना ये दृश्यन्ते तदिन्द्रधनुः॥

(बृहत्संहिता 35.1)

मूल भौतिक राशियाँ तथा उनका मापन – गति, बल, कार्य, ऊर्जा इत्यादि की गणना के लिए यह आवश्यक है कि हमें लंबाई, द्रव्यमान और काल (समय) का ज्ञान हो। भारतीय वैज्ञानिकों को न केवल इन मूल भौतिक राशियों का ज्ञान था, अपितु वे इनका परिमाण ज्ञात करने विधि भी जानते थे। पुरातत्त्ववेताओं ने सिंधु घाटी सभ्यता में द्रव्यमान के परिगणन के साक्ष्य प्राप्त किए हैं। उस काल में धातु निर्मित तुलाएँ होती थी, जिनके ताम्र के पलड़े होते थे। उत्खनन में कुछ बाट पाए गए, जिनका मानक द्रव्यमान लगभग 13.64 ग्राम था तथा अन्य बाट 2,4,6,8,16,32,64 के गुणजों के रूप में उपलब्ध थे।

सोलह की संख्या का हड़प्पा की संस्कृति का विशेष महत्व रहा हैं। इसका उल्लेख प्रश्नोपनिषद् (2000-800 ई.पू.) एवं जातक ग्रंथों (300-400 ई.) में भी मिलता हैं। सर्वविदित है कि कुछ वर्ष पूर्व तक भारत में 1 सेर में 16 छटाँक और 1 रूपये में 16 आने होते थे।

श्री एस.एन. सेन ने अपने ग्रंथ विज्ञानेर इतिहास खंड 1 और 2 में लिखते हैं कि सिंधु घाटी सभ्यता के समय एक पैमाना पाया गया, जिसके दाशिमक प्रणाली पर आधारित पाँच भाग थे। बड़ी लंबाईयों को (2 मील) तथा योजन (4 को या 13 कि.मी.) में मापा जाता था। काल (समय) की गणना आकाश में सूर्य की गित से की जाती हैं। पृथिवी के सापेक्ष सूर्य की गित के आधार पर ही समय का मानवीकरण सूर्य द्वारा पड़ने वाली छाया की लंबाई, दिशा आदि के आधार पर किया गया था तथा रात्रि में अथवा आकाश मे मेघाच्छादित होने की अवस्था में जलघटी अथवा नालिका का प्रयोग किया जाता था। एक नालिका समय से तात्पर्य था कि वह समय जो किसी घट में रखे एक आर्धक जल को उसमें बने उस छिद्र से निकलने में लगता हैं। जिसका व्यास 4 माशे द्रव्यमान की 4 अंगुल लंबी स्वर्ण की तार के व्यास के बराबर होता हैं। मध्यकाल भारत में सूर्यघटियों का प्रचलन था जिसका एक नमूना राजा जयसिंह द्वारा जयपुर में निर्मित वेधशाला में देखा जा सकता हैं।

कालमापन के संदर्भ में उदयनाचार्य की किरणावली में काल का विभाजन इस प्रकार किया गया है –

2 क्षण = 1 लव

2 लव =1 नि**मे**ष

18 निमेष = 1 काष्ठा

30 काष्ठा = 1 कला

30 कला = 1 मुहूर्त

30 मुहूर्त = 1 दिन

सिद्धान्तिशरोमणि में कालमापन की विधि

100 त्रुटियाँ = 1 तात्पर्य

**30 तात्पर्य** = 1 निमेष

18 निमेष = 1 काष्ठा

30 काष्ठा = 1 कला

30 **क**ਲਾ = 1 घटिका

2 घटिका = 1 क्षण

30 क्षण = 1 अहोरात्र

## 3.8 प्रकाशवर्णकम मापक यंत्र (स्पेक्ट्रोमीटर)

प्रकाशवर्णक्रम मापक यंत्र की सहायता से सूर्य के प्रकाश में अवस्थित वर्णक्रमों का मापन किया जाता रहा हैं भारद्वाज ऋषि द्वारा प्रणीत 'यत्रसर्वस्य' मे कुल 13 ध्वान्तमापक यंत्र अर्थात् प्रकाशवर्णक्रम मापक यंत्र का उल्लेख किया गया है।

भरद्वाज कृत अंशुबोधिनी में विद्युत चुम्बकीय विकिरणों के विभिन्न क्षेत्रों का उल्लेख किया गया है।

कंचकावरणभेदाद्वैविध्यं तमसः क्रमात्,

तदुक्तं शास्त्रतः पूर्वं तयोरावरणं तमः ।

तस्मात् त्रिधा तमोऽभूत् त्रिगुणकारणतः क्रमात्,

अन्धतमो गूढतमस्तमश्येति यथाक्रमम्॥

-अंशुबोधिनी, पृष्ठ 85, सूत्र 10

बोधानन्द द्वारा उपरोक्त सूत्र की व्याख्या करते हुए बताया कि ध्वान्तद्वय अर्थात् तम आवरण ध्वान्त एवं कंचुकावरण ध्वांत के संयोग से तीन प्रकार के तम – गूढ़तम (पराबैंगनी विकिरण), तम (दृश्य विकिरण) व अंधतम (अवरक्त विकिरण) प्रकट होते हैं। यह तीनों तम विद्युत चुम्बकीय विकिरण के क्षेत्र है।

दृश्य प्रकाश के सात रङ्गों का वर्णन -

आरोगो भ्राजः पटरः पतङ्गः ।

### स्वर्णरो ज्योतिषीमान् विभासः ॥

(तैत्तिरीय आरण्यक 17.20)

यजुर्वेद की तैत्तिरीय संहिता के इस मंत्र में दृश्य प्रकाश स्पेक्ट्रम के सात रंगों का उल्लेख किया है जैसे – आरोग (लाल), भ्राज (नारंगी), स्वर्ण (पीला), पतंग (हरा), पटर (नीला), ज्योतिषीमान् (जामुनी) व विभासः (बैंगनी)।

# अधुक्षत् पिप्युषीमिषमूर्जं सप्तपदीमरिः । सूर्यस्य सप्त रिमभिः ॥

(ऋग. 8.72.16)

इस ऋगवेदीय मंत्र में सूर्य की 7 रिश्म (किरणों) का उल्लेख किया गया है। पराबैंगनी एवं अवरक्त विकिरणों का वर्णन –

## हिरण्यजिह्वस्सुविताय नव्यसे रख्षा माकिर्नो अघशाश्स ईशत ।

तैत्तिरीय संहिता (1.4.24)

## हिरण्यपाणिमूतये सवितारमुप ह्वये ॥

तैत्तिरीय संहिता (1.4.25)

यजुर्वेद की तैत्तिरीय संहिता के इस मंत्र में हिरण्यजिह्न एवं हिरण्यपाणि नामक 2 विकिरणों का उल्लेख किया गया है। आस्ट्रिया के वैज्ञानिक विक्टर हेस ने सन 1912 में इसको पराबैंगनी और अवरक्त नामक दो विकिरणों के रूप में प्रस्तुत किया।

### 3.9 यांत्रिकी विज्ञान -

यांत्रिकी - भौतिकी की वह शाखा जिसमें पिण्डों पर बल लगाने या विस्थापित करने पर उनके व्यवहार का अध्ययन किया जाता है, यांत्रिकी या यंत्र विज्ञान कहा जाता है। वेद वाङ्मय में यांत्रिकी का उल्लेख मिलता है।

## युवोर्हि यन्त्रं हिम्येव वाससोऽभ्यायंसेन्या भवतं मनीिषिभिः ।

(ऋग्वेद 1.34.1)

ऋग्वेद के इस मंत्र में हमें यंत्र शब्द का प्रयोग नियंत्रण करने की शक्ति के रूप में मिलता है। रिस सत्यशुष्मिस सत्येन त्वाऽभि घारयामि तस्य ते

> पश्चानान्त्वा वातानाय्यँन्त्राय धर्त्राय गृह्णामि पश्चानान्त्वर्तृनाय्यँन्त्राय धर्त्राय गृह्णामि पश्चानान्त्वा दिशाय्यँन्त्राय धर्त्राय गृह्णामि ब्रह्मणस्त्वा तेजसे यन्त्राय धर्त्राय गृह्णामि ख्षत्रस्य त्वौजसे यन्त्राय धर्त्राय गृह्णामि ।

> > (तैत्तिरीय संहिता 1.6.1.2)

तैत्तिरीय संहिता के इस मंत्र में विभिन्न प्रकार के यंत्रों का उल्लेख किया गया है, जो इस प्रकार है-

- वातयन्त्र इसका उपयोग वायु को उत्पन्न करने एवं वायुदाब को मापने में किया जाता
   था । वर्तमान समय में वायु दाब को मापने के लिए बैरोमीटर यन्त्र का उपयोग किया
   जाता है ।
- 2. ऋतुयन्त्र इस यन्त्र का उपयोग सर्दी-गर्मी मापने में किया जाता था । वर्तमान समय में तापमान मापने के लिए थर्मामीटर यन्त्र का उपयोग किया जाता है ।
- 3. दिशा यन्त्र यह यन्त्र दिशाओं का ज्ञान कराता था। वर्तमान समय में चुम्बकीय कम्पास (दिक्सूचक यन्त्र) की सहायता से दिशओं का पता लगाया जाता है।
- 4. तेजस यन्त्र प्रकाश उत्पन्न करने के लिए तेजस यन्त्र का उपयोग किया जाता था। वर्तमान समय मे प्रकाश उत्पन्न करने के लिए प्रकाश उर्त्सजक डायोड का उपयोग किया जाता है।
- 5. ओजो यन्त्र ऊर्जा उत्पन्न करने एवं ऊर्जा का मापन करने के लिए ओजो यन्त्र का उपयोग किया जाता था।
  - वर्तमान में ऊर्जा का मापन करने के लिए कैलोरीमापी का उपयोग किया जाता है।

कुछ यांत्रिक युक्तियाँ निम्न है -

1. पनचक्की – पनचक्की एक यांत्रिक युक्ति है, इस युक्ति का सबसे अधिक उपयोग आटा पीसने में किया जाता था। इस युक्ति की सहायता से बहते हूए जल या गिरते हूए जल से ऊर्जा उत्पन्न करके किसी अन्य यन्त्र का संचालन करते थे।

पनचकी के निर्माण की विधि को भाष्कराचार्य ने अपने ग्रंथ 'सिद्धान्तिशरोमणि' के गोलाध्याय मे बताया है जो इस प्रकार है –

> ताम्रादिमयस्यांकुशरुपनलस्याम्बुपूर्णस्य । एक कुण्डजलान्तर्द्वितीयमर्गं त्वधोमुखं च बहिः । युगपन्मुक्तं चेत् कं नलेन कुण्डाब्द्हिः पतित ॥ नेम्यां बद्धा घटिकाश्चकं जलयन्त्रवत् यथा धार्यम् नलचकप्रयन्युतसिललं पतित यथा तद्धटीमध्ये । भ्रमित ततस्तत् सततं पूर्णघटीभिः समाकृष्टम् चक्रच्युतं तदुद्कं कुण्डे याति प्रणालिकया ।

> > -सिद्धान्त शिरोमणि, गोलाध्याय, सत्राध्याय 53-56

ताँबे से निर्मित, अंकुश के समान मुडे एवं जल से भरे तल के एक अन्त को एक जलपात्र में डुवा कर और दूसरे पात्र के अन्त को बाह्यतौर पर अद्योमुख करके यदि दोनों अन्त को एक साथ छोडेंगे तब पात्रस्य जल सम्पूर्ण रूप से नल के द्वारा बाहर जायेगा । चक्र की परिधी में घित्काओं को बाँध कर (जल पात्र) जल यंत्र के समान चक्र के अक्ष के दोनों अन्त को इस प्रकार रखना चाहिए जैसे नल से गिरता हुआ पानी घटिका के भीतर गिरे इस प्रकार वह चक्र पूर्ण घटियों के द्वारा खींचा हुआ निरंतर घूमता है और चक्र द्वारा निकला हुआ जल नाली द्वारा कुण्ड में चला जाता है।

2. **हाइड्रोलिक यंत्र** – यह एक घूर्णन गित करने वाला यंत्र है, यह भाप, गैस, जल से ऊर्जा यहण कर घूर्णन करता है एवं अपने ऊपर लगे यंत्रों को घुमाने का कार्य करता है।

#### अभ्यास प्रश्न 🖋

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए।

- 30 मुहूर्त में कितने दिन होते हैं -

  - क) 1 दिन ख) 2 दिन
- ग) 4 दिन घ) 5 दिन

- 1 अहोरात्र में कितने क्षण में होते हैं 2)
  - क) 20
- ख) 25
- ग) 30
- घ) 20

- 1 निमेष में कितने लव होते हैं 3)

  - क) 4 ख) 3
- ग) 2
- घ) 5

### प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

- उदयनाचार्य की किरणावली में 30 मुहूर्त का ......दिन होते हैं।
- सिद्धान्त शिरोमणि में 2 घटिका में ................. क्षण होते हैं। 2)
- सूर्य समस्त .....का स्रोत है।

### प्र.3 निम्नलिखित कथनों के सामने सत्य (√) अथवा असत्य (×) का चिह्न अंकित कीजिए।

- द्रव्य और ऊर्जा के रूपांतरण का उल्लेख ऋग्वेद के 10 वें मंड़ल में हैं।
- गमन कर्म को गति कहते हैं। 2)
- प्रकाश के परावर्तन की घटना के कारण हमें वस्तुएँ दिखाई देती है।

#### प्र.4 सही जोड़ी मिलान कीजिए।

- नासदीय सूक्त 1) कमलाकर भट्ट
- सिद्धान्तिशरोमणि कालिदास 2)
- आर्कषण शक्ति की व्याख्या रघुवंशम् 3)
- सिद्धान्ततत्त्वविवेक ब्रह्मण्ड की उत्पत्ति सिद्धान्त 4)

## प्र.5 अति लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) जलीय विद्युत संयंत्र द्वारा जलीय ऊर्जा को किस ऊर्जा में रूपांतरित किया जाता है।
- 2) सूर्य से प्राप्त ऊर्जा क्या कहलाती हैं ?

#### प्र.6 लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) दर्पणों को जोड़कर ग्रहों को देखने की पद्धति किस ग्रंथ में बतायी गई हैं?
- 2) सूर्यसूक्त के अनुसार प्रकाश की कितनी गति थी?

## प्र.7 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

- 1) यास्क के निरूक्त में काँस या मिण से सूर्य की किरणों को केन्द्रित करके गोबर जलाने की प्रक्रिया का प्रकाश के अपवर्तन और परावर्तन के आधार पर सचित्र विवेचन कीजिए।
- 2) न्यायदर्शन में ध्वनि प्रसारण के संदर्भ में तरंग गति के दो उदाहरण दीजिए।
- 3) ऊर्जा संरक्षण का नियम क्या है ?

## अध्याय - 4

# भारत में वनस्पति और पशु विज्ञान

### अध्ययन बिन्दु

- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 वनस्पति विज्ञान का उद्भव
- 4.3 वृक्ष वनस्पतियों का महत्त्व
- 4.4 अन्कुरोद्भेद
- 4.5 वृक्षारोपण
- 4.6 पादप रोगोपचार
- 4.7 वैदिक वाड्य में जीवों का वर्गीकरण
- 4.8 जन्तुओं का वैज्ञानिक वर्गीकरण
- 4.9 पशु चिकित्सा

#### 4.1 प्रस्तावना –

वनस्पति जगत के बाह्य स्वरूप और आन्तरिक संरचना का जिस विधा में अध्ययन किया जाता है, उसे वनस्पति विज्ञान कहते हैं। वनस्पति का सामान्य अर्थ वन में उत्पन्न होने वाले वृक्षों, पौधों, पादपों, लताओं आदि से है। महाभारत में पुष्पों से रहित परन्तु फलों से युक्त को वनस्पति माना है।

**अपुष्पा फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृताः** (महाभारत 1.141.16)

भावप्रकाश के अनुसार -

नन्दी वृक्षोऽश्वत्थभेदः प्ररोहो गजपादपः,

स्थालीवृक्षः क्षयतरुः क्षीरी च स्यादु वनस्पतिः।

कुछ विशेष वृक्षों अश्वव्य आदि प्ररोहों, पादपों आदि को वनस्पति कहा गया है।

### 4.2 वनस्पति विज्ञान का उद्भव -

सृष्टि के प्रारम्भ से ही मनुष्य ईंधन के लिए लकड़ी का प्रयोग, रहने के लिए घास का प्रयोग करता था। चिकित्सा के लिए औषधियों का प्रयोग, भोजन के लिए फलों का प्रयोग करता था। ऋग्वेद में सोम को बलवर्धक, ऊर्जा देने वाला तथा स्फूर्तिदायक माना गया है।

## अश्वावतीं सोमावतीमूर्जयन्तीमुदोजसम्।

आवित्सि सर्वा ओषधीरस्मा अरिष्टतातये॥ ऋग्वेद (10.97.07)

वाराहिमहिर की बृहत्संहिता में तथा अग्निपुराण में वृक्षायुर्वेद प्रकरण में वृक्षों का वैज्ञानिक अध्ययन दिया गया है।

यहाँ 'वृक्ष' समस्त वनस्पति जगत का वाचक है।

# किं स्विद्धनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तद्यद्ध्यतिष्ठद्भवनानि धारयन्॥

ऋग्वेद (10.81.4)

ऋग्वेद में 'वन' और 'वृक्ष' वनस्पति के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त हुए है।

### इमां खनाम्योषधिं वीरुधां बलवत्तमाम्।

यया सपत्नीं बाधते यया संविन्दते पतिम्॥ (अथर्व. 3.18.1)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र मे भूमि को खोद कर प्राप्त होने वाली लता रूपी औषधी का उल्लेख है।

कौटिल्य अर्थशास्त्र में गुल्म – वृक्षायुर्वेद का वर्णन है। इन सभी में वनस्पति जीवन का विस्तृत वर्णन है जैसे – अन्कुरण, बीज-निर्धारण, प्ररोहण, वपन, सिंचन, रोगों से रक्षा, उपयुक्त भूमि, उपजाऊपन, मौसम, पत्ते, पुष्प, तना, फूल, फल आदि का अध्ययन।

# ऊष्मतो स्रायते वर्णस्त्वक् फलं पुष्पमेव च। स्रायते शीर्यते चापि स्पर्शस्तेनात्र विद्यते॥

(महाभारत शान्ति पर्व 184.11)

शान्ति पर्व में पौधों (पादपों) में जीवन चेतना के विषय में बताया गया है। वृक्षों में ऊष्णता (गर्मी) या वृक्षों को स्पर्श करने के कारण वृक्षों के पत्ते, छाल, फल, फूल मुरझाकर झड जाते हैं एवं शीत ऋतु में प्रकाश के अभाव में मुरझाकर गिर जाते हैं। अतः स्पष्ट होता है कि पौधे स्पर्श अनुभव करते हैं।

वाखवग्र्यशनिनिर्घोषैः फलं पुष्पं विशीर्यते। श्रोत्रेण गृह्यते शब्दस्तस्माच्छुण्वन्ति पादपाः॥

(महाभारत शान्तिपर्व 184.12)

तेज वायु, अग्नि, बिजली के कम्पन के कारण वृक्षों के फूल, फल झड जाते हैं। अतः स्पष्ट होता है कि वृक्ष ध्विन को सुनते हैं।

> वही वेष्टयते वृक्षं सर्वतश्चैव गच्छति। न हृदृष्टेश्च मार्गोऽस्ति तस्मात् पश्यन्ति पादपाः॥

> > (महाभारत शान्ति पर्व 184.13)

इस श्लोक में बताया गया है कि लता वृक्ष के चारों ओर लिपट कर उसके ऊपरी भाग तक चढ जाती है। अतः स्पष्ट होता है कि वृक्ष देखते भी है।

पुण्यापुण्येस्तथा गन्धेंधूपेश्च विविधेरि।

अरोगाः पुष्पिताः सन्ति तस्माजिघ्रन्ति पाद्पाः॥

(महाभारत शान्ति पर्व 184.14)

महाभारत के इस श्लोक के अनुसार सुगन्धित गन्ध जैसे धूप की गन्ध से पौधे (वृक्ष) रोगरहित होकर पुष्पित एवं फिलत होते हैं तथा दूषित गन्ध के प्रभाव से पौधे रोगित हो जाते हैं। अतः स्पष्ट होता है कि पौधे सूँघते भी है।

> पादैः सिललपानाच व्याधीनां चापि दर्शनात्। व्याधिप्रतिकियत्वाच विद्यते रसनं द्रुमे॥

> > (महाभारत, शान्ति पर्व 184.15)

महाभारत के इस श्लोक से स्पष्ट होता है कि हमारे ऋषियों को ज्ञात था कि पौधे (पादप) जड द्वारा मिट्टी से जल एवं खिनज लवण प्राप्त करते हैं एवं अशुद्ध जल के सेवन से बीमार हो जाते हैं एवं बीमार होने पर जड में औषधि डालकर पौधों की चिकित्सा की जाती है। अतः सिद्ध होता है कि पौधों में रसनेन्द्रिय है।

वक्रेणोत्पलनालेन यथोर्ध्वं जलमाददेत्। तथा पवनसंयुक्तः पादैः पिबति पादपः॥

(महाभारत शान्ति पर्व 184.16)

वृक्ष वायु की सहायता से मिट्टी में उपस्थित खनिज तत्त्वों एवं जल को अपने मूल (जड) द्वारा खींच कर पीते हैं।

तेन तज्जलमादत्तं जरयत्यग्निमारुतौ। आहारपरिणामाच स्नेहो वुद्धिश्च जायते॥

(महाभारत शान्ति पर्व 184.18)

पौधे अपनी जड़ो के द्वारा जो जल मिट्टी से प्राप्त करते हैं, उस जल को पौधों में स्थित वायु एवं अग्नि पचाती है, जिससे पौधों में वृद्धि होती है।

> सुखदुःखयोश्च ग्रहणाच्छिन्नस्य य विरोहणात्। जीवं पश्यामि वृक्षाणामचैतन्यं न विद्यते॥

> > (महाभारत शान्ति पर्व 184.17)

वृक्ष के कट जाने पर उनमें नया अंकुर उत्पन्न हो जाता है और वे सुख दुःख को ग्रहण करते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि वृक्षों में जीवन है।

आपोहि कललं भुत्वा यत्पिण्डस्थानकं भवेत्। तदेवं व्यूहमानत्वात् बीजत्विघगच्छति॥

(वृक्ष आयुर्वेद प्रथम अध्याय)

जल जेली जैसे पदार्थ को ग्रहण कर नाभिक (न्यूक्कियस) का निर्माण करता है एवं पृथिवी से ऊर्जा एवं पोषक तत्त्व ग्रहण करता है इस प्रकार बीज का निर्माण होता है यही बीज वृक्ष के रूप में विकसित होता है।

## या बभ्रवो याश्च शुक्रा रोहिणीरुत पृश्नयः।

आसिकीः कृष्णा ओषधीः सर्वा अच्छावदामसि॥ (अथर्व. 8.7.1)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र में औषधियों को विभिन्न आकार, विभिन्न रंग जैसे सफेद, लाल आदि रंगों की बताया गया है। इन औषधियों के उपयोग से रोग का निवारण होने के बारे में बताया गया है।

> प्रस्तृणती स्तम्बनीरेकशुङ्गाः प्रतन्वतीरोषधीरा वदामि। अंशुमतीः काण्डिनीर्या विशाखा ह्वयामि ते वीरुधो वैश्वदेवीरुग्राः पुरुषजीवनीः॥

> > (अथर्व. 8.7.4)

अथर्ववेद के इस मन्त्र के अनुसार औषिधयाँ (वनस्पति) प्रस्तृणती (फैलती हुई), स्तम्बिनी (तने वाली), एकशुंगा (एक शूक वाली), काण्डिनी (पर्णवाली) और विशाखा (शाखाओं वाली) होती है।

मधुमन्मूलं मधुमद्रयमासां मधुमन्मध्यं वीरुधां भूव।
मधुमत् पर्णं मधुमत् पुष्पमासां मधोः संभक्ता
अमृतस्य भक्षो घृतमन्नं दृहृतां गोपुरोगवम्॥

(अथर्व. 8.7.12)

इस अथर्ववेदीय मन्त्र में वृक्षों के मूल, अग्रभाग, मध्य भाग, पुष्प, पत्ते, फूल, फल के मधुर होने का उल्लेख मिलता है।

# तस्यामृतस्येमं बलं पुरुषं पाययामसि। अथो कृणोमि भेषजं यथासच्छतहायनः॥

(अथर्व. 8.7.22)

अमृत रूपी औषधि (वनस्पति) को रोगग्रस्त व्यक्ति को पिलाने से उसकी चिकित्सा की जा सकती है।

> पुष्पवतीः प्रसूमतीः फिलनीरफला उत। संमातर इव दुह्मास्मा अरिष्टतातये॥

> > (अथर्व 8.7.27)

पुष्पों वाली, अंकुर उत्पन्न करने वाली, फल वाली, बिना फल वाली औषधि (वनस्पति) रोगी मनुष्य के लिए उसी प्रकार कल्याणकारक है जिस प्रकार माता का दूध शिशु के लिए अमृत तुल्य होता है।

बृहदारण्यक उपनिषद में मनुष्य एवं वृक्षों में समानता बतायी गयी है। जिस प्रकार मनुष्य की त्वचा कटने पर रक्त निकलता है उसी प्रकार वृक्षों की त्वचा काटने पर रस निकलता है। पौधों में विकास एवं क्रियाएँ मनुष्य की ही तरह होती है। पौधों में क्रमिक विकास-शैशव, यौवन, सोना, जागना, चोट लगने पर खिन्नता रोग और गर्भाधान के लिए पोषण तत्त्व जरूरी होते हैं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मानव जीवन के समान प्रकृति या वनस्पतियों का भी जीवन होता है।

कौटिल्य अर्थशास्त्र में वनस्पति जगत का अध्ययन कृषितन्त्र के अंतर्गत प्राप्त होता है।

# सीताध्यक्षः कृषितन्त्रगुल्मवृक्षायुर्वेदज्ञस्तज्ज्ञसखो वा सर्वधान्यपुष्फलशाककन्दमूल पालीक्यक्षोमकार्पासाबीजानि यथाकालं गृह्णीयात्।

### 4.3 वृक्ष-वनस्पतियों का महत्त्व -

(1) ऐतरेय और कौषीतिक ब्राह्मण में वनस्पित को प्राण कहा गया है क्योंकि यह प्राणियों को इवसन के लिए ऑक्सीजन देती है।

प्राणो वनस्पतिः।

(कौषी.ब्रा. 12.7)

### प्राणो वै वनस्पतिः।

(ऐत. ब्रा. 2.4)

(2) यजुर्वेद में कहा गया है कि वृक्ष, प्रदूषण को दूर करते हैं, अतः इन्हें शिमता (शमनकर्ता, प्रदूषण निरोधक) कहा गया है।

वनस्पतिः शमिता।

(यजु. 29.24)

(3) रातपथ ब्राह्मण में औषधि का अर्थ स्पष्ट किया है औषधि दोषों को समाप्त करती है।

ओषं धयेति तत ओषधयः समभवन्।

(হাत. 2.2.4.5)

## 4.4 अन्कुरोद्भेद –

बीज में उर्वरा शक्ति पहले से ही विद्यमान रहती है जो कि पर्याप्त जल और ऊष्मा से अंकुर के रूप में दृष्टिगोचर हो जाती है। अन्कुरण के बाद मूल पाद आदि विकास का क्रम होता है। आधुनिक विज्ञान में इसे पौधे, रोप, नवोदिभद कहा जाता है।

### 4.5 वृक्षारोपण -

ऋग्वेद में वृक्ष रोपित करने, उनकी सुरक्षा करने के बारे में बताया गया है। क्योंकि ये जल के स्रोतों की रक्षा करते हैं।

## वनस्पतिं वन आस्थापयध्वं नि षू दिधध्वमनन्त उत्सम्।

(ऋग. 10.101.11)

वराहमिहिरकृत बृहत्संहिता में वृक्षायुर्वेदाध्याय दिया है जिसमें वृक्षारोपण के बारे में उल्लेख है।

वृक्षों के लिए उपयुक्त स्थान एवं भूमि का चयन -

प्रान्तच्छायाविनिर्मुक्ता न मनोज्ञा जलाशयाः ।

यस्मादतो जलप्रान्तेष्वारामान्विनवेशयेत्॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.1)

बृहत्संहिता के इस २लोक में जलाशयों के किनारे वृक्षारोपण करने का उल्लेख किया गया है।

# मृद्वी भूः सर्ववृक्षाणां हिता तस्यां तिलान्वपेत् । पुष्पितांस्तांश्च मृद्वीयात् कर्मैतत्प्रथमं भुवः ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.2)

बृहत्संहिता के इस श्लोक में बताया गया है कि वृक्ष लगाने के लिए कोमल (मुलायम) भूमि का चयन करना चाहिए। ऐसी भूमि में पहले तिल की बुआई कर, जब उसमें फूल आ जाये तब उस भूमि को साथ पुन जुताई कर उसमें गोबर की खाद डालना चाहिए।

2. लगाने योग्य वृक्ष –

अरिष्टाशोकपुन्नागशिरीषाः सप्रियङ्गवः ।

मङ्गल्याः पूर्वमारामे रोपणीया गृहेषु वा ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.3)

बृहत्संहिता के इस क्लोक में बताया गया है कि घर, विटका में नीम, अशोक पुन्नाग, शिरीष, प्रियंगु (ककुनी) आदि वृक्षों को लगाना चाहिए क्योंकि यह सभी वृक्ष विपत्तियों को दूर करने वाले मंगलकारी माने जाते हैं।

3. कलम वाले वृक्ष लगाने की विधि (ग्रापिटंग) -

पनसाशोककदलीजम्बूलकुचदाडिमाः।

द्राक्षापालीवताश्चैव बीजपूरातिमुक्तकाः ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.4)

एते द्रुमाः काण्डरोप्या गोमयेन प्रलेपिताः ।

मूलोच्छेदेऽथवा स्कन्धे रोपणीयाः परं ततः ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.5)

बृहत्संहिता के इस श्लोक में कलम वाले वृक्ष लगाने की विधि (ग्राफ्टिंग) बताई गई है। कटहल, अशोक, केला, जामुन, बडहर, अनार, दाख, पालीवत, बिजौरा नीबूं, अतिमुक्तक इन

वृक्षों की शाखाओं को गोबर से लिपकर कटे हूए विजातीय वृक्ष की मूल या शाखा पर कलम लगा सकते हैं।

### 4. वृक्षारोपण करने की ऋतु –

# अजातशाखान् शिशिरे जातशाखान् हिमागमे । वर्षागमे च सुस्कन्धान् यथादिक्स्थान् प्ररोपयेत् ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद् 55.6)

बृहत्संहिता के इस क्लोक में बताया गया है कि विभिन्न प्रकार के वृक्षों को लगाने की ऋतु के बारे में उल्लेख किया है। अजातशाखा (कलम से भिन्न वाले) वृक्षों को लगाने के लिए शिशिर ऋतु (माय, फाल्गुन मास), कलम वाले वृक्षों को लगाने के लिए हेमन्त ऋतु (मार्गशीर्ष, पौष मास) तथा लम्बी शाखा वाले वृक्षों के लिए वर्षा ऋतु (श्रावण, भाद्रपद मास) को उपयुक्त माना है।

#### 5. वृक्षारोपण करने का नियम –

# घृतौशीरतिलक्षौद्रविडङ्गक्षीरगोमयैः । आमूलस्कन्धलिप्तानां सङ्कामणविरोपणम् ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.7)

बृहत्संहिता के इस २लोक में बताया गया है कि घी, खस, तिल, शहद, वायविडंग, दूध, गोबर इन सभी के मिश्रण को वृक्ष पर मूल से लेकर अग्र तक लेप कर वृक्ष को भूमि में लगाना चाहिए।

#### 6. वृक्षारोपण की विधि -

शुचिर्भूत्वा तरोः पूजां कृत्वा स्नानानुलेपनैः । रोपयेद्रोपितश्चैव पत्रैस्तेरेव जायते ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.8)

बृहत्संहिता के इस २लोक में बताया गया है कि चंदन आदि से वृक्ष की पूजा कर वृक्षारोपण करना चाहिए।

## 7. वृक्षों की सिंचाई –

# सायं प्रातश्च घर्मर्त्तौ शीतकाले दिनान्तरे । वर्षासु च भुवः शोषे सेक्तव्या रोपिता द्रुमाः ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.9)

बृहत्संहिता के इस श्लोक में बताया गया है कि लगाये हुए वृक्षों को ग्रीष्म ऋतु में प्रातः एवं संध्या के समय, शीत ऋतु में एक दिन बाद, वर्षा ऋतु में भूमि सूखने पर सिंचाई करना चाहिए।

### 8. वृक्ष लगाने का कम –

# उत्तमं विंशतिर्हस्ता मध्यमं षोडशान्तरम् । स्थानात् स्थानान्तरं कार्यं वृक्षाणां द्वादशावरम् ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.12)

बृहत्संहिता के इस श्लोक में बताया गया है कि एक वृक्ष से दूसरा वृक्ष 20 हाथ दूरी पर रोपित करना चाहिए।

#### 4.6 पादप रोगोपचार -

वाराहिमहिरकृत बृहत्संहिता और अग्निपुराण में वृक्षों के उपचार का उल्लेख किया गया है। जिस प्रकार मनुष्य का शरीर रोगों से पीड़ित हो जाता है, उसी प्रकार वृक्षो में भी रोग उत्पन्न होते हैं।

वाराहिमिहिर और कश्यप का कथन है कि अधिक शीत, धूप और तीव्र वायु से वृक्षों को रोग हो जाते हैं। पत्ते पीले पड़ जाते हैं, अन्कुर नहीं लगते डालियाँ सूख जाती है और रस टपकने लगता है।

शीतवातातपै रोगो जायते पाण्डुपत्रता। अवृद्धिश्च प्रवालानां शाखाशोषो रसस्रुतिः ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.14)

रोगी वृक्ष की चिकित्सा के लिए उसके रुग्ण अंग को काटकर उस पर वायविङ्ग, घी और पंक (कीचड़) को मिलाकर वृक्ष पर लेप करना चाहिए। फिर दूध – मिश्रित जल से सिंचित करना चाहिए।

# चिकित्सितमथैतेषां शस्त्रैणादौ विशोधनम्। विड-घृत-पङ्काक्तान् सेचयेत् क्षीरवारिणा॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.15)

फल न लगने की चिकित्सा –

फलनाशे कुलत्थेश्च माषेर्मुद्गैस्तिलेयवैः । श्वतशीतपयःसेकः फलपुष्पसमृद्धये ॥

(बृहत्संहिता वृक्षायुर्वेद 55.16)

बृहत्संहिता के इस श्लोक में बताया गया है कि यदि किसी वृक्ष में फल न लगे या फल लगकर नष्ट हो जाये तो इसके उपचार के लिए कुलथी, उड़द, मूँग, तिल, जौ इन सबको दूध में उबाल कर उसे ठंडा कर वृक्ष की जड़ में डालने से वृक्ष का उपचार किया जा सकता है।

### 4.7 वैदिक वाड्यय में जीवों का वर्गीकरण -

पशु-पक्षी दोनों को सम्मिलित करते हुए कई प्रकार के वर्गीकरण किए गये है।

- क) 2 प्रकार के पशु
  - 1) ग्राम्यः गाँव में रहने वाले या पालतू।
  - 2) आरण्यः जंगल में रहने वाले।

वि ग्राम्याः पशव आरण्यैर्व्याऽपस्तृष्णयासरन्। (अथर्व.3.31.3)

पश्र्ँस्तांश्चके वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये। (अथर्व.19.6.14)

- ख) अथर्ववेद में तीन प्रकार के पशुओं का वर्णन है।
- ग) शतपथ ब्राम्ह्मण में 5 प्रकार के पशुओं का वर्णन है।
  - 1) पुरुष 2) अश्व 3) गाय 4) अज (बकरा) 5) अवि (भेड़)

## एतान् पञ्च पशून् अपश्यत्। पुरुषमश्वं गामवियजम्, यदपश्यत् तस्यादेते पशवः।

(शत 62.1.2)

## 4.8 जन्तुओं का वैज्ञानिक वर्गीकरण -

2 भागों में बाँटा गया है।

- 1. प्रोटोजोआ इसमें एककोशिय जीव आते हैं। इस समुदाय में लगभग 50000 जातियाँ पाई जाती हैं। जैसे – अमीबा
- 2. मेटोजोआ इसमें बहुकोशीकीय जीव आते हैं। जिनके शरीर का निर्माण कई कोशिकाओं से मिलकर हुआ है।

### 4.9 पशु चिकित्सा -

प्राचीन समय में पशु चिकित्सा विज्ञान को मृगायुर्वेद के नाम से भी जाना जाता था। हाथी और घोड़े की चिकित्सा सम्बन्धी विज्ञान को हस्त्यायुर्वेद (गजायुर्वेद) एवं अश्वायुर्वेद कहा जाता था।

गजिविकित्सा (हाथी की चिकित्सा)- अग्निपुराण के अध्याय 287 में हाथी में होने वाले विभिन्न रोगों की चिकित्सा का उल्लेख किया गया है। उनमें से कुछ रोगों की चिकित्सा का वर्णन इस प्रकार है।

> गोमूत्रं पाण्डुरोगेषु रजनीभ्यां घृतं द्विज । आनाहे तैलसिक्तस्य निषेकस्तस्य शस्यते ॥

> > (अग्निपुराण 287.8)

लवणैः पञ्चभिर्मिश्रा प्रतिपानाया वारुणी ।

विडङ्गत्रिफलाव्योषसैन्धवैः कवलान्कृतान् ॥

(अग्निपुराण 287.9)

मूर्च्छासु भोजयेन्नागं क्षौद्रं तोयं च पाययेत्।

अभ्यङ्गः शिरसः शूले नस्यं चैव प्रशस्यते ॥

(अग्निपुराण 287.10)

नागानां स्नेहपुटकैः पादरोगानुपऋमेत् । पश्चात्कल्ककषायेण शोधनं च विधीयते ॥

(अग्निपुराण 287.11)

अग्निपुराण के इन क्लोकों में हाथी की चिकित्सा के बारे में बताया है। यदि हाथी को पाण्डु रोग हो जाएँ तो हल्दी के साथ गौमूत्र और घी पिलाना चाहिए। कब्जीयत होने पर तेल से पेट की सफाई करना चाहिए एवं नमक का घोल देना चाहिए। बेहोश होने पर वायविडग, त्रिफला, त्रिकटु और सेंघा नमक से युक्त आहार एवं शहद देना चाहिए। हाथियों के पैर में रोग होने पर पैर में तेल लगाना चाहिए।

अश्व चिकित्सा (घोड़े की चिकित्सा) - अग्निपुराण के अध्याय 288,289 में घोड़े में होने वाले विभिन्न रोगों की चिकित्सा का उल्लेख किया गया है। उनमें से कुछ रोगों की चिकित्सा का वर्णन इस प्रकार है।

गोमयं लवणं मूत्रं क्वथितं मृत्समन्वितम् । अङ्गलेपो मक्षिपकादिदंशश्रमविनाशनः ॥

(अग्निपुराण 288.57)

मध्ये भद्रादिजातीनां मण्डो देयो हि सादिना ।

द्र्शनं भोततीक्षस्य निरुत्साहः क्षुधा हयः ॥

(अग्निपुराण 288.58)

यथा वश्यस्तथा शिक्षा विनश्यन्त्यतिवाहिताः ।

अवाहिता न सिध्यन्ति तुङ्गवक्त्रांश्च वाह्येत् ॥ (अग्निपुराण 288.59)

अग्निपुराण के इन क्लोकों में घोड़े की चिकित्सा के बारे में बताया है। घोड़े को जब मक्खी आदि जन्तु काटे तथा घोड़ा थक गया हो तब घोड़े की थकान दूर करने के लिए गोबर, नमक, मिट्टी, गोमूत्र का काढ़ा करके उसका घोड़े के शरीर पर लेप करना चाहिए। घोड़े को पारिजात के पत्तों को चावल के साथ मिलाकर भोजन में देना चाहिए जिससे उसके पेट में स्थित कृमियाँ नष्ट हो जायें।



#### अभ्यास प्रश्न 🖊

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए -

- 1) निम्न में से एककोशिकीय जीव है
  - क) शेर
- ख) अमीबा
- ग) हिरण
- घ) भालू

- 2) निम्न में से पालतू जीव नहीं है
  - क) खरगोश
- ख) बिल्ली
- ग) कुत्ता
- घ) लोमड़ी
- 3) प्राचीन समय में ईंधन के रूप में उपयोग की जाती थी।
  - क) गैस
- ख) लकड़ी
- ग) क व ख दोनों
- घ) इनमें से कोई नहीं

### प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

- 1) रातपथ ब्राह्मण में ......प्रकार के पशुओं का वर्णन है।
- 2) एककोशीकीय जीव में.....कोशिका होती है।
- प्राणियों के श्वसन के लिए आवश्यक गैस......है।

### प्र.3 निम्निलिखित कथनों के सामने सत्य (🗸) अथवा असत्य (🗷) का चिह्न अंकित कीजिए।

- 1) वृक्ष पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाते हैं।
- 2) जंगल में रहने वाले जन्तु आरण्यक जन्तु कहलाते हैं।
- 3) मिट्टी में खाद मिलाने से मिट्टी की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है।

#### प्र.4 सही जोड़ी मिलान कीजिए।

- 1) वृक्षायुर्वेद हाथियों के उपचार से सम्बन्धित
- 2) मृगायुर्वेद पशु चिकित्सा
- 3) अञ्चायुर्वेद पौधों का उपचार
- 4) गजायुर्वेद घोड़ो का उपचार

### प्र.5 अति लघूत्तरीय प्रश्न

1) जन्तुओं का वर्गीकरण वैज्ञानिक तरीके से कितने भागों में किया गया है ?

### प्र.6 लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) वृक्ष वनस्पतियों का क्या महत्त्व है ?
- 2) पौधों की उपचार प्रणाली बताइए।
- 3) वनस्पतिजगत की प्राचीनता स्पष्ट कीजिए।
- 4) अंकुरोद्भेद से क्या तात्पर्य है ?

## प्र.7 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1) पौधों के रोगग्रस्त होने के किन्ही तीन कारणों का उल्लेख कीजिए।



### अध्याय - 5

# भारत में रसायन शास्त्र

### अध्ययन बिन्दु

- 5.1 प्रस्तावना
- 5.2 वैदिक वाड्मय में धातु और खनिज
- 5.3 अयस्क एवं धातुकर्म
- **5.4 रसविद्या**
- 5.5 द्रव्य, द्रव्य के प्रकार, द्रव्य का स्वरूप
- 5.6 धातु विज्ञान
- 5.7 विद्युत विज्ञान

#### 5.1 प्रस्तावना -

भारत में रसायनशास्त्र की प्राचीन परम्परा रही है। वैदिक एवं संस्कृत वाड्यय में धातुओं, अयस्कों उनकी खादानों, यौगिकों तथा मिश्रधातुओं का वर्णन है तथा रासायनिक कियाओं में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों का भी विवरण मिलता है। इनमें अनेक प्रकार की कुंडियों, भट्टियों, धौंकिनयों एवं कूसिबिलों का वर्णन मिलता है। रसरत्न नामक ग्रन्थ में 2500 से 9000 डिग्री ताप के लिए कमश महागजपुट, गजपुट, वराहपुट तथा 2000 डिग्री से निम्नतम ताप प्रदान करने के लिए कुक्कुटपुट, कपोतपुट आदि भट्टियों का वर्णन मिलता है। 9000 डिग्री से अधिक ताप के लिए बाग्मट्ट ने अंगारकोष्ठी, पातालकोष्ठी, गारकोष्ठी एवं मूषककोष्ठी नामक चार भट्टियों का उल्लेख किया हैं। धातु प्रगलन के लिए भट्टियों से उच्चतम ताप प्राप्त करने के लिए ऋषि भरद्वाज के बृहत् विमानशास्त्र में 532 प्रकार की धौंकिनयों एवं 407 प्रकार के क्रिसिवलों का वर्णन किया है इनमें से कुछ प्रमुख पञ्चास्यक, त्रुटि, शुंडालक आदि रहे हैं।

### 5.2 वैदिक वाड्यय में धातु और खनिज -

यजुर्वेद में पत्थर (अश्मन), मिट्टी (मृतिका), बालू (सिकता), हिरण्य (सोना), अयस् (लोहा अथवा काँसा), श्याम (ताँबा), लोह (लोहा), सीस (सीसा और त्रपु) राँगा, वंग या टीन का उल्लेख है।

अश्मा च मे मृत्तिका च मे गिरयश्च मे पर्वताश्च मे सिकताश्च मे वनस्पतयश्च मे हिरण्यञ्च मेऽयश्च मे श्यामञ्च मे लोहञ्च मे सीसञ्च मे त्रपु च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।

(यजु. 18.13)

यजुर्वेद में अयस्ताप का उल्लेख है जो लोहे के खिनज को लकड़ी कोयला के साथ तपाकर धातु तैयार करता है।

## मन्यवे अयस्तापम्।

(यजु. 30/14)

अयस्क को तपाकर धातु तैयार करने की और यह संकेत अथर्ववेद में भी है। हरित (सोना), रजत (चाँदी), अयस् (सोना) तीन शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

# नव प्राणान् नवभिः सं मिमीते दीर्घायुत्वाय शतशारदाय। हरिते त्रीणि रजते त्रीण्ययसि त्रीणि तपसाविष्ठितानि॥

(अथर्व. 5.28.1)

अथर्ववेद में सीसा धातु का उल्लेख मिलता है इसके ''द्धत्वं सीसम्'' सूक्त से प्रतीत होता है। सीसे से बने छर्रे युद्ध में काम आते थे।

> यदि नो गांहंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्। तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नोऽसो अवीरहा॥

> > (अथर्व. 1.16.4)

तस्माद्याज्ञात् सर्वहुतः संभृतं पृषदाज्यम् ।

पशून् ताँश्रके वायव्या नारण्यान् ग्राम्याश्च ये ॥ (ऋग. 10.90.8)

इस ऋगवेदीय मंत्र में परमाणुओं के प्रकार एवं प्रवृति के संबंध में उल्लेख मिलता है। इस मंत्र में परमाणुओं की तीन प्रकृति जैसे – वायव्यान, आरण्यान, ग्राम्यान् के रूप मे बतायी गई है।

- 1. वायव्यान् अंतरिक्ष में निरंतर गतिशील रहने वाले परमाणु ।
- 2. आरण्यान् सृष्टि चक्र से विमुख सदैव एकाकी (अलग रहने वाले परमाणु)
- 3. ग्राम्यान् युगलों या समूहों मे रहने वाले परमाणु । युगलों या समूहों मे रहने वाले परमाणु आपसी अनुक्रियाओं के द्वारा पदार्थ को स्वरूप देने का कार्य करते हैं।

## तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः । गावो ह जिज्ञरे तस्मात् तस्माज्जाता अजावयः ॥

(ऋग. 10.90.10)

ऋग्वेद के इस मन्त्र में बताया गया है कि परमाणुओं के संयोग से पञ्चभौतिक पदार्थों जैसे अज (अग्नि), अवि (जल), अरव (वायु) आदि की उत्पत्ति हुई है।

## 5.3 अयस्क एवं धातुकर्म –

जिस रूप में धातुएँ पृथिवी से उत्खनन की जाती है, उसे अयस्क कहते हैं। ऋग्वेद में अयस् (लोह) धातु के निष्कर्षण विधि को बताया है। वे खनिज या यौगिक जिनसे धातुएँ प्राप्त की जा सके, अयस्क कहलाते हैं। इन अयस्कों से धातु के निष्कर्षण की विधि को धातुकर्म कहते हैं। विभिन्न धातुओं के अयस्कों के नाम हमारे प्राचीन ग्रन्थों में पाए गए है। जैसे – हर्बल  $(AS_2O_3)$  आर्सैनिक ऑक्साइड तथा शिखिग्रीव  $(CuSo_4)$  या कॉपर सल्फेट या नीला थोथा। जो कमशः आर्सैनिक एवं ताँबे के अयस्क है।

ताँबे के अयस्क CuSo<sub>4</sub> त्तिया या काँपर सल्फेट अकार्बनिक यौगिक है जिसे नीला थोथा से शुद्ध ताँबे के निष्कर्षण की विधि रसतरंगिणी में दी गई है। नीले थोथा को जल में घोलकर उसमें लौह चूर्ण डालने पर बर्तन की तलहटी पर शुद्ध ताँबा एकत्र हो जाता है, जिसे सरलता से अलग किया जा सकता है।

#### रासायनिक समीकरण

 $CuSo_4 + Fe$  ----->  $FeSo_4 + Cu$ 

कॉपर सल्फेट आयरन फेरस सल्फेट कॉपर

रसायन सार नामक ग्रन्थ में शिखिग्रीव विलयन को लोहे के बर्तन में रखकर छोड़ देते हैं इस प्रकार प्राप्त ताँबे के चूर्ण का द्रव्यमान कुल लिए गए कॉपर सल्फेट के द्रव्यमान का 20 प्रतिशत होता है।

#### **5.4 रसविद्या** –

टी.जी. काले द्वारा रचित 'रसमंजरी' नामक मराठी पुस्तक में प्राचीन रसायनशास्त्र के 127 ग्रंथो की सूची दी गई है, उनमें से कुछ कृतियाँ निम्नानुसार है –

- 1. नागार्जुन रसरत्नाकर
- 2. वाग्भट्ट अष्टांगहृदय, रसरत्नसमुच्चय
- 3. गोविंदाचार्य रसहृद्यतन्त्र, रसार्णव
- 4. सोमदेव रसार्णवकल्प, रसेंद्रचूणमणि

दरदः पारदः सस्यो वैकान्तं कान्तमभ्रकम् ।

माक्षिकं विमलं चेति स्युरेतेऽष्टौ महारसाः॥

(धन्वन्तरीयनिघण्टु. पृ. 288)

रसार्णव नामक ग्रंथ में आठ महारसों का वर्णन किया है, जो इस प्रकार है – माक्षिक, विमल, शिलाजीत, चपल (पारा), रसक, सम्यक (तूतिया), दरद और स्त्रोमांडजन।

#### पारे की रुपान्तरण प्रक्रिया

नागार्जुन ने पारे को शुद्ध करने और पारे के औषधीय प्रयोग की विधियाँ बताई है । अपने ग्रंथों में नागार्जुन ने विभिन्न धातुओं का मिश्रण तैयार करने, पारा तथा अन्य धातुओं का शोधन करने, महारसों का शोधन तथा विभिन्न धातुओं को स्वर्ण या रजत में परिवर्तित करने की विधि बतायी है ।

### पारद (पारा) भस्म निर्माण विधि –

रासायनिक क्रिया द्वारा धातु के हानिकारक गुण दूर करके उन्हें राख में बदलने पर भस्म का निर्माण होता है।

योगचिन्तामणि में पारद-भस्म बनाने की विधि बतायी गई है।

#### पारा जमाना

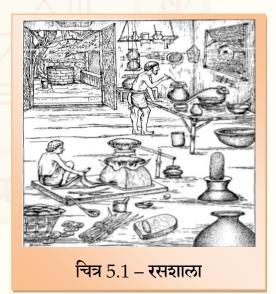
# जम्बीरजेन नवसारघनाम्लवर्गः । क्षाराणि पश्चलवणानि कटुत्रयं च ॥

(रस.अ.3.1 वै.वि.पृष्ठ 163)

पारे को नींबू के रस, नौसादार (नवसार), अम्ल, क्षार, पञ्च लवण, त्रिकटुक (सोंठ, मिर्च, पीपल), िशयु के रस और सुरिम सूरण कन्द के साथ मर्दित करने से यह आठों धातुओं के साथ जम जाता है।

रस रत्न समुच्चय में मुख्य रस माने गए निम्न रसायनों का उल्लेख किया गया है -

- (1) महारस इसमें 8 पदार्थ हैं अभ्रक (पाइराइट), वैकांत, भाषिक, विमला (लौह पाइराइट), शिलाजीत, सास्यक (कॉपर सल्फेट), चपला (बिस्मथ), रसक (कैलेमाइन या जस्ता)
- (2) उपरस गन्धक, गैरिक, कसीस (हरा थोथा) , मनःशिला, अंजन, कंकुष्ठ, फिटकरी (कांक्षी), हरताल



- (3) साधारण रस कोयला, गौरीपाषाण (आर्सीनेक), नवसार, वराटक, अग्निजार, लाजवर्त, गिरि सिंदुर, हिंगुले (सिनेबार), मुदिं श्रंगकम्
- (4) धातु स्वर्ण, रजत, ताम्र, लौह, नाग (लेड़), वंग (टिन), यशदु (जस्ता)

विभिन्न प्रकार के विष्, अम्ल तथा क्षार का वर्णन दिया गया है तथा धातुओं की भस्मों का वर्णन किया गया हैं।

रस रत्न समुच्चय अध्याय 7 में प्रयोगशाला या रसशाला का वर्णन दिया गया हैं। इसमें 32 से अधिक यन्त्रों का उपयोग किया जाता था। इनमें से कुछ प्रमुख है -

#### 1. कोष्ठीयन्त्र –

सौलह अंगुल चौड़ी और एक हाथ लम्बी तथा समान आकार की एक मूषा बनवाते हैं इसे कोष्ठीयन्त्र कहते हैं। यह यन्त्र धातुओं और रत्नों के सत्वादि को (सार) निकालने में उपयोगी है।



षोड़शाङ्गुलविस्तीर्णं हस्तमात्राऽऽयतं समम्। धातुसत्त्वनिपातार्थं कोष्ठोयन्त्रमिति स्मृतम्॥

(रस रत्न समुच्चय 9.43)

#### 2) धूपयन्त्र –

आठ अंगुल चौड़ा और आठ अंगुल ऊँचा लोहे का पात्र लेते हैं। उसके मध्य के नीचे दो अंगुल चौड़े स्थान में एक आधार बनवा लिया जाता है और इस आधार पर पतली और तिरछी लोहे की छड़े (शलाका) देही रख दी जाती है। इन शलाकाओं के ऊपर छोटेछोटे कण्टुक वेध्य सोने के पत्र रखे जाते हैं। लोहपात्र में पहले से ही गंधक, हरताल आदि की कज्जली डाल देते हैं। इस लोहपात्र को एक दूसरे से ढॅक देते हैं। पात्र



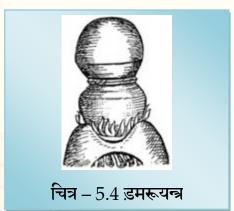
को चूल्हे पर चढ़ाते हैं और नीचे से आग लगा देते हैं। कज्जली के धूम से प्रभावित होकर सोने के पत्र काले पड़ जाते हैं, ऐसे मृत स्वर्ण पत्रों मिश्रित पारद शीघ्रता से भक्षण कर सकता है। भक्षण किए हुए पत्र पारद में शीघ्र ही द्रुत हो जाते हैं।

#### 3) डमरुयन्त्र –

इस उपकरण की आकृति डमरु के समान होती है। पारद की भस्म बनाने में यह उपकरण उपयोगी है।

### 5.5 द्रव्य, द्रव्य के प्रकार, द्रव्य का स्वरूप -

आधुनिक रसायन विज्ञान के अनुसार द्रव्य वह पदार्थ है जिससे भौतिक वस्तुओं का निर्माण होता है।



इसे तत्त्व, यौगिक, मिश्रण में विभाजित किया गया है। संस्कृत वाड्य में दार्शनिक श्रीधराचार्य के अनुसार द्रव्य सभी भौतिक वस्तुओं का आश्रयभूत है अर्थात् सभी वस्तुएँ या तो द्रव्य से बनी हैं या स्वयं द्रव्य हैं।

महर्षि कणाद के अनुसार किया और गुण का समवायीकरण द्रव्य है। यही विचार आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थों चरकसंहिता एवं सुश्रुतसंहिता में दिया गया है। वैशेषिक दर्शन में द्रव्य को 2 भागों में बाँटा गया हैं -

#### 1) अनित्य 2) नित्य

पृथिवी, जल, तेज और वायु ये चारों द्रव्य अवयवी को विभाजित करने पर वह नित्य अवयव में बदल जाते हैं। उदा. – कोयले के तोड़ने पर उसके मूल कार्बन परमाणु को किसी भी विधि से अलग नहीं किया जा सकता है। अतः परमाणु को अलग नहीं किया जा सकता है। वैशेषिकदर्शन के अनुसार प्रत्येक वस्तु, उसके गुण एवं किया को जानने के लिए चेतन अधिकरण अर्थात आत्मा तथा एक मध्यस्थ उपकरण या मन तथा पाँच बाह्यकरण अर्थात ज्ञानेन्द्रियों की स्वीकृति अनिवार्य है।

आधुनिक रसायन विज्ञान के अनुसार –

तत्त्व - जिसके अणु एक ही प्रकार के परमाणुओं से बने होते हैं।

यौगिक – जिसके अणु विभिन्न प्रकार के परमाणुओं के निश्चित अनुपात से मिलकर बने होते हैं।

मिश्रण – जो दो या दो से अधिक पदार्थों को किसी भी अनुपात में मिलाने से बनता है।

महर्षि कणाद का सिद्धान्त –

पृथिवी, जल, तेज और वायु इन चारों का मूल तत्त्व परमाणु है। परमाणु वह सूक्ष्मतम अवयव है, जिसे और विभाजित नहीं किया जा सकता है। खिड़की से आते हुए सूर्य के प्रकाश में सूक्ष्म कण दिखाई देते हैं, उनका षष्ठतम भाग परमाणु है।

# जलान्तरस्थसूर्यांशौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः। भागस्तस्य च षष्ठो यः परमाणु स उच्यते॥

(तर्कामृत)

डॉल्टन परमाणु सिद्धान्त में महर्षि कणाद के सिद्धान्त परमाणु के नित्यत्त्व, अविभाज्यत्त्व, अतीन्द्रियत्त्व का अंश है।

परमाणुओं की आकर्षण शक्ति – ऋग्वेद के इस मन्त्र में उल्लेख है कि प्रत्येक परमाणु दूसरे परमाणुओं को सदा आकृष्ट करता है।

## एको अन्यचकृषे विश्वमानुषक् । (ऋग. 1.52.14)

अर्थात् एक प्रत्येक परमाणु, अन्यत् विश्वम् अन्य सभी परमाणुओं को, आनुषक-निरन्तर, चकृषे- अपनी ओर खींचता है।

# 5.6 धातुविज्ञान –

1) धातुओं में टाँका लगाना — गोपथबाह्मण, जैमिनीय उपनिषद्, ब्राह्मण और छान्दोग्य उपनिषद् में धातुओं को जोड़ने या टाँका लगाने की विधि दी गई है। गोपथब्राह्मणम् के अनुसार लवण (क्षार) से सोने को सोने से, चाँदी को चाँदी से, लोहे को लोहे से जोड़ा जा सकता है।

लवणेन सुवर्णं सन्दध्यात्, सुवर्णेन रजतं, रजतेन लोहं लोहेन, सीसं सीसेन त्रपु।

(गोपथ पू. 1.14 जै. उ. ब्रा. 3.17.3)

छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार लवण (क्षार) से सुवर्ण से सुवर्ण, सोने से चाँदी को, चाँदी को त्रपु (रांगा, टिन) से, टिन (रांगा) को सीसा से, सीसे से लोहे को, लोहे से लकड़ी को, लकड़ी को चमड़े से को जोड़ा जा सकता है।

क्षार पदार्थ को मृदु बना देता है अतः उससे धातुएँ एक – दूसरे से जुड़ जाती हैं। लवणेन सुवर्ण संद्ध्यात्, सुवर्णेन रजतं, रजतेन त्रपु, त्रपुणा सीसं, सीसेन लोहं, लोहेन दारु, दारुणा चर्म। (छान्दोग्य उप. 4.17.7)

2) काँसा धातु से अग्नि — जब सूर्य उपर की ओर जाता है, तब हम यदि काँसा धातु या सूर्यकान्त मणि को साफ करके सूर्य के सामने (फोकस) रखें तो उससे निकलने वाले ताप से पास में रखा हुआ सूखा गोबर जल जाता है। यदि रूई रखी होगी तो वह भी जल जाएगी।

अथादित्यात्, उदीचि प्रथमसमावृत्त आदित्ये कंसं वा मणिं वा, परिमृज्य प्रतिस्वरे यत्र शुष्कगोमयम् अस्पर्शयन् धारयति तत् प्रदीप्यते ॥

(निरुक्त 7.23)

3) चाँदी शुद्ध करना — चाँदी, सीसा के साथ गलाने और भस्मों के साथ गलाने पर शुद्ध होती है।

नागेन क्षारराजेन द्रावितं शुद्धिमिच्छिति।

तारं त्रिवारिनक्षिप्तं पिशाचीतैलमध्यमम् ॥

(रत्नाकर अ. 1.13)

4) **धातु संक्षारण** — याज्ञवल्कक्य स्मृति में संक्षारित धातुओं को अम्ल अथवा क्षार की सहायता से शुद्ध करने का वर्णन दिया है।

रसार्णव में यह भी बताया कि वंग, सीसा, लोहा, ताँबा, रजत और स्वर्ण में स्वतः संक्षारण की प्रकृति इसी कम में घटती जाती है जो आधुनिक रसायन शास्त्र के संगत है।

> सुवर्णं रजतं ताम्रं तीक्ष्णवङ्गभुजङ्गमाः। लोहकं षड्विधं तच्च यथापूर्वं तदक्षयम् ॥

> > (रसावर्ण 7.89-90)

संक्षारण से वस्तुओं को सुरक्षित रखने के लिए वाराहिमिहिर की बृहत् संहिता में वज्र लेप एवं वज्र संघट्ट के प्रयोग के बारे में बताया है। वज्र लेप को वानस्पतिक एवं वज्र संघट्ट को जैविक घटकों से निर्मित करने की विधियों का वर्णन है।

- 5) धातु से विस्फोटक का निर्माण शुक्रनीति में कोयला, गंधक, शोरा, लाल आर्सीनिक, पीत आर्सीनिक, ऑक्सीकृत सीसा, सिन्दूर, इस्पात का चूरा, कपूर, लाख, तारपीन एवं गोंद के भिन्न भिन्न अनुपातों के मिश्रण को गर्म कर अनेक प्रकार के विस्फोटकों के निर्माण के बारे में बताया है।
- 6) मिश्रधातु दो या दो से अधिक धातुओं को मिलाकर मिश्रधातु बनाई जाती है।

पीतल मिश्रधातु लगभग सभी उत्खनन स्थलों से प्राप्त हुई है तथा वेदों में भी इसका उल्लेख मिलता है। जस्ता धातु सुवर्णकार है क्योंकि ताँबा धातु के साथ मिलकर पीतल, मिश्रधातु का निर्माण करती है।

पीतल – ताँबा (काँपर) + जस्ता (जिंक)

क्रमेण कृत्वाम्बुधरेण रञ्जितः । करोति शुल्वं त्रिपुटेन काञ्चनम् ॥

(रसरत्नाकर 3)

जस्ता एवं शुल्व (ताँबा) (1:3) में मिलाकर गर्म किया जाये तो पीतल मिश्रधातु बनती है।

कौटित्य के अर्थशास्त्र में चार प्रकार के सिक्के धातुएँ वर्णित है – मशकम, अर्धमशकम, काकनी एवं अर्धकाकनी। ये सभी रजत (चाँदी), ताँबा, लोहा, वंग और सीसा अथवा एन्टिमनी को विभिन्न अनुपातों से मिलकर बनाई जाती थी। इसी प्रकार चाँदी एवं पारद की भी कई वर्णों वाली मिश्रधातु बनाई जाती थी। चरकसंहिता के अनुसार मूर्ति निर्माण में पञ्चलोहा का प्रयोग किया जाता था जिसमें ताँबा, वंग, सीसा, लोहा एवं रजत का मिश्रण होता था। रसरत्न समुच्चय के अनुसार मूर्ति निर्माण में रजत के स्थान पर पीतल का प्रयोग किया जाता था।

मिन्दरों में घण्टी निर्माण के लिए तांबा और दिन (वंग) विभिन्न अनुपातों में मिलाए जाते थे। वर्तमान में भी बेल मेटल के निर्माण के लिए ताँबा (80 प्रतिशत) एवं दिन (20 प्रतिशत) मिलाया जाता है। कुछ अन्य धातुएँ थोड़ी मात्रा में मिलायी जा सकती है।

काँसा – ताँबा + टिन

संस्कृत वाड्मय में उल्लेख है कि रासायनिक प्रक्रियाओं के सम्पादन के लिए आवश्यक रसायन एवं अभिकर्मक वानस्पतिक तथा जैविक स्रोतो से प्राप्त किए जाते थे। उत्प्रेरक, अम्ल, क्षारों के स्रोत भी जैविक थे। कृषि कार्य में कीटो को नष्ट करने के लिए जैविक रसायन का प्रयोग किया जाता था जो आधुनिक रसायन की अपेक्षा कम प्रदूषणकारी था।

7) धातुओं का शुद्धिकरण –

क्रमेण कृत्वाम्बुधरे पारिञ्जितः करोति शुल्बं त्रिपुटेन काचञ्नम् । सुवर्णं रजतं ताम्रं तीक्ष्णं वङ्गभुजङ्गमाः । लोहकं षड्विधं तच्च यथापूर्वं तदक्षयम् ॥

(रस रत्नाकर 3.7.89.10)

स्थिरता की दृष्टि से धातुओं का क्रम निम्न है – सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, टिन, सीसा इनमें सोना सबसे अधिक अक्षय है और लोहा, टिन, सीसा में जंग शीध्र लगती है।

8) अम्लराज –

कासीसं सैन्धवं माक्षी सौवीरं व्योषगन्धकम्, सौवर्चलं व्योषका च मालती-रससम्भवः । शिग्रुमूलरसैः सिक्तो विडोऽयं सर्वजारणः ।

(रसावर्ण 1.2.3)

कसीस, सैन्धव, माक्षिक, सौवीर, व्योष (तीन मसाले – सोंठ, काली मिर्च और मिर्च), गंधक, सौवर्चल (शोरा), मालती रस इन सबको शिग्रु रस से सिक्त करके जो 'विड' बनता है, वह धातुओं को जला सकता है। इस योग में कसीस को गर्म करके सल्फ्यूरिक ऐसिड बनता है, जो शोरा पर प्रतिक्रिया करके नाइट्रिक ऐसिड और सैन्धव पर प्रतिक्रिया करके हाइड्रोक्लोरिक एसिड देता है। इन दोनों का मिश्रण अम्लराज कहलाता है, जिसमें स्वर्ण और प्लैटिनम धातुएँ भी घुल सकती है।

## 5.7 विद्युत विज्ञान –

विद्युत सेल - ऋषि अगस्तय ने 'अगस्तय संहिता' में विद्युत सेल (बैटरी) एवं विद्युत उत्पादन की व्याख्या की है ।

> संस्थाप्य मृण्मये पात्रे ताम्रपत्रं सुसंस्कृतम् । छादयेच्छिखिग्रीवेन चार्दाभिः काष्ठपांसुभिः ॥ दस्तालोष्टो निधात्वयः पारदाच्छादितस्ततः । संयोगाज्जायते तेजो मित्रावरुणसंज्ञितम् ॥

> > - अगस्त्य संहिता

अगस्त्य संहिता के अनुसार मिट्टी के पात्र में ताम्र पट्टिका (कॉपर प्लेट) एवं शिखीग्रीवा (कॉपर सल्फेट) का विलयन डालकर, दोनों पट्टिका के बीच में लकड़ी का बुरादा एवं उसके ऊपर पारा और जस्ता डाले, तत्पश्चात दो तारों से जोड़ने पर उसमें विद्युत धारा उत्पन्न हो जाएगी। इंजीनियरिंग कॉलेज नागपुर के इलेक्ट्रॉनिक विभाग के प्रो. पी पी होले ने अगस्त्य संहिता के उपरोक्त मन्त्रों के आधार पर एक सेल का निर्माण किया, जिसका डिजीटल मल्टीमीटर द्वारा मापन करने पर 1.38 वोल्ट की शक्ति तथा शार्ट सर्किट करेंट 23 मिली एम्पीयर पायी गयी। अगस्त्य संहिता के मन्त्रों पर आधारित इस बैटरी (सेल) को सन् 1990 में स्वदेशी विज्ञान संशोधन संस्था, नागपुर के चौथे वार्षिक सभा मे भी रखा गया। इस वैज्ञानिक प्रयोग के आधार पर हम कह सकते है कि ऋषि अगस्त्य विद्युत सेल के आदि प्रवर्तक रहे है।

#### विद्युत अपघटन विधि –

ऋषि अगस्त्य ने 'अगस्त्य संहिता' में विद्युत अपघटन विधि की व्याख्या की है –

अनेन जलभङ्गोस्ति प्राणो दानेषु वायुषु ।

एवं शतानां कुम्भानां संयोगाः कार्यकृत् स्मृतः ॥

-अगस्त्य संहिता

अगस्त्य संहिता के अनुसार यदि जल में सौ कुंभों (बैटरी) की शक्ति का उपयोग किया जाए, तो जल अपने मूल रूप को त्यागकर प्राण वायु (ऑक्सीजन) एवं उदान वायु (हाइड्रोजन) मे परिवर्तित हो जायेगा।

## वायुबन्धकवस्त्रेण निबद्धो यानमस्तके ।

उदानः स्वलघुत्वे विभर्त्याकाशयानकम् ॥

-अगस्त्य संहिता शिल्पशास्त्रसार

विद्युत अपघटन विधि के उपरांत उत्पन्न उदान वायु (हाइड्रोजन) को संरक्षित करने की विधि का उल्लेख किया गया है।

यदि विद्युत अपघटन विधि में उत्पन्न उदान वायु (हाइड्रोजन) को वायु प्रतिबंधक वस्त्रों मे रोका जाए, तो यह विमानों के ईंधन के रूप में उपयोग मे लाया जा सकता है।

### इलेक्ट्रोप्लेटिंग (विद्युत लेपन) -

धातुओं पर अन्य धातुओं की परत चढ़ाने की विधि इलेक्ट्रोप्लेटिंग कहलाती है। ऋषि अगस्त्य ने 'अगस्त्य संहिता' में इलेक्ट्रोप्लेटिंग विधि की विस्तृत व्याख्या की है, विद्युत बैटरी (सेल) के उपयोग के द्वारा धातुओं जैसे ताँबा, सोना, चाँदी पर अन्य धातुओं की परत चढ़ाने की विधि बतायी गयी है।

# यवक्षारमयोधानौ सुशक्तजलसन्निधौ, आच्छादयति तत् ताम्रं स्वर्णेन रजतेन वा । सुवर्णलिप्तं तत् ताम्रं शातकुम्भमिति स्मृतम् ॥

- अगस्त्य संहिता

अगस्त्य संहिता के अनुसार लोहे के पात्र में सुशक्त जल (तेजाब) एवं यवाक्षर (सोना या चाँदी का नाइट्रेट) मिलाकर रखकर उसमें ताँबे की एक छड़ रखने पर ताँबे पर सोना या चाँदी की परत चढ़ जाती है। स्वर्ण (सोना) से लिप्त ताम्र (ताँबा) को शातकुंभ कहा गया है।

**कृत्रिमः स्वर्णरजतलेपः सत्कृतिरुच्यते ।** - शुक्रनीति

शुक्रनीति मे विद्युत लेपन की इस प्रक्रिया को सत्कृति कहा गया है।

#### अभ्यास प्रश्न 🖊

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए –

- 1) किस पदार्थ के अणु एक ही प्रकार के परमाणु से बने होते हैं
  - अ) यौगिक
- ब) मिश्रण
- स) तत्त्व
- द) इनमें से कोई नहीं
- 2) निम्न में से धातु नहीं है
  - अ) सोना
- ब) चाँदी
- स) ताँबा
- द) ब्रोमीन
- 3) धातु संक्षारण की दृष्टि से सबसे अधिक अक्षय धातु है
  - अ) सीसा
- ब) लोहा
- स) सोना
- द) चाँदी

## प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

- 1) वैशेषिक दर्शन में द्रव्य को......भाँगों में बाँटा गया है।
- 2) ऋग्वेद में.....धातु के निष्कर्षण की विधि को बताया है।
- 3) पीतल मिश्रधातु ताँबा एवं.....धातु के संयोग से मिलकर बनती है।

#### प्र.3 निम्निलेखित कथनों के सामने सत्य (✓) अथवा असत्य (✗) का चिह्न अंकित कीजिए।

- 1) परमाणु को विभाजित किया जा सकता है।
- 2) काँसा एक मिश्रधातु है।
- 3) अथर्ववेद में सीसा धातु का उल्लेख मिलता है।

#### प्र.4 सही जोड़ी बनाइए।

कॉलम 'अ' कॉलम 'ब'

- 1) मिश्रधातु स्वर्ण (सोना)
- 2) धातु पीतल

- 3) डमरुयन्त्र धातुओं के सार निकालने में
- 4) कोष्ठीयन्त्र पारद की भस्म बनाने में

### प्र.5 अति लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) जिस रूप में धातुएँ पृथिवी से उत्खिनत की जाती है उसे क्या कहते हैं?
- 2) शिखीग्रीव का अन्य नाम क्या है?
- अथर्ववेद में किस धातु से बने छर्रे (गोली) का प्रयोग किए जाने का उल्लेख है ?

### प्र.6 लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) धूपयन्त्र रसशाला उपकरण का नामान्कित चित्र बनाकर समझाइए।
- 2) महर्षि कणाद का सिद्धान्त लिखिए।
- 3) मिश्रधातु किसे कहते हैं ? दो मिश्रधातु के नाम बताइए।
- 4) काँसा धातु से अग्नि उत्पन्न करने की किया को समझाइए।
- 5) बेल मेटल क्या है ?

#### प्र.7 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1) धातु संक्षारण से क्या तात्पर्य है ? धातु संक्षारण रोकने के उपाय बताइए।

## अध्याय - 6

# समुद्रयान और नौका निर्माण विज्ञान

### अध्ययन बिन्दु

- 6.1 प्रस्तावना
- 6.2 वैदिक एवं संस्कृत वाड्मय में नौकाओं का वर्णन
- 6.3 प्राचीन ग्रन्थ युक्तिकल्पतरु में नौका निर्माण

#### 6.1 प्रस्तावना **–**

भारत में समुद्रयान और नौकाओं के निर्माण की कला अति प्राचीन रही है। वैदिक एवं संस्कृत वाड्यय में समुद्र यात्रा का वर्णन मिलता है। महर्षि अगस्त्य को समुद्री द्वीप – द्वीपान्तरों की यात्रा करने वाले के रूप में संस्कृत वाड्यय में बताया गया है। भारतीय नौ सेना का ध्येय वाक्य है "शक्तो वरूणः" अर्थात् जल देवता हम पर कृपा करें।

# 6.2 वैदिक एवं संस्कृत वाड्यय में नौकाओं का वर्णन -

ऋग्वेद में समुद्री पोतों का उल्लेख है जिसमें सौ या उससे अधिक पतवार (अरित्र) लगे होते थे।

# अनारम्भणे तद्वीरयेथामनास्थाने अग्रभणे समुद्रे। यद्श्विना ऊह्थुर्भुज्युमस्तं शतारित्रां नावमातस्थिवांसम्॥

(ऋग्वेद 1.116.5)

ऋग्वेद के इस मन्त्र में समुद्र के अन्दर चलने वाले जहाज (यान) का वर्णन किया गया है इससे सबमरीन के बारे में जानकारी मिलती है। पूषादेव की नौकाएँ समुद्र के अन्दर और अन्तरिक्ष में चलती थी।

तिस्रः क्षपिस्ररहातिव्रजद्भि र्नासत्या भुज्युमूह्थुः पतङ्गैः ।

## समुद्रस्य धन्वन्नार्द्रस्य पारे त्रिभी रथैः शतपद्भिः षळश्वैः ॥

(ऋग्वेद 1.116.4)

इस ऋग्वेदीय मन्त्र में तीन दिन और तीन रात लगातार समुद्र मे चलने वाली नौका का उल्लेख किया गया है एवं इस नौका में जल काटने के लिए सौ पहिए युक्त मशीन का भी उल्लेख किया गया है।

# अनु स्वधामक्षरन्नापो अस्या ऽवर्धत मध्य आ नाव्यानाम् । सधीचीनेन मनसा तमिन्द्र ओजिष्ठेन हन्मनाहन्नभि चून् ॥

(ऋग्वेद 1.33.11)

ऋग्वेद के इस मन्त्र मे नौका से पार करने वाली निदयों के लिए नाव्या शब्द का उपयोग किया गया है।

# यास्ते पूषन्नवो अन्तः समुद्रे हिरण्ययीरन्तरिक्षे चरन्ति।

(ऋग्वेद 6.58.3)

ऋग्वेद में वर्णन है राजा वरुण समुद्र में चलने वाली नौकाओं या पोतों को जानते थे।

## वेगसाम्यादु विमानौऽण्डजानामिति।

(यन्त्रसर्वस्व 1.1.1)

विमान की गति एवं वेग पक्षियों की गति के समान होने का उल्लेख है।

# पृथिव्यप्स्वन्तरिक्षेषु खगवद् वेगतस्स्वयम्। यस्समर्थो भवेद्गन्तुं स विमान इति स्मृतः॥

(यन्त्रसर्वस्व, 1.1.1 पर बोधायन, वृत्ति)

बौधायन ने 'यन्त्रसर्वस्व' की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'विमान' एक यान है, जो आकाश एवं जल में पक्षियों के वेग से संचरण करने में समर्थ होता है।

> स्थानात्स्थानान्तरं गन्तुं यस्समर्थः खमण्डले। स विमान इति प्रोक्तो यानशास्त्र विशारदैः॥

> > (दृष्टक, वैमानिकी प्रकरण)

महर्षि सान्द्रीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

आचार्य शंख ने विमान का आकाशचारी अर्थात् आकाश में गमन करने वाले यान के रूप में उल्लेख किया है।

## राजलोह आदेतेषामाकरः रचना।

(दृष्टक, वैमानिकी प्रकरण 3.1.5)

वैमानिकी प्रकरण में विमान निर्माण में प्रयोग में लाई जाने वाली राजलौह मिश्रधातु का उल्लेख है। वैमानिकी प्रकरण में राजलौह मिश्रधातु बनाने की विधि को बताया गया है इसके अनुसार सोम, सौडांल एवं मार्दिक धातु को कमशः 3, 8 एवं 2 के अनुपात में लेकर धातुओं को 272° C तापमान पर गलाकर राजलौह मिश्रधातु तैयार करने की प्रविधि का उल्लेख किया गया है।

## ऊष्मपास्त्रित्रलोहमयाः मेलनात्।

(वैमानिकी प्रकरण 1.10.1.23)

## विमानार्हाणि लोहानि भारहीनानि षोडश।

(वैमानिकी प्रकरण 1.8.1)

सोम, सौडांल एवं मार्दिक धातु को गलाकर 16 प्रकार की मिश्रधातु तैयार करने का उल्लेख है। जिनका उपयोग वायुयान कि संरचना बनाने में किए जाने का उल्लेख है। इन धातुओं में सर्वाधिक ऊष्मा-अवरोह तथा भारहीनता होने का उल्लेख है।

वेद नावः समुद्रियः।

(ऋग्वेद 1.25.7)

यजुर्वेद और अथर्ववेद में भी उल्लेख है कि विशाल समुद्री जहाज होते थे और उनमें सौ से अधिक पतवार (अरित्र) लगी होती थी।

# सुनावमा रुहेयमस्त्रवन्तीमनागसम् । शतारित्रा छं स्वस्तये ॥

(यजु. 21.7)

सूर्य नावमारुक्षः शतारित्रां स्वस्तये।

(अथर्व. 17.1.26)

वाल्मीकि रामायण के अयोध्या काण्ड में भी ऐसी बड़ी नावों का उल्लेख है जिसमें सैकड़ों योद्धा सवार रहते थे।

# नावां शतानां पञ्चानां कैवर्त्तानां शतं शतम् । सन्नद्वानां तथा यूनान्तिष्ठन्त्वित्यभ्यचोदयत्॥

(रामायण)

महाभारत में यन्त्र चालित नाव का वर्णन मिलता है।

# सर्ववातसहां नावं यन्त्रयुक्तां पताकिनीम्।

(महाभारत)

अर्थात् यन्त्रपताकायुक्त नाव जो सभी प्रकार की हवाओं को सहने वाली हैं। कौटिल्य अर्थशास्त्र में नावों के प्रबंधन के जानकारी मिलती है तथा 5वीं सदी के वाराहमिहिर कृत बृहत् संहिता में जहाज निर्माण के बारे में बताया है।

# 6.3 प्राचीन ग्रन्थ युक्तिकल्पतरु में नौका निर्माण -

11वीं सदी के राजा राज भोज कृत् युक्तिकल्पतरु में जहाज निर्माण पर प्रकाश ड़ाला हैं। अथ निष्पदयानोद्धेशः

बिना पहिए वाला वाहन।

नौकाद्यं निष्पदं यानं तस्य लक्षणामुच्यते।

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 76)

अश्वादिकन्तु यद्यानं स्थले सर्वं प्रतिष्ठितम् । जले नौकैव यानं स्यादतस्तां यत्नतो वहेत् ॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 80)

बिना पहिए वाला वाहन अर्थात् नाव की ओर संकेत है। वह अश्वयान की तरह जल में प्रतिष्ठित है। 1) जहाज निर्माण का समय –

अथ कालः।

सुवारवेला तिथिचन्द्रयोगे, चरे विलग्ने मकरादिषद्गे। ऋक्षेऽन्त्यसप्तण्यतिरेकतोऽन्ये वदन्ति नौकाघटना दिकर्म॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 81)

जहाज निर्माण के लिए शुभ तिथि, चन्द्रमा का योग देखते हैं। जब चर लग्न हो, मंगल, मकर राशि एवं अन्य राशियों से छठा हो।

जब चन्द्रमा पूर्वी क्षितिज में तथा उसकी किरणें अभी तक शीर्षबिन्दु तक न पहुँची हो जब सूर्य अपनी विस्थापित स्थिति में धनिष्ठा के साथ सम्मिलित हो। तारा चन्द्रमा और तिथि का यह संयोग यात्रा करने के लिए शुभ होता है।

जहाज निर्माण के लिए काष्ठ (लकड़ी) –
वृक्षायुर्वेदगदिता वृक्षजातिश्चतुर्विधा।
समासेनैव गदितं तेषां काष्ठं चतुर्विधम्॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 83)

वृक्षायुर्वेद, पादप विज्ञान में लकड़ी के 4 प्रकार को बताया गया है।

तद्यथा।

लघु यत् कोमलं काष्ठं सुघटं ब्रह्मजाति तत्। दृढाङ्गं लघु यत् काष्ठमघटं क्षत्रजाति तत्॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 84)

कोमलं गुरु यत् काष्ठं वैश्यजाति तदुच्यते। दढाङ्गं गुरु यत् काष्ठं शूद्रजाति तदुच्यते॥ लक्षणद्वययोगेन द्विजातिः काष्ठसंग्रहः॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 85)

क्षत्रियकाष्ठेर्घटिता भोजमते सुखसम्पदि नौका। अन्ये लघुभिः सुदृढैर्विद्धति जलदुष्पदे नौकाम्।

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 86)

विभिन्नजातिद्वयकाष्ठजाता न श्रेयसे नापि सुखाय नौका। नैषा चिरं तिष्ठति भुज्यते च विभिद्यते वारिणि मज्जते च।

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 86)

लकड़ी (काष्ठ) का प्रथम प्रकार की काष्ठ हल्की, कोमल एवं आसानी से जुड़ जाता है। काष्ठ का दूसरा प्रकार जो हल्का कठोर एवं आसानी से नहीं जुड़ता है।

काष्ठ की तीसरा प्रकार कोमल एवं भारी होता है। काष्ठ का चौथा प्रकार कठोर एवं भारी है।

मिश्रित काष्ठ 2 तरह के गुणों को बताती है।

राजा भोज के अनुसार तेज बहाव वाले जल को पार करने वाली नाव को हल्की एवं कठोर लकड़ी से बनाना चाहिए।

राजा भोज के अनुसार हल्की, कोमल एवं आसानी से जुड़ने वाली की काष्ठ से निर्मित नाव धन एवं प्रसन्नता देती है अर्थात् सफर में सुखदायक होती है।

दो प्रकार की काष्ठ से निर्मित नाव लाभदायक नहीं होती है। वह लंबे समय तक नहीं चलती एवं जल में डूब जाती हैं।

3) समुद्री जहाज में लोहे की कील को बांधना –

न सिन्धुगाद्याऽर्हति लौहबन्धं, तल्लोहकान्तै र्हियते हि लौहम्।

## विपद्यते तेन जलेषु नौका गुणेन बन्धं निजगाद भोजः॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 88)

समुद्री जहाज से लोहे कील को नहीं बांधना चाहिए क्योंकि लोहा चुम्बकीय तरंगों को आकर्षित करता है ऐसा करना हानि पहुँचा सकता है।

4) नाव का वर्गीकरण – अ) सामान्य ब) विशेष

अथ लक्षणानि।

## सामान्यञ्च विशेषश्च नौकाया लक्षणद्वहयम्॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 89)

नौका को 2 भागों में विभाजित किया गया है। सामान्य एवं विशेष नौका



5) सामान्य नौका के अन्य नाम, प्रकार एवं माप –

तत्र सामान्यम्।

राजहस्तमितायामा तत्पाद्परिणाहिनो।

तावदेवोन्नता नौका क्षुद्रेति गदिता बुधैः॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 90)

#### सामान्य नाव के प्रकार -

वह नाव जिसकी लम्बाई एक राजहस्त एवं चौड़ाई लम्बाई की एक चौथाई एवं ऊँचाई चौड़ाई के समान हो वह क्षुद्रा कहलाती है।

# क्षुद्राऽथ मध्यमा भीमा चपला पटलाऽभया। दीर्घा पत्रपुटा चैव गर्भरा मन्वरा तथा॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 92)

दस प्रकार की नाव का उल्लेख है।

क्षुद्रा (अल्पार्थक), मध्यम, भीम, चपला, पटला, अभया, दीर्घा, पत्रपुटा, गर्भरा, मन्थरा। वह नाव जिसकी लम्बाई एक राजहस्त की आधी हो एवं चौड़ाई, लम्बाई की आधी हो एवं ऊँचाई, लम्बाई की एक तिहाई हो मध्यमा कहलाती है।

अतः सार्द्धमितायामा तर्द्ध परिणाहिनी। त्रिभागेणोन्निता नौका मध्यमेति प्रचक्षते॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 91)

नौकादशंकमित्युक्तं राजहस्ताद्यनुक्रमत् एकैकवृद्धेः सार्द्धेश्च विजानीयाद् द्वयं द्वयम्।

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 93)

इन 10 नावों की मापन इकाई को राजहस्त कहते हैं। इन नावों की लम्बाई में क्रमानुसार एकान्तर क्रम में लम्बाई की आधी की वृद्धि एवं चौड़ाई, ऊँचाई दी गई लम्बाई की आधी हो।

6) विशेष नाव –

अथ विशेषः।

दीर्घा चैवोन्नता चेति विशेषे द्विविधा भिदा॥

(युक्ति. कल्प. नौयानयुक्ति 96)

विशेष प्रकार की नाव विशेष नाव लोहे की परतों से तथा ताँबे से बनायी जाती है। ये दो प्रकार की होती है - लंबाई एवं ऊँचाई के अनुसार ।

राजा भोज द्वारा कृत युक्तिकल्पतरु में विशेष नावों के माप एवं नावों पर चित्रकला को भी बताया है। कक्ष वाली नावों के बारे में बताया है। मौसम अनुसार नावों का प्रयोग भी बताया हैं। दीर्घ-पोत में काय अथवा नौका का स्थूल भाग सकरा और लम्बा होता है तथा उन्नत पोत में यह काय ऊँचा होता है। कुटी,कोष्ठ, शालिका, शाला और स्थल इत्यादि विभिन्न प्रकार की केबिनों (कक्षों) की पोत में स्थिति तथा उनकी लम्बाई आदि के आधार पर इन्हें तीन वर्गों में बाटा जाता है।

- 1. राज्य कोष और अश्वों को लाने जाने के लिए प्रयुक्त कुटियाँ
- 2. मध्यमंदिर जिसमें नौकापृष्ठ के मध्यभाग में ही केबिन होते हैं, ऐसे पोत मनोरंजन एवं हास-विलास के लिए प्रयुक्त होते थे।
- 3. अग्रमंदिर इसमें डेक के अग्रभाग में केबिन बने होते थे, इनका प्रयोग युद्ध के लिए किया जाता था।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रचीन भारत में नौका एवं पोत निर्माण का कार्य उच्चकोटि का था तथा इन पोतों के कई प्रकार थे।

#### अभ्यास प्रश्न 🖊

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए।

- 1) युक्तिकल्पतरु यन्थ किसकी कृति है
  - अ) सम्राट अशोक
- ब) सम्राट विक्रमादित्य
- स) राजा भोज
- द) राजा भर्तृहरि
- 2) बिना पहिए वाला जलवाहन कहलाता है
  - अ) बस
- ब) ट्रैन
- स) नाव
- द) इनमें से कोई नहीं
- 3) युक्तिकल्पतरु के अनुसार जहाज निर्माण की काष्ठ (लकड़ी) कितने प्रकार की होती है
  - अ) 4
- ब) 3
- स) 5
- द) 2

### प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

- 1. युक्तिकल्पतरु के अनुसार नाव.....प्रकार की होती है।
- 2. युक्तिकल्पतरु के अनुसार सामान्य नाव......प्रकार की होती है।
- 3. संस्कृत वाड्यय मे महर्षि.....को द्वीप-द्वीपांतरों की यात्रा करने वाला बताया है।

#### प्र.3 निम्नलिखित कथनों के सामने सत्य (√) अथवा असत्य (×) का चिह्न अंकित कीजिए।

- 1. भारत में समुद्रयान और नौकाओं के निर्माण की कला अति प्राचीन रही है।
- 2. ऋग्वेद में समुद्री पोतों का उल्लेख है।
- 3. महाभारत मे यंत्र चालित नाव का वर्णन मिलता है।

#### प्र.4 सही जोड़ी मिलान कीजिए।

कॉलम 'अ'

कॉलम 'ब'

1) सामान्य नौका

क) 2

- 2) विशेष नौका ख) 10
- 3) जहाज निर्माण की काष्ठ ग) 4

# प्र.5 अति लघूत्तरीय प्रश्न

1. विशेष नाव कितने प्रकार की होती है ?

#### प्र.6 लघूत्तरीय प्रश्न

1. ऋग्वेद में वर्णित समुद्रयान, पोत निर्माण का उल्लेख कीजिए।

#### प्र.7 दीर्घत्तरीय प्रश्न

1. युक्तिकल्पतरू में वर्णित जहाज निर्माण के लिए उपयोग की गयी काष्ठ (लकड़ी) के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइए।

# परियोजना कार्य

अपने गुरुजी की सहायता से नौका बनाने का प्रयास कीजिए।

## अध्याय - 7

# शूल्बसूत्र एवं मिति

### अध्ययन बिन्दु

- 7.1 प्रस्तावना
- 7.2 शुल्बसूत्रों के प्रकार
- 7.3 शुल्बसूत्रों का प्रयोग
- 7.4 वेदि, अग्निचिति और मण्डप
- 7.5 दिशाएँ निश्चित करने की पद्धतियाँ
- 7.6 शुल्बसूत्र में प्रयुक्त नाप
- 7.7 शुल्बसूत्रो में दी हुई कृतियाँ
- 7.8 भौमितिक परिकल्पना
- 7.9 क्षेत्रफल प्राप्त करने के सूत्र

#### 7.1 प्रस्तावना –

शुल्ब अर्थात् धागा, रस्सी। रस्सी की सहायता से विभिन्न प्रकार की वेदि अग्निचिति, मण्डप इत्यादि का विन्यास करने की रीतियाँ सूत्ररूप में है जिसे शुल्बसूत्र कहते हैं।

## 7.2 शुल्बसूत्र के प्रकार -

अब तक 8 शुल्बसूत्र ज्ञात किए जा चुके है। कृष्ण यजुर्वेद में 7 शुल्बसूत्र है। बोधायन, आपस्तम्भ, सत्याषाढ, वाधुल, मानव, मैत्रायणी और वाराह शुक्ल यजुर्वेद के अंतगर्त कात्यायन शुल्बसूत्र आठवाँ शुल्बसूत्र है।

इन शुल्बसूत्र में बौधायन शुल्बसूत्र सबसे बड़ा एवं प्राचीन है। मानव शुल्बसूत्र, अन्य शुल्बसूत्रों की तरह सूत्ररूप न होकर मिश्रित है। आपस्तम्भ शुल्बसूत्र के सूत्र बौधायन शुल्बसूत्र के समान ही हैं परन्तु आपस्तम्ब शुल्बसूत्र के अनुसार अग्निचितियों की रचना, ईंटों की व्यवस्था आदि भाग बौधायन शुल्बसूत्र के सूत्रों से भिन्न है। मानव, मैत्रायणी और वाराह शुल्बसूत्र एक जैसे ही हैं। कात्यायन शुल्बसूत्र सबसे छोटा और काल की दृष्टि में अर्वाचीन है। इसमें प्रमुखतः भूमिति की जानकारी है।

## 7.3 शुल्बसूत्रों का प्रयोग

शुल्बसूत्रों में प्रमुखतः यज्ञ, कार्य के लिए वेदि, अग्निचिति आदि की नापतोल, विन्यास की अनेक पद्धितयाँ, इनके निर्माण के लिए ईंटों की रचना आदि की जानकारी दी है। अंगुल पुरुष आदि परिमाण इनका परस्पर सम्बन्ध, वेदि, चिति, मण्डप के विन्यास के लिए साधन जैसे कि रस्सी, बांस, शङ्क (खूटियाँ), भूमिति के सिद्धान्त, अनेक भौमितिक कृतियाँ, ईंटों के आकार, संख्या, अग्निचिति निर्माण के नियम आदि) जानकारी वहाँ दी गई है। शुल्बसूत्र में दी हुई भूमिति के ज्ञानसम्बन्ध की जानकारी उदाहरण द्वारा नीचे स्पष्ट की गई है। अग्निहोत्री के घर में तीन अग्नि कुण्ड हैं गाईपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि, गाईपत्य वृत्ताकार, अहवनीय वर्गाकार और दक्षिणाग्नि अर्थचन्द्रकार यानि अर्थवृत्ताकार होते हैं। तीनों अग्निकुण्डों के क्षेत्रफल समान होना चाहिए।

वृत्त, वर्ग, अर्धवृत्तों के विन्यास की जानकारी दी गई है तथा शुल्बसूत्र के द्वारा वर्ग के समक्षेत्र वृत्त और अर्धवृत्त या वृत्त के समक्षेत्र वर्ग के विन्यास के लिए वर्ग की भुजा और वृत्त की त्रिज्या के सम्बन्ध की जानकारी दी गई है।

वेदि के निर्माण में वेदि के पूर्व और पश्चिम की तरफ होने वाली भुजाएँ परस्पर समांतर होनी चाहिए। इसलिए पूर्व और पश्चिम की तरफ होने वाली भुजाएँ वेदि के मध्य भाग से जाने वाली समिति अक्ष रेखा समकोण में होनी चाहिए। बौधायन शुल्बसूत्र में समकोण की जानकारी एवं पाइथागोरस प्रमेय की जानकारी प्राप्त होती है।

$$(कर्ण)^2 = (लम्ब)^2 + (आधार)^2$$

यज्ञविषयक कला श्रौतसूत्र में दी है और यज्ञ के लिए वेदि, चिति, मंड़प निर्माण का विधान शुल्बसूत्र में दिया है।

## 7.4 वेदि, अग्निचिति और मण्डप -

#### वेदि -

वेदि के तीन प्रमुख प्रकार होते हैं। यजमान की वेदि प्राग्वंश मण्डप में होती है। इसे दार्शिति वेदि भी कहते हैं। क्योंकि दर्शपूर्णमास यज्ञ में इसका उपयोग करते हैं। उत्तर वेदि यज्ञक्षेत्र के पूर्व की ओर होती है और तीसरी महावेदि।

#### सारणी 7.1

	बौधायन शुल्बसूत्र			आपस्तंब शुल्बसूत्र				मानव शुल्बसूत्र					
वेदि का	प्राची	पूर्व	पश्चिम	सूत्र	प्राची	पूर्व	पश्चिम	सूत्र	प्राची	पूर्व	पश्चिम	सूत्र	
नाम दर्शपूर्ण मास की यजमान वेदि	96	48	64	1.7	144	72	96	5.1- 5	96	48	64	10. 1.1 .4	वेदिकी नापें बदल सकती है।
पशुबंध वेदि	180	120	150	1.7 6	144	72	96	6.15	144	72	120	10. 1.2 .4	
<b>रथ</b> के नाम की वेदि	188	86	104	1.7 7	188	86	104	6.7- 8	188	86	104	10. 1.2 .1	
पैतृकी भुजा 10 पद, 5 अं, 31 तिल विदि 155 अं, तिल वर्गाकृति			1.82	भुजा अंगुल	120	6.19	भुजा अंगुल	120		10. 1.2 .6	कोण दिशाओं की तरफ रखते हैं।		

सारणी – 7.1 वेदियों के माप (अंगुलों में)

1 अंगुल = 1.9 सेमी

#### अग्निचिति –

सोमयज्ञ में अलग – अलग प्रकार की अग्निचिति बनाते हैं। श्येनचिति, अलजचिति और कंकचिति पक्षियों के आकार की होती हैं।

त्रिभुजाकार (प्रउग), समभुज चतुर्भुज के आकार की, द्रोण के आकार की, रथ के पहिए के आकार की वृत्ताकार, कछुए के आकार की चिति।

#### सारणी 7.2

शुल्बसूत्र	आत्मा			शीर्ष			पंख			पुच्छ		
	लम्बाई	चौड़ाई	कोण	लम्बाई	चौड़ाई	कोण	लम्बाई	चौड़ाई	बांक	पश्चिम	पूर्व	चौड़ाई
										भुजा	भुजा	
बौ.शु.सू	240	150	45	82 ½	60	30	210	150	90	240	60	90
4.26-36												
बौ.शु.सू.	240	144	48	54	48	24	252	162	72	192	48	72
4.44-67												
मा.शु.सू.	210	120	30	<i>7</i> 5	60	30	240	150	108	240	60	90
10.3.5.1												
-6												
आ.शु.सू	240	180	60	60	60	30	187	120		180	60	120
15.1-25												
आ.शु.सू	240	180	60	60	60	30	247	120		240	60	90
18.1-24							1/2					

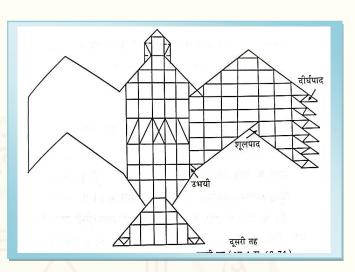
सारणी – 7.2 श्येनचिति का माप (अंगुलों में)

#### चिति – निर्माण -

परवर्ती वैदिक वास्तुकला के अध्ययन - प्रसंग में चिति ( अग्निचिति अथवा वेदि ) के निर्माण पर विचार कर लेना भी अति प्रासंगिक होगा । स्तेला कैमरिश का कथन है कि भारतीय धार्मिक स्थापत्य के प्राचीनतम स्मारक वैदिक वेदिकाएँ मानी जा सकती हैं । वे धार्मिक निर्माण के प्रथम भारतीय जन - प्रयास का प्रतिनिधित्व करती हैं । चिति ( चित् + किन् ) का शाब्दिक अर्थ चुना हुआ , समुच्चय , पुञ्ज , टाल अथवा टीला होता है । इसका प्रयोग वेदी ( विद् + इन् ) अथवा वेदिका ( वेदी + कन् + टाप ) के अर्थ में भी हुआ है , जो धार्मिक कृत्यों के सम्पादन के उद्देश्य से निर्मित होते थे । इष्टका - निर्मित विभिन्न कोटि की चितियों के वर्णन तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त होता हैं । आपस्तम्ब , कात्यायन एवं बौधायन शुल्बसूत्र में ईटों के आकार - प्रकार का भी निरूपण किया है , जिनके द्वारा इनका निर्माण सम्पन्न किया जाता था। इन चितियों का

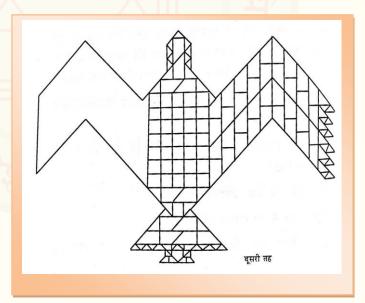
स्वरूप पशु पक्षी अथवा उन आकारों के आदर्श द्वारा निर्धारित होता था , जिनसे वैदिक जन परिचित हुआ करते थे । पशु - पिक्षयों के रूप में सादृश्य रखनेवाली निम्नलिखित चितियाँ उल्लेखनीय हो जाती हैं —

इयेन – चिति : इस चिति
 की आकृति इयेन (इये + झन्)
 के सदृश होती थी । इसका
 निर्माण स्वर्ग - प्राप्ति की
 अभिलाषा से किया जाता था
 (सुवर्गकामः)। तैत्तिरीय
 संहिता के अनुसार इसका

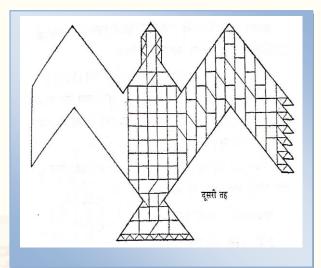


निर्माता व्यक्ति साक्षात् रयेन (बाज़) का रूप धारण कर स्वर्गलोक की ओर उड़ जाता है (रयेन एव भूत्वा सुवर्ग लोकं पतित)।

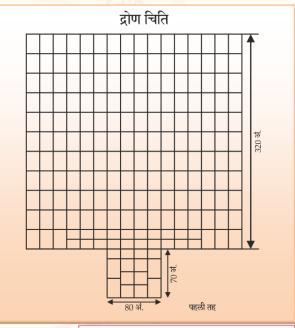
2. कड्क - चिति : कड्क (कड्क + अच्) से तात्पर्य सारस से है। अतएव इस कोटि की चिति की आकृति इसी पक्षी के सहश रही होगी। तैत्तिरीय संहिता के अनुसार इसका निर्माता व्यक्ति लोकोत्तर में श्रेष्ठ स्थान को प्राप्त करता है (कड्कचितं चिन्वीत यः कामयेत)

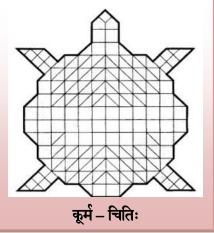


3. अलज – चिति : (अल + जन + ङ) से तात्पर्य बगुला पक्षी है। इस प्रकार की चिति का स्वरूप इसी पक्षी के समान रहा होगा। इसके निर्माता को परम शक्ति एवं विलक्षण यश की प्राप्ति होती है (अलज - चितं चिन्वीत चतुःसीतं प्रतिष्ठाकामः)।

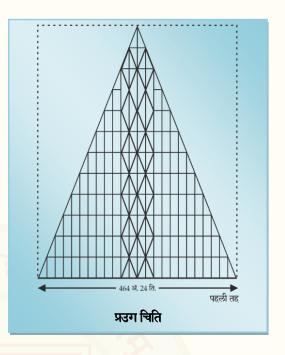


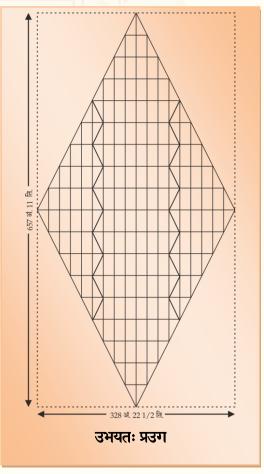
- 4. द्रोण चिति: (द्रुण + अच) से अभिप्राय काक से है। इस कोटि की चिति की आकृति कौवे के सददा हुआ करती थी। इसका निर्माण प्रभूत धनधान्य की प्राप्ति के निमित्त हुआ करता था (द्रोणचितं चिन्वीतान्नकामो)।
  - **क्षेत्रफल** = 320x320 + 70x80
  - = 102400 + 5600
  - = 108000 चौ.अं = 7½ चौ.पु.
- 5. कूर्म चिति: इसका स्वरूप कछुए के समान हुआ करता था । चितियों का स्वरूप कभी-कभी वैदिक जनों के लोकप्रिय प्रतीकों एवं अपने जीवन में अभ्यस्त आकृतियों के अनुरूप होता था ।





- प्रउग चिति इसकी आकृति समबाहु
  त्रिभुज की भाँति होती थी । इसका निर्माण
  शत्रु विनाश के अभिप्राय से किया जाता था
  (प्रउगन्वितं चिन्वीत भातृव्यवान्) ।
- 2. उभयतः प्रउग चिति दो समबाहु त्रिभुजों को अपने आधार पर मिला देने पर जो आकृति बनती है , उसी के सदृश इस चिति का स्वरूप हुआ करता था। इसके भी निर्माण का उद्देश्य शत्रु विनाश था (उभयतः प्रउगं चिन्वीत यः कामयेत प्रजातान्भातृव्यानुदेय)
- 3. परिचाय्य चिति परिचाय्य (परि + चि + ण्यत् ) का शाब्दिक अर्थ ' यज्ञाग्नि ' अथवा. 'कुण्ड में स्थापित करना होता है। इस शब्द से ही ऐसी वेदिका का तात्पर्य निकलता है , जहाँ धार्मिक कृत्यों का सम्पादन होता था। इस चिति का स्वरूप एक केन्द्रीय छह वृत्तों के आकार तुल्य हुआ करता था। तैत्तिरीय संहिता के अनुसार इसका निर्माता अधिक ग्राम विजय की अभिलाषा रखता था (परिचाय्यं चिन्वीत ग्रामकामो)।

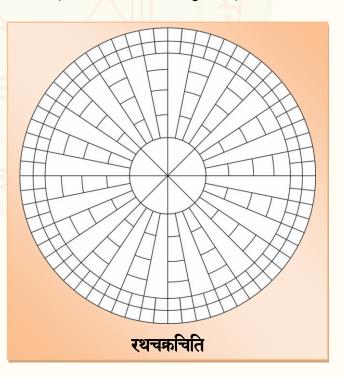




4. समृद्ध - चिति - समृद्ध ( सम् + ऊह + ण्यत् ) का शाब्दिक अर्थ ' एक प्रकार की यज्ञाग्नि ' होता है । इस शब्द से कर्मकाण्ड के कार्यान्विति - हेतु निर्मित वेदी का भाव अभिव्यञ्जित होता है । यह वेदिका भी गोलाकार होती थी , जो गीली मिट्टी अथवा ईंटों द्वारा निर्मित थी । इसके विन्यास का अभिप्राय पशु - संख्या की अभिवृद्धि थी ( समृद्धं चिन्वीत पशुकामः )।

ऋग्वैदिक धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन में निम्नलिखित चितियों का भी स्थान महत्त्वपूर्ण था।

- 1. **३मशानिचिति** सम्भव है कि इसकी भी आकृति परिमण्डलाकार (गोल) रही हो , क्योंकि ३मशानों की आकृति बहुधा गोल हुआ करती थी । इस पर कृत्य सम्पादन पितृसद्म का प्रदायक समझा जाता था ( **३मशानिचतं चिन्वीत यः कामयेत पितृलोकः**) ।
- 2. **छन्दिचिति** छन्द का शाब्दिक अर्थ ' प्रसन्न करना ' अथवा ' तुष्ट करना होता है । यह चिति गोधन की अभिवृद्धि की प्रदायिका थी ( **छन्दिश्चतं चिन्वीत पशुकामः** )।
- 3. रथचकिचिति : इसकी आकृति रथ के पिहये की भाँति होती थी। यह दो प्रकार की होती थी। प्रथम प्रकार की आकृति में रथ की तीलियाँ अथवा अर दिखाये जाते थे। परन्तु द्वितीय कोटि 3 में इनका अभाव रहता था। तैत्तिरीय संहिता के अनुसार (जिसमें उक्त सभी प्रकार की



चितियों की सूची प्राप्य है) इस चिति का उद्देश्य वज्र की भाँति शत्रुओं का उच्छेदन था (

रथचक्रचितं चिन्वीत भातृव्यवान् वज्रो वै रथो वज्रमेव भ्रातृव्येभ्यः प्रहरित । 'चैत्य ( चित्य + अण् ) शब्द का सम्बन्ध चिति शब्द से लगता है । चैत्य का प्रयोग स्तूप, स्मारक, समाधि प्रस्तर, यज्ञ - मण्डप, धार्मिक पूजा का स्थान, वेदि एवं देवालय आदि अर्थों में हुआ है। अतएव चैत्य से सम्बन्धित धार्मिक विश्वासों का सम्बन्ध वैदिक चिति के विषय में प्रचलित मान्यताओं के साथ निर्दिष्ट करना यत्किश्चित् स्वाभाविक - सा लगता है।

#### मण्डप -

मण्डप बाँस या कपड़े का बनाते हैं। सोमयज्ञ के लिए 5 मण्डपों की आवश्यकता होती है।

1) प्राग्वंश मण्डप – यह क्षेत्र के पश्चिम की तरफ यह मण्डप होता है। इसके छत का धरण स्वरुप बांस पूर्व-पश्चिम दिशाओं की तरफ होता है। बांस का अगला सिर पूर्व की तरफ रखते हैं।

इसलिए इसे प्राग्वंश मण्डप कहते हैं।

इसकी पूर्व - पश्चिम लम्बाई 16 प्रकम (480 अंगुल, 9.12 मी.) या 12 प्रकम (6.84 मी.) और दक्षिणोत्तर चौड़ाई 12 या 10 प्रकम (6.84 मी. या 5.70 मी.) रखते हैं। मानव शुल्बसूत्र के अनुसार यह मण्डप वर्गाकार है और इसके भुजाओं की लम्बाई 10 अरिल (240 अंगुल, 4.56 मी.) होती है। प्राग्वंश मण्डप की पूर्व सीमा महावेदि के पश्चिम भुजा से 90 अंगुल (1.71 मी.) दूरी पर रखते हैं।

2) उद्ग्वंश मण्डप या सदस — यह यज्ञ के ऋत्विजों का प्रमुख कार्य स्थान होता है इनकी धिष्ण्याएँ यहाँ होती है। यह मण्डप प्राग्वंश मण्डप के पूर्व की तरफ और महावेदि की पश्चिम भुजा के पास होता है। इसके छत का धर उत्तर दक्षिण रखते हैं और अगला सिर उत्तर की तरफ होने की वजह से इसे उद्ग्वंश मण्डप कहते हैं।

इसकी दक्षिणोत्तर लम्बाई 27 अरित (648 अंगुल, 12.39 मी.) या 18 अरित (432 अंगुल, 8.21 मी.) और पूर्व - पश्चिम चौड़ाई 10 पद (150 अंगुल, 2.85 मी.) या 10 प्रक्रम (300 अंगुल, 5.70 मी.) रखते हैं। यह नाप बौधायन शुल्बसूत्र के अनुसार है। आपस्तम्ब शुल्बसूत्र के अनुसार सदस की लम्बाई 27 या 18 अरित और चौड़ाई 9 अरिल (216 अंगुल,

4.90 मी.) होती है। मानव शुल्बसूत्र में दी हुई ना आपस्तंब शुल्बसूत्र के अनुसार हैं। सदस की पश्चिम सीमा महावेदि की पश्चिम भुजा से 1 प्रक्रम (30 अंगुल, 57 से.मी.) दूरी पर होती है। इसे पूर्व और पश्चिम की ओर दरवाजा रखते हैं। इस मण्डप के पूर्व और पश्चिम की तरफ होने वाले खंभे ऊँचाई में छोटे होते हैं। इतने छोटे रखते हैं कि छत जमीन से 64 अंगुल ऊँचाई पर होगा। जिस यजमान को अच्छी वर्षा होने की अपेक्षा है इसके सोमयज्ञ में छत की ऊँचाई इसके नाभि तक (64 अंगुल) रखें ऐसा नियम दिया है।

3) **हिवर्धान मण्डप** – सोम वल्ली और अन्य हव्यद्रव्य दो गाडियों में रखकर वे इस मण्डप में खड़ी करते हैं। इन गाडियों को हिवर्धान कहते हैं।

सदस के पूर्व सीमा से हिवर्धान मण्डप की पश्चिम सीमा 4 प्रक्रम (120 अंगुल, 2.28 मी.) दूरी पर होती है। यह मण्डप वर्गाकार होकर इसकी भुजाओं की लम्बाई 10 या 12 प्रक्रम होती है। हिवर्धान मण्डप की पूर्व सीमा से उत्तरवेदि 6/2 प्रक्रम (195 अंगुल, 3.70 मी.) दूरी पर होती है।

4) आग्निधीय और मार्जालीय मण्डप – हविर्धान मण्डप के उत्तर की तरफ आग्निधीय और दक्षिण की तरफ मार्जलीय मण्डप होता हैं।

इन मण्डपों में एक घिष्ण्या होती है। आग्निघ्रीय मण्डप का दरवाजा दक्षिण की तरफ और मार्जालीय का उत्तर की तरफ रखते हैं। दोनों मण्डप वर्गाकार होकर उनकी भुजाएँ 5 अरिल (120 अंगुल, 2.28 मी.) लम्बी होती है मानव शुल्बसूत्र के अनुसार मार्जालीय मण्डप नहीं होता है और आग्निद्रीय वर्गाकार मण्डप की लम्बाई 6 अरिल (144 अंगुल, 2.73 मी.) होती है। यज्ञ क्षेत्र में चात्वाल और उपरव होते हैं।

#### चात्वाल : -

उत्तर वेदि के कुछ दूरी पर गड़ढा खोदते हैं। उत्तर वेदि के निर्मित के लिये मिट्टी इस गड़ढे से लेते हैं। यह वर्गाकार होकर उसकी लम्बाई एक शम्या (32 अंगुल, 60.8 से.मी.) या 36 अंगुल होती है। • उपरव : - हिवर्धान मण्डप में प्राची के दक्षिण की तरफ , प्राची के एक प्रक्रम दूरी पर उपरव के गड्ढे खोदते हैं । उपरव के गड्ढे 24 अंगुल लम्बाई के वर्गाकार के कोणों पर 12 अंगुल व्यास के खोदते हैं । वे जमीन के नीचे नाली से जोड़ते हैं । यह स्थान है जहाँ सोमवल्ली से सोमरस की निर्मित करते हैं । मानव शुल्बसूत्र के अनुसार इन गड्ढों का व्यास 9 अंगुल भी रख सकते हैं ।

सारणी **–** 7.3 मण्डप

	बौधायन शुल्बसूत्र	आपस्तंब शुल्बसूत्र	मानव शुल्बसूत्र	हविर्घान मण्डप
प्राग्वंश मण्डप	16 प्रक्रम लम्बा, 12		10 अरिल	1) सदस से हविर्घानमण्डप
	प्रक्रम चौड़ा		वर्गाकार	पूर्व की तरु 4 प्रक्रम दूरी पर
	आयताकार (1.88)		(10.1.3.1)	होता है (बौ.शु.सू. 1.96,
सद्स मण्डप	10 पद पूर्व-पश्चिम,	9 अरिल, पूर्व-पश्चिम	9 अरिल, पूर्व -	मा.शु.सू. 10.1.3.2)
	<u> 27</u> अरिल उत्तर-	27 अरिल, उत्तर-	पश्चिम	2) आहवनीय अग्नि से
	दक्षिण (1.93-94)	दक्षिण (7.1.3)	(10.1.3.2) 27	महावेदी छः प्रक्रम दूरी पर
6	या 10 प्रकम x 18		अरिल, उत्तर –	होती है। (बौ.शु.सू. 1.91)
	अर्रात्न (1.95)		दक्षिण	<ol> <li>महावेदि से सदस का</li> <li>अन्तर 1 प्रक्रम होता है।</li> </ol>
			(10.1.3.6)	(बौ.शु.सू. 1.92)
हविर्धान	10 या 12 प्रक्रम		12प्रक्रम वर्गाकृति	(भा.सु.सू. 1.92) 4) सदस के पूर्वार्ध से दो
मण्डप	वर्गाकृति (1.96)		(10.1.3.2)	प्रक्रम दूरी पर दो प्रादेश व्यास
			(10.1.3.2) 6 अरिल वर्गाकार	की और दो प्रादेश का अन्तर
आग्निध्रीय 	5 अरिल वर्गाकार			होने वाली धिष्णयाएँ रखते हैं।
मण्डप	(1.103)	You	(10.1.3.3)	
मार्जालीय	5 अरिल वर्गाकार			
मण्डप	(1.104-105)			

#### 7.5 श्रोत-अग्नि

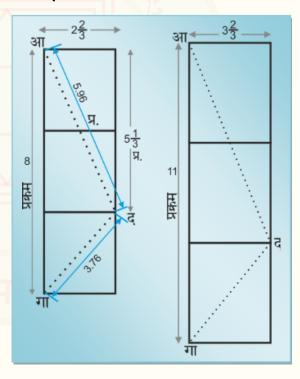
अग्निहोत्री के घर में तीन अग्नि नित्यस्वरूप होते हैं। ये तीन अग्नि कुण्ड हैं: गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि। गार्हपत्य वृत्ताकार, आहवनीय वर्गाकार और दक्षिणाग्नि अर्धचन्द्रकार यानि अर्धवृत्ताकार होते हैं। तीनों अग्निकुण्ड के क्षेत्रफल एक ही होने चाहिये। वृत्त, वर्ग और अर्धवृत्तों का विन्यास जमीन पर किस तरह करें इसकी जानकारी तो शुल्बसूत्र में

मिलती है, किन्तु वर्ग के समक्षेत्र वृत्त और अर्धवृत्त या वृत्त के समक्षेत्र वर्ग के विन्यास के लिये वर्ग की भुजा और वृत्त की त्रिज्या का सम्बन्ध इसकी भी जानकारी शुल्बसूत्र देते हैं। वेदि का जमीन पर विन्यास करते समय वेदि के पूर्व और पश्चिम की तरफ होने वाली भुजाएँ परस्पर को समान्तर होनी चाहिये।



# गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि के बीच की दूरी

वेदि का जमीन पर विन्यास करते समय वेदि के पूर्व और पश्चिम की तरफ होने वाली भुजाएँ परस्पर को समान्तर होनी चाहिये। इसिलये पूर्व और पश्चिम की तरफ होने वाली भुजाएँ वेदि के मध्य भाग से जाने वाली समिमित अक्ष रेखा को समकोण में होनी चाहिये। इसके लिये जमीन पर समकोण के विन्यास की जानकारी आवश्यक है। पाइथागोरस के बहुत प्रसिद्ध सिद्धान्त की जानकारी शुल्बसूत्र में पाई जाती है। इस



सिद्धान्त का प्रथम उल्लेख बौधायन शुल्बसूत्र में किया है , इसिलये उसे बौधायन सिद्धान्त कहना चाहिये । शुल्बसूत्र के अध्ययन के बल पर , श्रौतसूत्र काल में , भारतीयों के भूमिति विषयक ज्ञान की उन्नत अवस्था का परिचय प्राप्त होता है ।

# आयामतृतीयेन त्रीणि चतुरश्राणि अनूचीनानि कारयेद् । अपरस्योत्तरस्या एंश्रोण्यां गार्हपत्यस्तस्यैव दक्षिणे एंसेऽन्वाहार्यपचन : पूर्वस्योत्तरेऽ एंस आहवनीय इति ।

### बौधायन शुल्बसूत्र (1.67)

गाईपत्य से आहवनीय अग्नि की दूरी की एक तिहाई लम्बी भुजा को इस प्रकार लेते हैं कि यह एक- दूसरे के सम्पर्क में हो , ऐसे तीन वर्ग खींचते हैं । भुजा के पश्चिम की तरफ के वर्ग के उत्तर श्रोणी पर गाईपत्य अग्नि का स्थान होता है । इसी वर्ग के दक्षिण अंस पर दक्षिणाग्नि (अन्वाहार्यपचन) होता है । एवं के भुजा पूर्व की तरफ के वर्ग के उत्तर अंस पर आहवनीय ( अग्नि का स्थान ) होता है।

वेदों में अनेक प्रकार के यज्ञों का वर्णन मिलता है, किन्तु उनमें पाँच यज्ञ ही प्रधान माने गये हैं-

1. अग्निहोत्रम् 2. दर्शपूर्णमास 3. चातुर्मास्य 4. पशुयाग 5. सोमयज्ञ

#### 1. अग्निहोत्र यज्ञ

अग्निहोत्र एक वैदिक यज्ञ है। इस यज्ञ का वर्णन यजुर्वेद में मिलता प्रात:कालीन और सायंकालीन संध्याओं के उपरांत अग्निहोत्र करके पूजा से उठने का विधान है। यज्ञ के लिए जंगल से सिमधा लाकर 'शुल्बसूत्र' (ज्यामिति) के अनुसार यज्ञ की वेदि का निर्माण कर अग्निहोत्र करने की परम्परा है।

#### 2. दर्शपूर्णमास यज्ञ

दर्शपूर्णमास यज्ञ हिन्दू धर्म में किये जाने वाला एक धार्मिक अनुष्ठान है। अमावस्या और पूर्णिमा को होने वाले यज्ञ को दर्श और पूर्णमास कहते हैं। इस यज्ञ का अधिकार सपत्नीक होता है। इस यज्ञ का अनुष्ठान आजीवन करना चाहिए। यदि कोई जीवन भर करने में असमर्थ है तो 30 वर्ष तक करना चाहिए।

### 3. चातुर्मास्य यज्ञ

चार महीनों में होने वाला एक वैदिक यज्ञ है, जो एक प्रकार का पौराणिक व्रत है, जिसे चौमासा भी कहा जाता है। कात्यायन श्रौतसूत्र में इसके महत्व के बारे में बताया गया है। फाल्गुन से इसका आरंभ होने की बात कही गई है। इसका आरंभ फाल्गुन, चैत्र या वैशाख की पूर्णिमा से हो सकता है और आषाढ़ शुक्क पक्ष द्वादशी या पूर्णिमा पर इसका उद्यापन करने का विधान है। इस अवसर पर चार पर्व हैं- वैश्वदेव, वरुणधास, शाकमेघ और सुनाशीरीय। पुराणों में इस व्रत के महत्व के बारे में विस्तारपूर्वक बताया गया है।

#### 4. पशु यज्ञ

प्रति वर्ष वर्षा ऋतु में या दक्षिणायन या उत्तरायण में संक्रान्ति के दिन एक बार जो पशु-याग किया जाता है, उसे निरूढ पशु यज्ञ कहते हैं।

#### 5. सोम यज्ञ

सोमलता द्वारा जो यज्ञ किया जाता है, उसे सोम यज्ञ कहते हैं। यह वसन्त में होता है। यह यज्ञ एक ही दिन में पूर्ण होता है। इस यज्ञ में 16 ऋत्विक ब्राह्मण होते हैं। अमावस्या और पूर्णमा को होने वाले यज्ञ को दर्श और पूर्णमास कहते हैं! इस यज्ञ का अधिकार सपत्नीक को होता है। इस यज्ञ का अनुष्ठान आजीवन करना चाहिए। यदि कोई जीवन भर करने में असमर्थ है तो 30 वर्ष तक करना चाहिए।

### 7.5 दिशाएँ निश्चित करने की पद्धतियाँ -

## 1) सूर्य की सहायता से दिशाएँ निश्चित करना -

यज्ञ मण्डप बनाने के पहले दिशा का ज्ञान होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है।प्राचीन कात्यायन शुल्बसूत्र में प्राची एवं उदिची साधन कि किया माध्यम सही दिशा प्राप्त ज्ञात करते हैं।

समे शकुं निखाय शङ्कसम्मितया रज्ज्वा मण्डलं परिलिख्य यत्र

लेखयोः शवय्रच्छाया निपतित तत्र शङ्कू निहन्ति सा प्राची ॥

( कात्यायन शुल्बसूत्र 1.2)

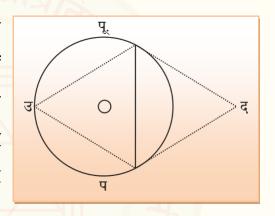
नोट: पूर्व इत्यादि दिशायें निश्चित करने के लिये जहाँ शंकु रखने की वह जगह समतल होनी चाहिये। शंकु सीधा, वृत्ताकार छेद का और नौक होता है। वह 18 अंगुल लम्बा लेते हैं। नीचे का छ: अंगुल भाग जमीन में गाढ़ते हैं और अणिदार नोक जमीन के ऊपर 12 अंगुल ऊँचा होता है। वृत्त की त्रिज्या 12 अंगुल लें।

## तदन्तरं रज्ज्वाऽभ्यस्य पाशौ कृत्वा शङ्कोः पाशौ प्रतिमुच्य

# दक्षिणायम्य मध्ये शङ्कुमेवमुत्तरतः सोदीची ॥

(कात्यायनशुल्बसूत्र 1.3)

इसके बाद दोगुनी लम्बी (24 अंगुल) रस्सी लेकर इसके दोनों सिरों पर गाँठ बाँधे। दोनों खूंटियों को रस्सी के सिरे से बाँधकर इसे मध्य चिह्न से दक्षिण की तरफ खीचें। जहाँ मध्य बिन्दु आता है वहाँ खूंटी ठोकें,यह दक्षिण दिशा ऐसी रस्सी उत्तर की तरफ खीचें और वहाँ उत्तर दिशा निश्चित करें।



इस रीति के लिए लकड़ी अथवा हाथी दाँत का शंकु बनाते हैं। शंकु समतल जगह पर आधी लम्बाई तक जमीन में गाढ़ते हैं। शंकु की जमीन के उपर जितनी लम्बाई हो उतनी लम्बी रस्सी लेकर और शंकु केन्द्र स्थान से लेकर जमीन पर वृत्त खींचते हैं। शंकु का अग्र भाग नोकदार होता है। सूर्योदय से मध्याह काल तक शंकु की छाया कमशः कम होने लगती है शंकु के अग्र भाग की छाया जहाँ वृत्त को स्पर्श करती है वहाँ खूंटी लगाते हैं। यह पश्चिम दिशा की तरफ होती है। मध्याह से शाम तक शंकु की छाया कमशः बढ़ती जाती है। शंकु के नोकदार अग्र की छाया जहाँ वृत्त को स्पर्श करती है वहाँ दूसरी खूंटी रखते है यह पूर्व दिशा होती है।

#### 2) नक्षत्रों द्वारा दिशाएँ निश्चित करने की पद्धति -

कृत्तिका, श्रवण और पुष्य नक्षत्र पूर्व दिशा की तरफ होते हैं। क्षितिज से एक युग (86 अंगुल, 1.63 मी) उंचाई पर जब नक्षत्र आता है तब इनकी सहायता से पूर्व दिशा निश्चित करते

हैं। मानव शुल्बसूत्र के अनुसार चित्रा और स्वाती नक्षत्रों में जो अन्तर है इसका मध्यबिन्दु पूर्व दिशा दिखाता है।

## 7.6 शुल्बसूत्र में प्रयुक्त माप -

1 अणूक = 30 अंगुल, 1 उर्वस्थि = 20 अंगुल

1 नामि = 64 अंगुल, 1 आस्य = 96 अंगुल

1 पिशिल = 12 अंगुल, 1 कृष्णल = 3 भव

 $1 \text{ HIV} = 3 \text{ कृष्णल,} \qquad 1 निष्क = 4 कृष्णल$ 

1 अर्व = 6 अंगुल

# 7.7 शुल्बसूत्रों में दी हुई कृतियाँ -

बौधायन, मानव, आपस्तम्ब और कात्यायन शुल्बसूत्रों में प्रमाण क्षेत्रफलों की सरल रेखाकृतियों के विन्यास के लिए अलग – अलग भौमितिक कृतियाँ दी हैं। सारणी

#### 7.8 भौमितिक परिकल्पना -

1) रस्सी का विभाग करना –

# प्रमाणमात्रं.... रज्जुमुभयतः पाशां करोति।

आपस्तम्ब शुल्वसूत्र (1.13)

रस्सी के दोनों सिरों को मध्य बिन्दु पर ले जाने पर रस्सी के चार विभाग होते हैं।

2) वृत्त का विभाग करना –

वृत्त के व्यास की सहायता से 6,8,12 समविभाग करना शुल्बसूत्रों में बताया गया है वृत्त में समकेन्द्रित एक छोटा वृत्त खींचकर शेष भाग में समविभाग कर सकते हैं। (बौ.शु.सूत्र 2.74-77)

- 3) प्रमाण वर्ग के समक्षेत्र वर्ग विभागों की संख्या उस वर्ग के भुजाओं के विभागों के वर्ग के बराबर होती है। बौधायन शुल्बसूत्र (1.4 6-47) में तृतीयकरणी और त्रिकरणी प्राप्त करने के लिए बौधायन सिद्धान्त का प्रयोग किया है।
- 4) आयत अथवा वर्ग का कर्ण इसके समान विभाग करता है। वर्ग का समक्षेत्र आयत खीचने के लिए इस परिकल्पना का उपयोग किया है। (बौ.शु.सू. 1.52)
- 5) वर्ग के दो कर्णों से समक्षेत्र और समरूप चार विभाग होते है और आयत के दो कर्णों के सामने वाले विभाग समक्षेत्र और समरूप होते हैं। बौधायन शुल्बसूत्र के सूत्र 4.4 में प्रमाण वर्ग ईटों के आधे और एक चौथाई क्षेत्रफल की ईटें बनाने के लिए इस परिकल्पना का आधार लिया है।
- 6) समचतुर्भुज के कण समकोण में काटते हैं। इस परिकल्पना के आधार पर प्रउग चिति का विन्यास करते हैं। (बौ.शू.सू. 4.111.122)
- 7) वर्ग के कोण समकोण में काटते हैं। पैतृकी वेदि के सिर मुख्य दिशाओं की तरफ लाने के लिए इस परिकल्पना की सहायता ली गई। (मा.शु.सू. 10.1.26-7)
- 8) त्रिभुज का समरूप और समक्षेत्र विभाग करने के लिए इसके भुजाओं को समान भागों में विभाजन करें और उन्हें जोड़ दें। बौधायन शुल्बसूत्र (8.4) में रमशान चिति के ईटों की रचना में प्रयोग हुआ है।
- 9) समिद्धबाहु त्रिभुज का शीर्ष बिन्दु और आधार का मध्य बिन्दु जोड़ने वाली लम्ब रेखा उसके दो समरूप और समक्षेत्र विभाग करती है। अष्टमी ईंट 24 x 24 वर्ग अंगुल क्षेत्रफल के 1/8 क्षेत्रफल होने वाली ईंट बनाने के लिए इस कल्पना का उपयोग हुआ है।
- 10) समद्विबाहु त्रिभुज का शीर्ष बिन्दु और आधार का मध्यबिन्दु जोड़ने वाली रेखा आधार का लम्ब रूप होती हैं।
- 11) वर्ग की भुजा का मध्यबिन्दु और सामने वाली भुजा के कोण जोड़कर होने वाले त्रिभुज का क्षेत्रफल वर्ग के क्षेत्रफल का आधे क्षेत्रफल का होता है।

चतुरस्त्रं प्रउगं चिकीर्षन्याविचकीर्षेद् द्विस्तावतीं भूमिं समचतुरस्त्रां कृत्वा पूर्वस्याः करण्या मध्ये शङ्कं निहन्यात् तिस्मिन्पाशौ प्रतिमुच्य दक्षिणोत्तरयोः दिक्षणोत्तरयोः श्रोण्योर्निपातयेत् बिहः स्पन्द्यमपच्छिन्द्यात्।

बौ.शु.सूत्र (1.56)

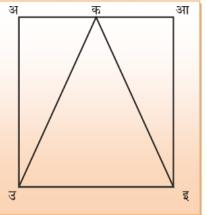
#### व्याख्या -

वर्ग का (समक्षेत्र) त्रिभुज करना हो तो जिस क्षेत्रफल का त्रिभुज खींचना है उससे दुगुने क्षेत्रफल का वर्ग का विन्यास करें। उसके पूर्व भुजा के मध्य बिन्दु पर खूंटी को रस्सी के सिरे को बाँधकर रस्सी दक्षिण और उत्तर श्रोणियों तक रखें। रस्सी के बाहर का भाग निकाल लें। (वर्ग अ आ ई उ का क्षेत्रफल प्रमाण त्रिभुज के क्षेत्रफल से दुगुना है।

12) वर्ग की भुजाओं के मध्यबिन्दु जोड़कर बनने वाले का क्षेत्रफल प्रथम वर्ग के क्षेत्रफल का

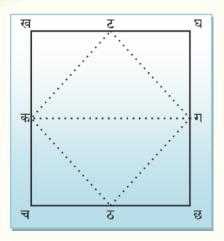
आधा होता है।

चतुरस्रमुभयतः प्रउगं चिकीर्षन्याविचकीर्षेद् द्विस्तावतीं भूमिं दीर्घचतुरस्रां कृत्वा पूर्वस्या करण्यामध्ये शङ्कुं निह्न्यात् तिस्मन् पाशौ प्रतिमुच्य दिक्षणोत्तरयोर्निपातयेत् बहिः स्पन्दां अपच्छिन्द्यात् एतेनापरं प्रउगं व्याख्यातम् ॥



(बौ.शु.सू. 1.57)

वर्ग का (समक्षेत्र) समचतुर्भुज करना हो, तो जिस क्षेत्रफल का चतुर्भुज का विन्यास करना है उससे दुगुना क्षेत्रफल का आयत निकालें और पूर्व की भुजा के मध्य बिन्दु पर खूंटी ठोकें। इस रस्सी के सिरे बाँध कर दक्षिण और उत्तर श्रोणियों तक रखें। (दूसरे वर्ग में इस रीति का उपयोग करें।) रिस्सियों के बाहर का भाग निकाल दें। इसी



से दूसरे प्रकार के प्रउग के (समभुज चतुर्भुज के) विन्यास की पद्धित कही गई।

- 13) आयत की भुजाओं के मध्यबिन्दु जोड़कर बनने वाले समचतुर्भुज का क्षेत्रफल आयत के क्षेत्रफल का आधा होता है। प्रउग चिति के विन्यास के लिए इसका प्रयोग हुआ है।
- 14) समिद्रभुज समलम्ब चतुर्भुज और आयत का आधार और लम्बरूप उंचाई एक होगी तो वे समक्षेत्र होते हैं।

अध्यर्धेष्टकां चतुर्भिः परिगृण्हीयादर्धव्यायामेन द्वाभ्यामरिक्भयां अरिल सविशेषेणेति॥ (बौ.शु.सू. 4.89)

#### व्याख्या –

चतुर्भुज अध्यर्धा ईंट लें। (उसकी एक बाजू) अर्धव्यायाम (48 अंगुल) दो भुजाऐं एक अरिक (24 अंगुल) (और चौथी बाजू) अरिक की सिवशेष ( $24 \times \sqrt{2} = 33$  अंगुल 32 तिल) लम्बी होती हैं।

- 15) प्रमाण आयत के 2 समरुप समक्षेत्र विभाग आयत के सामने वाले कोणों से समान दूरी पर होने वाले बिन्दु जोड़कर प्राप्त होते हैं।
- 16) दो समकोण त्रिभुजों में समकोण की संलग्न भुजाएँ समलम्बाई की होगी तो वे त्रिभुज समरूप और समक्षेत्र होते हैं।
- 17) वृत्त के समायोजित बड़े वर्ग के कोणबिन्दु वृत्त के परिधि पर होते हैं।
- 18) प्रमाण वर्ग के समक्षेत्र वृत्त के परिगत वर्ग के कर्ण के समान लम्बे व्यास के वृत्त का क्षेत्रफल प्रमाण वर्ग के क्षेत्रफल का दोगुना होता है।

#### • वर्ग बनाने की रीति

वर्ग बनाने की रीति का सर्वप्रथम प्रमाण हमारे बोधायन शुल्बसूत्र में मिलता है। बोधायन शुल्बसूत्र के अतिरिक्त आपस्तम्ब,मानव एवं कात्यायन शुल्बसूत्र में भी वर्ग बनाने की रीति बताइ गई है। यहाँ हम बोधायन शुल्बसूत्र (1.22 - 28) में उपलब्ध रीति का प्रयोग कर वर्ग की संरचना करेंगे।

# चतुरस्रं चिकीर्षन्याविचकीर्षेत्तावती एंरज्जुमुभयतः पाशां कृत्वा मध्ये लक्षणं करोति

#### लेखामालिख्य ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.22)

वर्ग खींचना हो तो इसकी लम्बाई जितनी लम्बी रस्सी लेकर उसके दोनों सिरों को गांठ बाँधकर उसके (रस्सी के लम्बाई के ) मध्य में चिह्न करें। (पूर्व - पश्चिम) रेखा (जमीन पर) खींचते हैं।

[आकृति में 1-1 यह रेखा खींचकर]

# तस्या मध्ये शङ्कुं निहन्यात् तस्मिन् पाशौ प्रतिमुच्य लक्षणेन मण्डलं परिलिखेत्विष्कम्भान्तयोः शङ्कू निहन्यात् ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.23)

खींची गई रेखा के मध्य में खुंटि ठोकें। इसे , रस्सी के दोनों सिरे बाँधकर ( रस्सी के मध्य में किए हुए) चिह्न से वृत्त 1 निकालें। जहाँ रेखा, वृत्त की परिधि को (पूर्व - पश्चिम) काटती है वहाँ दो खुंटियाँ स्थापित करें। [अ वृत्त का केन्द्र बिन्दु है। रेखा 1-1 को वृत्त आ और इ पर काटता है। वहाँ खुंटियाँ ठोंके]

# पूर्विस्मिन्पाशं प्रतिमुच्य पाशेन मण्डलं परिलिखेत्॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.24)

पूर्व दिशा की खुंटि को रस्सी का एक सिरा बाँधकर दूसरे सिरे से वृत्त 3 बनायेंगे। [खुंटि आ केन्द्र लेकर वृत्त 3 निकालें।]

## एवमपरस्मिएंस्ते यत्र समेयातां तेन द्वितीयं विष्कम्भमायच्छेत् ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.25)

इस पद्धित से पश्चिम की तरफ वृत्त 4 खींचते हैं।जहाँ यह दोनों वृत्त एक दूसरे को काटते हैं उन्हें रेखा( उत्तर-दक्षिण) से जोड़कर वृत्त 1 का व्यास प्राप्त करें।
[पश्चिम दिशा की तरफ की इ खुंटि को रस्सी का एक सिर बाँधकर दूसरे सिरे से वृत्त 4 बनाते हैं एवं वृत्त 3 और 4 जहाँ काटते हैं, उन्हें जोड़ने वाली रेखा, उत्तर-दक्षिण रेखा होती है]

## विष्कम्भान्तयोः शङ्क निहन्यात् ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.26)

(सूत्र 23 में दिये हुए) वृत्त 1 को जहाँ यह रेखा काटती है वहाँ दो खूंटियाँ ठोकें। [ई और उ पर खुंटियाँ ठोकें]

# पूर्विस्मन्पाशौ प्रतिमुच्य लक्षणेन मण्डलं परिलिखेत् ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.27)

पूर्व दिशा की खूंटी को रस्सी के दोनों सिरे बाँधकर (रस्सी के मध्य-) चिह्न से वृत्त निकालें। [खूंटी आ केन्द्र लेकर वृत्त 6 निकालें।]

# एवं दक्षिणत एवं पश्चादेवमुत्तरतस्तेषां येऽन्त्याः संसर्गास्तचतुरस्रध्ंसंपद्यते ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.28)

इसी रीति से दक्षिण , पश्चिम और उत्तर की खूंटियों को केन्द्र मानकर रस्सी के मध्य चिह्न से वृत्त निकालें । ये वृत्त जहाँ एक दूसरे को काटते हैं उन्हें ( इन बिन्दुओं को ) जोड़ने से वर्ग प्राप्त होता है ।

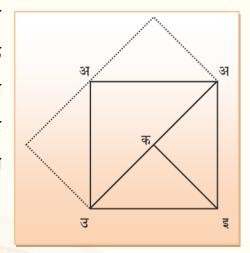
समक्षेत्र रखते हुए एक ज्यामिति संरचना को दूसरी ज्यामिति संरचना में बदलनाः वर्ग के समक्षेत्र का आयत बनाने की रीति

समचतुरस्रं दीर्घचतुरस्रं चिकीर्षश्ंस्तदृश्णयापच्छिद्य भागं द्वेघा विभज्य पार्श्वयोरुपद्ध्यात् यथायोगम् ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.52)

वर्ग का क्षेत्रफल समान (समक्षेत्र) रखते हुए, आयत बनाने के लिए वर्ग के विकर्ण के मध्य बिंदु से शीर्ष को मिलाते हैं, जिससे दो त्रिभुजाकार प्राप्त होते हैं। वे दोनों (त्रिभुज) भाग वर्ग के दोनों ओर जैसे चाहिए वैसे रखें।

[वर्ग अ ,आ, इ ,उ का समक्षेत्र आयत करना है। उ आ अक्ष्णया (कर्ण) है। जिसके मध्य बिन्दु क को इ से जोड़ें। त्रिभुज इ क आ को वर्ग कि भुजा अ आ पर रखें। त्रिभुज इ क उ को वर्ग कि भुजा अ उ पर रखें। आयत ग,आ,उ,ख प्राप्त होता है। आयत ग,आ,उ,ख और वर्ग अ,आ,इ,उ समक्षेत्र हैं।]



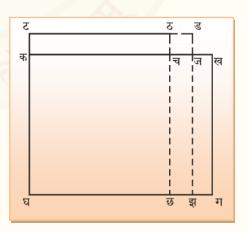
• आयत के समक्षेत्र का वर्ग बनाने की रीति

# दीर्घचतुरस्र एंसमचतुरस्रं चिकीर्ष एंस्तिर्यङमानीं करणीं कृत्वा शेषं द्वेधा विभज्य पार्श्वयोरुपद्ध्यात् खंडमावापेन तत्संपूर्येत् तस्य निर्हार उक्तः ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.54)

आयत के क्षेत्रफल को समान ( समक्षेत्र ) रखते हुए ,वर्ग बनाने के लिए , हम आयत की लम्बाई के बराबर माप की चौड़ाई लेते हैं एवं शेष आयत के भाग को दो समान (सम ) विभाग करते हैं तथा प्राप्त दोनों विभाग वर्ग के दोनों ओर रखते हैं । जो खण्ड रह जाता है उसे ज्यादा वर्ग लेकर पूरा करते हैं । इन दोनों वर्गों के क्षेत्रफल का व्यवकलन(घटाव ) करते हैं तथा शेष वर्ग का क्षेत्रफल ,आयत के क्षेत्रफल के बराबर प्राप्त होता है ।

आयत क,ख,ग,घ का समक्षेत्र वर्ग ज्ञात करना है। हम आयत क च = क घ = घ छ = च छ जोड़ें । ज, च ख का मध्य बिंदु और झ,छ ग का मध्य बिंदु है। ज झ जोड़ें। आयत ज,ख,ग,झ को भुजा क च पर (ऐसे रखें कि ज झ,क च पर आयेगी और ख ग , ट ठ पर आयेगी) रखें। जिससे आपको यहाँ वर्ग ठ,ड,ज,च प्राप्त होता है।

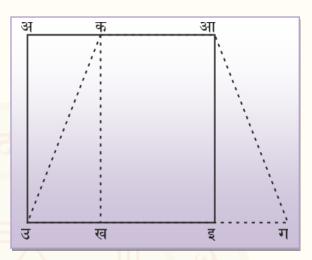


आयतक खगघ = वर्ग ट ड झघ - वर्ग ठ ड ज च

## वर्ग के समक्षेत्र का समलंब चतुर्भुज बनाने की रीति

# चतुरस्रमेकतोऽणिमचिकीर्षन्नणिमतः करणीं तिर्यङ्मानीं कृत्वा शेषमक्ष्णया विभज्य विपर्यस्येतरत्रोपदध्यात् ॥ (बोधायन शुल्बसूत्र 1.55)

वर्ग से समलंब चतुर्भुज बनाने के लिए वर्ग की एक भुजा को छोटी कर सामने वाली भुजा पर लम्ब डालते हैं एवं वर्ग की छोटी भुजा के शीर्ष से सामने वाली भुजा पर विकर्ण डालते हैं।जिससे दो त्रिभुजाकार आकर प्राप्त होते हैं। यहाँ प्राप्त त्रिभुज के एक भाग को उसी जगह



रहने दें परन्तु दूसरे भाग को उल्टा करके वह इतरत्र (दूसरी तरफ) रखने पर समलंब चतुर्भुज प्राप्त होता है।

[वर्ग अ आ ई उ , आ क यह छोटी भुजा प्राप्त होने वाले समलंब चतुर्भुज कि भुजा है। उ इ पर क ख लंब (आ क = इ ख) दिया जाता है। आयत अ, क, ख, उ के क,उ अक्ष्णया (कर्ण) से दो विभाग करें। त्रिभुज क, ख, उ को उसके जगह पर रहने दें और त्रिभुज अ क उ,आ इ पर ऐसा रखें कि त्रिभुज आ इ ग प्राप्त हो। यहाँ आपको समलंब चतुर्भुज क, आ, ग, उ प्राप्त होता है। जिसका क्षेत्रफल वर्ग अ, आ, इ, उ जितना ही है।

वर्ग के समक्षेत्र का वृत्त बनाने की रीति -

चतुरस्रं मण्डलं चिकीर्षन्नक्ष्णयार्धं मध्यात्प्राचीमभ्यापातयेद्यदितिशिष्यते तस्य सह तृतीयेन मण्डलं परिलिखेत् ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.58)

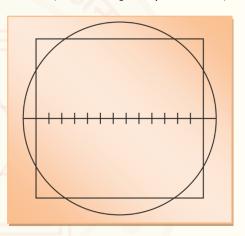
वर्ग का समान क्षेत्र (समक्षेत्र) रखते हुए, वृत्त बनाना हो तो वर्ग के आधे विकर्ण की दूरी को,वर्ग की भुजा के मध्य लाने पर जितना भाग (पार्श्वमानी के) बाहर रहता है उसके एक तिहाई भाग के साथ वृत्त की त्रिज्या बनाकर वृत्त की आकृति प्राप्त होती है।

वृत्त की त्रिज्या = वर्ग के मध्य बिन्दु से भुजा कि दूरी  $+\frac{1}{3}$  प फ

वृत्त के समक्षेत्र का वर्ग बनाने की रीति
 मण्डलं चतुरस्रं चिकीर्षन्विष्कम्भमष्टौ वा पश्चदशभागान्
 कृत्वा द्वावुद्धरेषानित्या चतुरस्रकरणी ॥

(बोधायन शुल्बसूत्र 1.59,60)

वृत्त के समान क्षेत्र (समक्षेत्र) का वर्ग बनाने के लिये वृत्त के व्यास के 15 समान भाग करें और उसमें से दो भाग घटाकर शेष लम्बाई को वर्ग की करणी (भुजा) होती है। जिससे हम बड़ी सरलता वर्ग आकृति प्राप्त करते हैं।



## 7.9 क्षेत्रफल प्राप्त करने के सूत्र –

1) वर्ग या आयत का क्षेत्रफल लम्बाई और चौड़ाई के गुणन से प्राप्त होता है।

मध्यात् कोटिप्रमाणेन मण्डलं परिलेखयेत्। अतिरिक्तत्रिभागेन सर्वं तु सहमण्डलम्॥ चतुरस्रेऽक्ष्णया रज्जुर्मध्यतः संनिपतयेत्। परिलेख्य तदर्धेनार्धमण्डलमेव तत्॥ मा.शु.सू. 10.1.1.8

समकोण त्रिभुज का क्षेत्रफल आधार और लम्बरूप भुजा के गुणन का आधा होता है।

द्विपुरुषः करणी श्रोणी बाहुस्तु द्विगुणो भवेत् त्रिंकुष्ठवत् त्र्यवलम्बकः ततो यञ्चतुरस्रे द्वाष्टमाः पुरुषाः॥ मा.शु.सू. 10.3.2.12 3) धनाकृति का धनफल उसके क्षेत्रफल और मोटाई के गुणन से प्राप्त होता है।

# मण्डलार्धं चतुःस्रक्ति रि्तनां विहिताः खराः। अरित्तर्घन एतेषां भूयस्त्वे भूयसी विधौ॥

मा.शु.सू. 10.3.1.6

4) पाई का मान –

## त्रिपद्परिणाहानि यूपोपराणीति।

बौधायन शुल्वसूत्र 1.113

5) प्राचीन भारतीय शुल्बसूत्र में  $\sqrt{2}$  का प्रमाण -

प्राचीन भारत में कम से कम शुल्बसूत्र के समय से ही वर्ग एवं वर्गमूल के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्षों का ज्ञान था। शुल्ब सूत्रों की रचना 800 ईसा पूर्व से 500 ईसा पूर्व तक बतायी जाती है किन्तु ये इससे भी बहुत पुराने हो सकते हैं। बौधायन का शुल्बसूत्र में 2 और 3 के वर्गमूल का बहुत ही शुद्ध मान निकालने की विधि दी गयी है। आर्यभट ने आर्यभटीय के खण्ड 2.4 में अनेकों अंकों वाली संख्यओं के वर्गमूल निकालने की विधि दी है।

## 2 का वर्गमूल

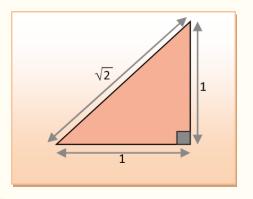
2 का वर्गमूल (√2) वह संख्या है जिसको स्वयं से गुणा करने पर 2 प्राप्त होता है। यह एक अपरिमेय संख्या है। इसका मान लगभग 1.41421 होता है। यदि 1 मीटर भुजा वाला एक वर्ग बनाया जाय तो उसके विकर्ण की लम्बाई (मीटर में) का मान 2 के वर्गमूल के बराबर होगा।

2 के वर्गमूल का दशमलव के 65 स्थानों तक मान निम्नलिखित है –

 $\sqrt{2}$  = .414213562373095048801688724209698078569671875376948073 17667973799...

#### बौधायन शुल्बसूत्र में $\sqrt{2}$ का प्रमाण -

बौधायन श्लोक संख्या 61-2 (जो आपस्तम्ब 6 में विस्तारित किया गया है) किसी वर्ग की भुजाओं की लम्बाई दिए होने पर विकर्ण की लम्बाई निकालने की विधि बताता है। दूसरे शब्दों में यह 2 का वर्गमूल निकालने की विधि बताता है।



# प्रमाणं तृतीयेन वर्धयेत्तच्च चतुर्थेनात्मचतुस्त्रिंशोनेन ॥ सविशेषः ॥

(बौधायन शुल्बसूत्र 1.61-62)

किसी वर्ग का विकर्ण का मान प्राप्त करने के लिए भुजा में एक-तिहाई जोड़कर, फिर इसका एक चौथाई जोड़कर, फिर इसका चौतीसवाँ भाग घटाकर जो मिलता है वही लगभग विकर्ण का मान है।

अर्थात

$$\sqrt{2} = 1 + \frac{1}{3} + \frac{1}{3 \cdot 4} + \frac{1}{3 \cdot 4 \cdot 34} = \frac{577}{408} = 1.414216$$

यह मान दशमलव के पाँच स्थानों तक शुद्ध है।

आपस्तंब शुल्बसूत्र में  $\sqrt{2}$  का प्रमाण -

समस्य द्विकरणी।

प्रमाणं तृतीयेन वर्धयेत्तच्चतुर्थेनात्मचतुस्त्रिंशोनेन स विशेषः ।

(आपस्तंब शुल्बसूत्र 12)

वर्ग का विकर्ण (समस्य द्विकरणी) – इसका मान (भुजा) के तिहाई में इसका (तिहाई का) चौथाई जोड़ने के बाद (तिहाई के चौथाई का) ३४ वाँ अंश घटाने से प्राप्त होता है। दूसरे शब्दों में,

$$\sqrt{2} = 1 + \frac{1}{3} + \frac{1}{3.4} + \frac{1}{3.4 \cdot 34} = \frac{577}{408} = 1.41\overline{42156862745098039}$$

#### अभ्यास प्रश्न 🖊

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए –

- 1) निम्न में से पाइथागोरस प्रमेय है -
  - अ)  $(लम्ब)^2 = (कर्ण)^2 + (आधार)^2$
  - ब)  $(31111)^2 = (450)^2 + (65)^2$
  - स)  $(कर्ण)^2 = (लम्ब)^2 + (आधार)^2$
  - द) इनमें से कोई नहीं
- 2) सबसे बड़ा शुल्बसूत्र है -
  - अ) मानव शुल्बसूत्र
- ब) बौधायन शुल्बसूत्र
- स) आपस्तंभ शुल्बसूत्र
- द) इनमें से कोई नहीं
- 3) सबसे छोटा शुल्बसूत्र है
  - अ) कात्यायन शुल्बसूत्र
- ब) बौधायन शुल्बसूत्र
- स) मानव शुल्बसूत्र
- द) मानव शुल्बसूत्र

### प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

- 1) शुल्बसूत्रों के ......प्रकार है।
- 2) 1 अंगुल.....से.मी. होते हैं।
- 3) 1 अणुक.....अंगुल होते हैं।

## प्र.3 निम्नलिखित कथनों के सामने सत्य (√) अथवा असत्य (×) का चिह्न अंकित कीजिए।

- मानव शुल्बसूत्र के अनुसार वर्ग या आयात का क्षेत्रफल लम्बाई और चौड़ाई के गुणन से प्राप्त किया जा सकता है।
- समकोण त्रिभुज का क्षेत्रफल आधार और लम्बरूप भुजा के गुणन का आधा होता
   है।

 वर्ग की भुजाओं के मध्यिबन्दु जोड़कर बनने वाली आकृति का क्षेत्रफल प्रथम वर्ग के क्षेत्रफल का आधा होता है।

#### प्र.4 सही जोड़ी मिलान कीजिए।

कॉलम 'अ' कॉलम 'ब'

- 1) अग्निचिति क) बॉस या कपड़े का उपयोग
- 2) मण्डप ख) पक्षियों के आकार के समान
- 3) आयात ग) चारों भुजाएँ समान
- 4) वर्ग घ) आमने सामने की भुजाएँ समान

#### प्र.5 अति लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) पाइथागोरस प्रमेय किस सिद्धान्त पर आधारित है?
- 2) वेदि के कितने प्रकार होते हैं?
- 3) यज्ञ मण्डप कितने प्रकार के होते हैं?

#### प्र.6 लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) वर्ग का क्षेत्रफल ज्ञात करने के लिए शुल्बसूत्र का प्रमाण लिखिए।
- 2) समकोण त्रिभुज का क्षेत्रफल ज्ञात करने के लिए शुल्बसूत्र का प्रमाण लिखिए।
- 3) रस्सी के विभाग करने की भौमितिक परिकल्पना को बताइए।
- 4) सूर्य की सहायता से दिशा निश्चित किस प्रकार की जा सकती है ?

#### प्र.7 दीर्घत्तरीय प्रश्न

- 1) बोधायन शुल्बसूत्र में बताई गई वर्ग बनाने की रीति को समझाए।
- 2) वर्ग के क्षेत्रफल को समान क्षेत्र रखते हुए ,िनम्न आकृतियों को बनाने की रीति को सिचत्र समझाएं।
  - 1) आयत
- 2) समलम्ब चतुर्भज
- 3) त्रिभुज
- 4) समक्षेत्र चतुर्भुज
- आयत के समक्षेत्र से वर्ग बनाने की रीति को सचित्र स्पष्ट कीजिए।

- 4) वर्ग के समक्षेत्र से वृत्त बनाने की रीति को सचित्र स्पष्ट कीजिए।
- 5) वृत्त के समक्षेत्र से वर्ग बनाने की रीति को समझाइए।

# 🕶 परियोजना कार्य

अपने गुरुजी की सहायता से शुल्बसूत्रों के द्वारा यज्ञवेदी का निर्माण कीजिए।



#### अध्याय - 8

# स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता के लिए योग

### अध्ययन बिन्दु

- 8.1 प्रस्तावना
- 8.2 परिभाषा
- 8.3 स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता का अर्थ
- 8.4 स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता के सन्दर्भ में अष्टांग योग का महत्त्व

#### 8.1 प्रस्तावना –

प्राचीनकाल से ही भारतवर्ष अपने आध्यातम विषयक विशुद्ध एवं सनातन ज्ञान से सम्पूर्ण विश्व को लाभान्वित करता रहा है, जिसमें वेदों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। वेद सत्य एवं सनातन विधाओं के आश्रय स्थल हैं। अतः कहा भी गया है "वेदोऽखिलोधर्ममूलम्" अर्थात् वेद ही सभी धर्म एवं विद्या का मूल हैं। वेद की इन्हीं ब्रह्मविद्याओं में से एक 'योगविद्या' भी हैं। जिसका उद्देश्य मानव जाति को पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान कर मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक रूप से परिष्कृत करते हुए परमानन्द अर्थात् 'आत्मसाक्षात्कार' रूपी कल्याण मार्ग की ओर प्रवृत्त करना हैं। प्राचीनकाल से ही योग विद्या गुरुकुलीय शिक्षा का अग्न रही है, जिसके आश्रय को प्राप्त कर मनुष्य ने सम्पूर्ण स्वास्थ्य से लाभान्वित होते हुए अपने जीवन को सार्थक सिद्ध किया है।

#### 8.2 परिभाषा -

सम्भवतः आधुनिक युग में जन साधारण, योग को केवल व्यायाम, आसन, प्राणायाम आदि कियाओं के रूप में ही देखते हैं परन्तु वास्तविकता में योग का क्षेत्र एवं स्वरूप इससे कहीं अधिक व्यापक है। 'योग' शब्द का अर्थ – जोड़ना / मिलना / एकत्र होना अथवा किन्ही दो या अधिक पक्षों में सामंजस्य होना है। अतः उपरोक्त अर्थ से तात्पर्य – "शरीर एवं मन के मध्य सामंजस्य एवं सन्तुलन से है।" अतः योग वह स्थिति है, जिसके द्वारा मनुष्य के शारीरिक एवं मानसिक पक्ष का एकात्म होता है एवं उसी एकात्म के परिणामस्वरूप मनुष्य प्रसन्नता एवं आनन्द (आत्मसाक्षात्कार) की अनुभूति को प्राप्त होता है।

#### 8.3 स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता का अर्थ -

स्वास्थ्य मनुष्य के जीवन का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग है, जिसकी अनुपस्थित में व्यक्ति किसी भी प्रकार के सुख एवं सुविधाओं का आनन्दपूर्वक भोग नहीं कर सकता। अतः कहा भी गया है – 'पहला सुख, निरोगी काया' इसी स्वास्थ्य की प्राप्ति में आयुर्वेद का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। आयुर्वेद में प्रयुक्त शब्द 'आयु' का अर्थ जीवन तथा 'वेद' का अर्थ 'विशुद्ध ज्ञान के स्रोत'। अतः जिस वेद से आयु एवं जीवन की वृद्धि हो, वह आयुर्वेद कहा गया है। प्राचीनता की दृष्टि से आयुर्वेद को ऋग्वेद का 'उपवेद' कहा गया है, परन्तु विषयवस्तु सर्वाधिक अर्थ्ववेद (सुश्रुत सूत्र 1.6 एवं अष्टांगहृदयम्) में होने के कारण, इसे ऋग्वेद के 'उपांग' के रूप में भी जाना जाता है। आयुर्वेद की सुश्रुत संहिता में स्वास्थ्य की परिभाषा का वर्णन करते हुए कहा है कि –

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलः कियाः। प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते॥

सुश्रुत संहिता 15.4.1

जिस व्यक्ति के शरीर में त्रिदोष (वात, कफ, पित्त) की स्थिति सन्तुलित हो, देहाग्नि तथा जठराग्नि समान हो, सभी धातुएँ (रस, रक्त, माँस, भेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र) सम्यक् अवस्था में हो, मल (स्वेद, केश, लोम आदि) समुचित हो तथा सभी शारीरिक क्रियाएँ सुचारू हों। इसी के साथ मन, इन्द्रियाँ तथा आत्मा प्रसन्न, निर्विकार एवं आनन्दित अवस्था में हो ऐसा व्यक्ति स्वस्थ कहा गया है।

उपरोक्त परिभाषा के आधार पर यह तथ्य स्पष्ट है कि केवल शारीरिक रूप से रोग रहित होना ही पूर्ण निरोगी नहीं होता, वरन् मन, आत्मा एवं इन्द्रियों की प्रसन्निचत अवस्था का समावेश होने पर ही सम्पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति सम्भव है।

इसी तथ्य को इन्गित करते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी स्वास्थ्य को इस प्रकार परिभाषित किया

स्वास्थ्य से तात्पर्य केवल शरीर में रोगों की अनुपस्थिति से ही नहीं, बल्कि शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक रूप से आनन्दित, निर्विकारता एवं निश्चलता से है।

- विश्व स्वास्थ्य संगठन (सन् 1948)

यहाँ जानना रोचक है कि आयुर्वेद एवं विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा दी गई परिभाषाओं में स्वास्थ्य के साथ – साथ प्रसन्नता एवं आनन्द को भी समान महत्त्व दिया है। परन्तु ये प्रसन्नता एवं आनन्द का क्या अर्थ है।

प्रसन्नता हमारे मन एवं शरीर में किसी प्रिय प्रसंग अथवा घटना के दौरान उद्दीप्त होने वाले सकारात्मक संवेगों की अभिव्यक्ति है। वहीं, आनन्द ऐसी अवस्था है, जिसका आश्रय पाकर मनुष्य सदा ही सकारात्मक, सहज एवं उत्साह से परिपूर्ण हो जाता है। उसे प्रसन्न रहने के लिए किसी प्रसंग अथवा परिस्थिति की आवश्यकता नहीं होती। हर दिन, हर क्षण उसे उत्सव के रूप में ही प्रतीत होता है। सम्भवतः उक्त परिभाषाओं में स्वास्थ्य के संदर्भ हेतु 'प्रसन्नता' का यही तात्पर्य है।

स्वास्थ्य एवं आनंद प्राप्ति की कामना करते हुए वेदों में भी इस प्रकार कहा गया है कि-

आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां छं श्रोत्रं यज्ञेन कल्पताम् पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् ।

(यजुर्वेद.9.21)

उक्त मन्त्र में आरोग्य एवं दीर्घायु रहते हुए मनुष्य को लोकहित (यज्ञ) में लगे रहने की बात कही है एवं कल्पों तक उसके पञ्चप्राण, नेत्र एवं श्रोत्र (कान) आदि के बलयुक्त एवं स्वस्थ रहने की कामना की है।

### जीवेम शरदः शतम्

(अथर्ववेद 19.67.2)

हम सौ शरदों (वर्षों) तक जीवित रहे आदि मन्त्र वेदों में सम्पूर्ण स्वास्थ्य, दीर्घायु की कामना एवं अवधारणा के उदाहरण हैं। स्वास्थ्य की इन्ही अवधारणाओं को सिद्ध करने में यौगिक अभ्यासों की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

## 8.4 स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता के संदर्भ में अष्टांग योग का महत्त्व -

आधुनिक युग में मानव समाज असीम भौतिक सम्पदा एवं सुख- सुविधाओं से समृद्ध होते हुए भी घातक मानसिक तथा शारीरिक रोगों से प्रस्त हैं। ऐसी स्थिति में मनुष्य को व्यावहारिक (प्रायोगिक) के साथ-साथ आध्यात्मिक सामंजस्य से युक्त 'योग' रूपी साधन की महती आवश्यकता है। योग चिकित्सा स्वयं में एक पूर्णमानक वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित चिकित्सा पद्धित है। हजारो वर्षों से आध्यात्मिक जगत के साथ साथ वैज्ञानिक परिपेक्ष्य में भी योगविद्या अस्तित्वमान रही है, जिसे अनेक वैज्ञानिक अन्वेषणों के आधार पर पूर्णतः सिद्ध किया गया है। योगदर्शन में वर्णित अष्टांग योग भी वैज्ञानिक पक्ष पर आधारित सुव्यवस्थित विषय एवं सम्पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति का साधन कहा जा सकता है। यम एवं नियम- समुचित सामाजिक व्यवहार, आत्मसंयम तथा अनुशासन के लिए, आसान एवं प्राणायाम- शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिए, प्रत्याहार तथा धारणा- एकाग्रता वृद्धि, संकल्पशक्ति या लक्ष्य प्राप्ति में सहायता के लिए, ध्यान एवं समाधि- पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

स्वस्थ शब्द, दो शब्दों से मिलकर बना है। 'स्व' एवं 'स्थ'। स्व का अर्थ है 'स्वयं' एवं 'स्थ' का तात्पर्य 'स्थित' होने से लिया जा सकता है। अतः स्वयं में 'स्थित' होना ही स्वस्थ शब्द का अभिप्राय है

योगसूत्र में योग सिद्धि के फल का वर्णन करते हुए महर्षि पतञ्जिल ने कहा है कि –

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानाम्॥

योगसूत्र 1.3

योग सिद्धि के पश्चात् आत्मा की स्वयं में स्थिति हो जाती है।

वहीं, यौगिक अभ्यास जैसे – आसन, प्राणायाम, ध्यान, मुद्रा आदि विषयों से सम्बन्धित योगशास्त्र (हठयोगप्रदीपिका) में यौगिक क्रियाओं के सिद्ध हो जाने के परिणाम स्वरूप कहा गया है कि-

# वपुःकृशत्वं वदने प्रसन्नता नादस्फुटत्वं नयने सुनिर्मले। अरोगता बिन्दुजयोऽग्निदीपनं नाड़ीविशुद्धिर्हठसिद्धिलक्षणम् ॥

हठयोगप्रदीपिका 2.78

शरीर में लाघव्य (हलकापन), मुखपर प्रसन्नता का भाव, स्वरों में सौष्ठव, नेत्रों में निर्मलता (तेजस्विता), आरोग्यता, बिन्दु (आज्ञाचक से स्नावित होने वाला स्नाव) पर नियन्त्रण, जठराग्नि की प्रदीप्ति तथा नाड़ियों की निर्विकारता (विशुद्धता), ये सब हठसिद्धि के लक्षण हैं।



यम एवं नियम के सिद्धान्त वैज्ञानिक तथ्यों

पर आधारित है। किसी भी अंग का पालन करने पर मनुष्य की ऊर्जा प्रकृति की ऊर्जा के सापेक्ष रहती है तथा उनके विरुद्ध कार्य करने पर प्रकृति की ऊर्जा के भी विरुद्ध हो जाती है। यही विरुद्ध कार्य व्यक्ति के भीतर रोगों की उत्पत्ति का कारण है, तथा प्रकृति के साथ सामञ्जस्य रखने वाले कार्य सम्पूर्ण स्वास्थ्य एवं आरोग्य प्राप्ति के साधन है। यम एवं नियम का अनुपालन अतिआवश्यक माना गया है क्योंकि यह शरीर में सूक्ष्म परमाणु स्तर पर होने वाली रासायनिक एवं जैविक प्रक्रियाओं को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। यम एवं नियम धर्म विज्ञान पर आधारित स्वास्थ्य के सिद्धान्त हैं, जो मनुष्य शरीर एवं मन के सभी पहलुओं तथा उनके अन्दर व्याप्त रासायनिक एवं विद्युत-चुम्बकीय प्रणाली से जुड़े हैं।

यम के माध्यम से व्यक्ति आत्मसंयमित होकर सामाजिक मूल्यों को सम्यक् रूप से आत्मसात् करने में समर्थ हो पाता है। यम में वर्णित सत्य का पालन करने से ही मनुष्य की ऊर्जा सकारात्मकता से परिपूर्ण हो जाती है। प्राचीन ऋषि मुनि भी पूर्ण सत्यनिष्ठा से इस अंग की साधना करते थे। झूठ बोलने से व्यक्ति के भीतर रासायनिक सन्तुलन बिगड़ जाते हैं तथा वह अनेक रोगों जैसे कब्ज, हृदय गित के विकार, विस्मृति आदि से पीड़ित हो जाता है। हिंसा, मांस-भक्षण, चोरी आदि करने पर शरीर में नकारात्मक हार्मोन्स का स्त्राव प्रारम्भ हो जाता है, जो पाचन संस्थान, तिन्त्रका तन्त्र एवं शरीर के प्रत्येक अणु, कोशिका एवं ऊत्तकों पर कुप्रभाव डालते हैं। ब्रह्मचर्य के पालन से छात्र सदैव विद्यार्जन हेतु पात्र बने रहते हैं तथा बल,तेज एवं ओज से पिरपूर्ण होते हैं। वहीं इसके विरुद्ध कार्य करने पर अनेक अनेक दुःसाध्य रोगों के ग्रास बन सकते हैं। यम स्वयं में एक उच्चस्तरीय नैतिकशास्त्र है।

इसी प्रकार नियम भी सम्यक् जीवनशैली का विज्ञान है। हमारी सभ्यता में स्वच्छता का सदा ही पालन किया गया है। शौच में सम्मिलित षटिकया एवं शास्त्रों के पठन द्वारा मानिसक शुद्धि इसके समुचित उदाहरण हैं। षद्धमों के अभ्यास से नेत्र, कण्ठकूप, श्वसन अंग, उदर प्रदेश एवं आंतों की सफाई होती है, मोटापा, उदर एवं श्वसन रोग, वात एवं कफजन्य रोगों से निवृत्ति होती है। वर्तमान परिपेक्ष में शौच का अत्यन्त महत्त्व है। अनेक विषाणु तथा जीवाणु जिनत रोगों में यह विशेष लाभदायी अंग है। सन्तोष के पालन से अवसाद, कैंसर आदि जैसे भयावह रोगों की सम्भावना कम होती है। वहीं, तप के माध्यम से शारीरिक, सांवेगिक तथा मानिसक स्वास्थ्य लाभ होता है। स्वाध्याय एवं ईश्वर प्रणिधान आत्मिवश्चेषण तथा आध्यात्मिक प्रगति में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार यम एवं नियम के समुचित पालन के पश्चात् मनुष्य योगासनों के अभ्यासों हेतु पात्र बन पाता है।

यौगिक क्रियाओं जैसे आसन के अभ्यास से शरीर के सभी अंग – प्रत्यंगों की समुचित मालिश होती है एवं रक्त परिसन्चरण बढ़ता है, जिससे शरीर में पुष्टता आती है। पाचन संस्थान, तिन्नका तन्त्र, स्नायु की कार्यप्रणाली, अन्तःस्रावी ग्रंथियों द्वारा हार्मोन का उत्सर्जन, मिस्तिष्क आदि सभी सुव्यवस्थित, सुचारू एवं संयोजित रूप से कार्य करते हैं, जिससे शारीरिक स्वास्थ्य लाभ की प्राप्ति होती है। वैज्ञानिक शोधों के द्वारा, आसनों के अभ्यास से जीवन की गुणवत्ता में अप्रत्याशित सुधार देखा गया है। जहरीले पदार्थों का निष्कासन, चयापचय प्रणाली

की कियाशीलता में वृद्धि, नसों एवं मांसपेशियों के बीच अद्भुत समन्वय , रोग प्रतिरोधक प्रणाली का बेहतर होना, हृदय तथा अन्य सभी अंगों का स्वास्थ्यलाभ एवम शारीरिक कियाओं का समुचित कियान्वयन आदि पक्ष योगासनों के माध्यम से सिद्ध होते हैं।

प्राणायाम के माध्यम से प्राणों का नियमन, विस्तार एवं नियन्त्रण प्राप्त होता है, जिससे प्राणिक एवं भावनात्मक संवेगों के मध्य सामन्जस्य उत्पन्न होता है। श्वसन तन्त्र एवं फेफड़ों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। साथ ही शारीरिक एवं मानसिक पक्ष के मध्य सामञ्जस्य स्थापित होता है। वैज्ञानिक एवं शोधकर्ताओं ने यह पाया कि सामान्य व्यक्ति लगभग 500 मिलीलीटर ऑक्सीजन ग्रहण करता है, परन्तु अनुलोम विलोम, भिन्नका आदि प्राणायामों के निरंतर अभ्यास करने वाले साधकों को चार से छह लीटर ऑक्सीजन ग्रहण करते हुए पाया गया। प्राणायाम के अभ्यास से सम्पूर्ण शरीर में अथाह जीवनशक्ति का प्रवाह होता है, जिससे शरीर के सभी अंग एवं मन तथा इन्द्रियाँ सकारात्मक रूप से प्रभावित होते हैं, बेहतर ऑक्सीजन आपूर्ति एवं रक्त कणिकाओं में वृद्धि होती है, निद्रा सुव्यवस्थित होती है एवं शरीर तथा मन को अद्भुत विश्रांति प्राप्त होती है।

प्राणायाम, सम्पूर्ण नाड़ीशास्त्र पर आधारित चिकित्सा विज्ञान है। नाड़ीशोधन प्राणायाम के अभ्यास से शरीर की सभी नसों तथा नाड़ियों में व्याप्त विषाक्त पदार्थों का निष्कासन हो जाता है, जिससे सम्पूर्ण नाड़ीमण्डल, परिसंचरण तन्त्र एवं तिन्निका तन्त्र के प्रवाह मार्ग में अवरुद्ध मलों का शमन हो जाता है तथा उक्त संस्थानों की कार्यप्रणाली सुव्यवस्थित एवं सुचारू होती हैं। प्राणायाम के अभ्यास से शरीर मे व्याप्त सांविगिक एवं विद्युत प्रवाह सुषुम्ना नाड़ी में गमन करने लगता है, जिससे शरीर मे उपस्थित चक्रों में ऊर्जा का संचरण प्रारम्भ होने लग जाता है, जो मनुष्य की चेतना को उच्च स्तर तक परिष्कृत करता है।

प्राणायाम का अभ्यास करते-करते मन और इन्द्रियों का शुद्धिकरण हो जाता है। तब इन्द्रियों की बाह्य वृत्तियों को सब ओर से समेटकर मन में विलीन करने के अभ्यास को प्रत्याहार कहा जाता है। मन की असंयमितता के परिणामस्वरूप उत्पन्न मानसिक क्षेत्रा, अवसाद, क्रोध, विस्मृति आदि समस्याओं के प्रयोग में लायी जाने वाली पाश्चात्य जगत प्रदत्त आधुनिक

मनश्चिकित्सा की जो प्रविधियाँ प्रचित हैं, उनमें मुख्यतः वैचारिक विश्लेषण, परामर्श तथा अन्य अन्तर्विक्षण प्रिक्रियाओं के द्वारा रोग का इलाज किया जाता है। योगदर्शन एक सम्पूर्ण मनोविज्ञान है एवम प्रत्याहार का अभ्यास मन पर ही केन्द्रित है। आधुनिक मनश्चिकित्सा में प्रयोग की जाने वाली अनेक विधियाँ भी प्रत्याहार की विभिन्न कियाओं जैसे त्राटक, योगनिद्रा आदि का आधुनिकीकरण ही कही जा सकती हैं। अतः मानसिक स्वास्थ्य एवं आत्मविश्वास को विकसित करने में प्रत्याहार की अति विशिष्ट भूमिका है। धारणा के अभ्यास से स्मरण शक्ति, संकल्पशक्ति एवं एकाग्रता में वृद्धि होती है एवं मनुष्य का आभा मण्डल/ चुम्बकीय क्षेत्र विस्तृत, स्वस्थ एवं सकारात्मक होता है।

ध्यान एवं मुद्रा के अभ्यासों से मस्तिष्क में अद्भुत क्षमताओं का विकास होता है। ध्यान के दौरान मस्तिष्क का संरचनाओं में सकारात्मक परिवर्तन देखे गए हैं। इन्ही परिवर्तनों के साथ अल्फा तरंगों की उत्पत्ति दृष्टिगोचर हुई, जो बौद्धिक विकास तथा स्मृति में वृद्धि एवं रचनात्मक तथा सृजनात्मक क्षमताओं को भी विकसित करने में पूर्ण समर्थ है। ध्यान के अभ्यास से शरीर में नकारात्मक हार्मोन्स का स्तर कम पाया गया एवं वही सकारात्मक हार्मोन्स के स्तरों में वृद्धि देखी गई। योगनिद्रा का अभ्यास मस्तिष्क का भाग को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है, जो तनाव प्रबन्धन (स्ट्रेस मैनेजमेंट) के रूप अत्यन्त सहायक है।

इस प्रकार यौगिक अभ्यासों के माध्यम से शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य तो प्राप्त होता है, इसी के साथ आध्यात्मिक रूप से विकसित करने में भी यौगिक अभ्यासों की महती भूमिका है। समाधि के माध्यम से व्यक्ति आत्मकेन्द्रित होता है। साथ ही समाज कल्याण हेतु परोपकारी एवं समाजोत्पादक कार्य करने की ओर प्रेरित होता है, 'वसुधैवकुटुम्बकम्' की भावना को आत्मसात् करते हुए विश्व कल्याण में अपनी ओर से सहयोग प्रदान करता है। समाधि के द्वारा मनुष्य अपनी उच्चस्तरीय चेतना को प्राप्त कर ब्रह्माण्डीय चेतना से स्वयं का समन्वय कर लेता है। इस प्रकार योग के द्वारा मनुष्य अपने अन्तिम एवं प्रमुख ध्येय को प्राप्त करके पूर्ण स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता की अवस्था को प्राप्त कर सकता है।

#### अभ्यास प्रश्न 🖋

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए।

- विश्व योग दिवस मनाया जाता है -
  - अ) 5 जून
- ब) 22 जून
- स) 21 जून
- द) 18 जून
- भारत में अंतर्राष्ट्रीय योग का उत्सव किस मन्त्रालय द्वारा आयोजित किया जाता 2) है-
  - अ) आयुष मन्त्रालय ब) संचार मन्त्रालय
- - स) शिक्षा मन्त्रालय द) इनमें से कोई नहीं
- भारत में पहला अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस कब मनाया गया था 3)
  - अ) 21 जून 2014
    - ब) 21 जून 2015

  - स) 21 जून 2016 द) इनमें से कोई नहीं

### प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

- इवासों का नियमन.....के द्वारा होता है।
- स्वास्थ्य के .....घटक बताए गए हैं।
- आयुर्वेद को.....का उपवेद कहा गया है।

#### प्र.3 निम्नलिखित कथनों के सामने सत्य (✓) अथवा असत्य (✗) का चिह्न अंकित कीजिए।

- प्राणायाम की उपयोगिता कैंसर जैसे दुसाध्य रोगों में है। 1)
- ध्यान में 'गामा' तरंगों की उत्पत्ति होती है। 2)
- आसनों से शरीर में रक्त संचरण सुव्यवस्थित होता है।

#### प्र.4 सही जोड़ी मिलान कीजिए-

कॉलम 'अ'

कॉलम 'ब'

1) स्वास्थ्य

क. तनाव प्रबन्धन

2) षद्भर्म ख. आर्युयज्ञेन कल्पताम्

3) समाधि ग. शुद्धिकिया

4) योगनिद्रा घ. परमानंद की प्राप्ति

5) यजुर्वेद ण. चार घटक

#### प्र.5 अति लघूत्तरीय प्रश्न

1) वसुघैवकुटुम्बकम् का अर्थ बताएं।

- 2) हठयोग शास्त्रों में किन विषयों का वर्णन है।
- 3) योगसूत्र के रचिता का नाम लिखिए।

#### प्र.6 लघूत्तरीय प्रश्न

- 1) नाड़ीशोधन प्राणायाम का महत्त्व लिखिए।
- 2) आसनों से होने वाले लाभों का वर्णन करिए।
- 3) ध्यान का संक्षिप्त वर्णन करें।

#### प्र.7 दीर्घत्तरीय प्रश्न

- 1) आयुर्वेद तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा वर्णित 'स्वास्थ्य' की परिभाषाओं को समझाते हुए दोनों के मध्य सम्बन्ध को स्पष्ट कीजिए।
- 2) 'प्रसन्नता' विषय पर प्रकाश डालते हुए हठयोग सिद्धि के लक्षणों का वर्णन कीजिए।
- 3) 'स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता के सन्दर्भ में योग' की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

# 🕶 परियोजना कार्य

- 1) यौगिक अभ्यासों के द्वारा स्वयं में आए परिवर्तनों एवं अनुभवों को जानते हुए एक रिपोर्ट तैयार करिये। सम्बन्धित विषयों पर सहपाठियों के साथ चर्चा कीजिए।
- कोई भी पाँच आसनों का निरन्तर 15 दिवस तक अभ्यास करते हुए प्रतिदिन उन आसनों में रुकने के समय को लिखिए।

郣.	आसन	दिवस														
		1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15
1																
2																
3																
4																
5																



# अध्याय - 9

# प्राचीन भारतीय गणित

## अध्ययन बिन्दु

- 9.1 गणितशास्त्र का अर्थ एवं महत्त्व
- 9.2 गणितशास्त्र का उद्भव
- 9.3 संख्या शब्दों का विभिन्न प्रकार से उल्लेख
- 9.4 भिन्न परिकर्म
- 9.5 शून्य क्या है।
- 9.6 ज्यामिति या रेखागणित
- 9.7 यज्ञवेदि और रेखागणित
- 9.8 आर्यभट्टीय पद्धति एवं कटपयादि पद्धति
- 9.9 भू-माप की इकाईयाँ

हैं।

## 9.1 गणितशास्त्र का अर्थ एवं महत्त्व -

भारतीय विद्या परम्परा में प्रारंभ से ही गणित को समस्त शास्त्रों में शीर्षस्थ कहा जाता

# यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा। तद्वद् वेदाङ्गशास्त्राणां गणितं मूर्घि संस्थितम्॥

(वेदाङ्गज्योतिष 2)

गणित शब्द गण् धातु में क्त प्रत्यय लग कर बना हैं। गण् धातु का अर्थ हैं – गिनना और इस प्रकार गणित का अर्थ जिसमें गणना की जाती हैं।

#### 9.2 गणितशास्त्र का उद्भव -

गणनासूचक गण, गणपित, गर्णाश्र, गणािन, गण्य आदि शब्द ऋग्वेद और यजुर्वेद के मन्त्रों में मिलते हैं। वैदिक वाड्मय की विश्व को सबसे बड़ी देन संख्याओं का आविष्कार तथा दाशिमक प्रणाली है।

## सास्मा अरं प्रथमं स द्वितीयमुतो तृतीयं मनुषः स होता।

(ऋग्वेद 2.18.2)

इस ऋग्वेदीय मंत्र में संख्या 1, 2, 3 का उल्लेख है।

सविता प्रथमेहन्निप्तदितीये वायुस्तृतीयऽआदित्यश्चतुर्थे चन्द्रमाः पश्चमऽऋतुः षष्ठे मरुतः सप्तमे बृहस्पितरष्टमे । मित्रो नवमे वरुणो दशम ऽ इन्द्र ऽएकादशे विश्वेदेवा द्वादशे ॥

(यजुर्वेद 39.6)

यजुर्वेद के इस मंत्र में 1 से 12 तक क्रमानुसार संख्याओं का उल्लेख किया गया है।

अष्टौ व्यख्यत् ककुभः पृथिव्यास् त्री धन्व योजना सप्त सिन्धून्। हिरण्याक्षः सविता देव आगादु द्धद्रह्मा दाशुषे वार्याणि॥

(ऋग्वेद. 1.35.8)

इस ऋगवेदीय मन्त्र अंकों को शब्दों के रूप में लिखने का उल्लेख है। संख्या 8, 3, 7 को शब्दों में लिखा गया है।

सहस्त्रं व्यतीनां युक्तानामिन्द्रमीमहे।

श्रतं सोमस्य खार्यः॥

(ऋग्वेद. 4.32.17)

ऋग्वेद के इस मंत्र में 100, 1000 संख्या का उल्लेख है।

आ विंशत्या त्रिंशता याह्यर्वाङा चत्वारिशता हरिभिर्युजानः। आ पञ्चाशता सुरथेभिरिन्द्राऽऽषष्टया सप्तत्या सोमपेयम्

(ऋग्वेद. 2.18.5)

ऋग्वेद के इस मंत्र में संख्याओं 30, 40, 50, 60, 80, 90, 100 का उल्लेख है।

# चित्र इद् राजा राजका इदन्यके यके सरस्वतीमनु।

पर्जन्य इव ततनिद्ध वृष्टया सहस्त्रमयुता ददत्॥ (ऋग्वेद. 8.21.18)

ऋग्वेद के इस मंत्र में सहस्त्र (1000) एवं अयुत या दश सहस्त्र (10000) का उल्लेख है।

एक से लेकर सहस्त्र (100) तक संख्याओं के नाम तथा अरब (अर्बुद) संख्या तथा परिधि ( $10^{12}$ ) तक की संख्याओं का उल्लेख वेद संहिताओं में मिलता है।

इमा मे अग्न ऽ इष्टका धेनवः सन्त्वेका च दश च दश च शतं च शतं च सहस्रं च सहस्रं चायुतं चायुतं च नियुतं च नियुतं च प्रयुतं च चार्बुदं च न्यर्बुद चं समुद्रश्च मध्यं चान्तश्च परार्धश्चेता मे अग्न ऽ इष्टका धेनवः सन्त्वमुत्रामुष्मिँ ह्लोके..। (यजु. 17.2)

यजुर्वेद की तैत्तिरीय संहिता में युग्म तथा अयुग्म संख्याओं का उल्लेख है तथा 100 तक सारणियाँ उपलब्ध हैं।

तैत्तिरीय संहिता में निम्नलिखित परिभाषाएँ हैं।

शताय स्वाहा सहस्राय स्वाहाऽयुताय स्वाहा नियुताय स्वाहा प्रयुताय स्वाहाऽर्बुदाय स्वाहा न्यर्बुदाय स्वाहा समुद्राय स्वाहा मद्धयाय स्वाहाऽन्ताय स्वाहा पराद्धाय स्वाहोषसे स्वाहा व्युष्टये स्वाहो देष्यते स्वाहोद्यते स्वाहोदिताय स्वाहा सुवर्गाय स्वाहा लोकाय स्वाहा सर्वस्मै स्वाहा ॥

(तैत्तिरीय संहिता 7.2.20)

$$10^0 = 1 10^1 = 10$$

$$10^2 =$$
 **श**त  $10^3 =$  सहस्त्र  $10^4 =$  अयुत

$$10^8 =$$
न्यर्बुद  $10^{16} =$ समुद्र  $10^{17} =$ मध्यं

$$10^{18} =$$
महामध्यं  $10^{19} =$ अंत्य  $10^{20} =$ महाअंत्य

$$10^{21} =$$
पराद्ध  $10^{22} =$ अग्नि  $10^{23} =$ इष्टिका

$$10^{26} = सनत्वं 10^{27} = लोकं$$

### 9.3 संख्या शब्दों का विभिन्न प्रकार से उल्लेख -

#### 1) विषम संख्याएँ - 1 से 33 तक

एका च में तिस्रश्च में तिस्रश्च में पश्च च में पश्च च में सप्त च में सप्त च में नव च में नव च म ऽ एकादश च म ऽ एकादश च में त्रयोदश च में त्रयोदश च में पश्चदश च में पश्चदश च में सप्तदश च में सप्तदश च में नवदश च में नवदश च म ऽ एकि छं शितश्च म ऽ एकि छं शितश्च में त्रयोवि छं शितश्च में त्रयोवि छं शितश्च में पश्चिव छं शितश्च में पश्चिव छं शितश्च में सप्तिव छं शितश्च में सप्तिव छं शितश्च में नविव छं शितश्च में नविव छं शितश्च म एकि छं शिच म ऽ एकि छं शिच में त्रयस्त्रि छं शच्च में यहोन कल्पन्ताम्

(यजु. 18.24)

यजुर्वेद के इस मंत्र में 1 से लेकर 33 तक की विषम संख्याएँ दी गई हैं। जैसे – 1, 3, 5, 7, 9, 11, 13, 15, 17, 19, 21, 23, 25, 27, 29, 31, 33

विषम संख्याओं का उपयोग वर्तमान में यातायात प्रबंधन में किया जाता है।

### 2) सम संख्याएँ 4 से 48 (4 का पहाड़ा $4 \times 12 = 48$ )

चतस्त्रश्च मेऽष्टौ च मेऽष्टौ च मे द्वादश च मे द्वादश च मे षोडश च मे षोडश च मे वि छं शतिश्च मे वि छं शतिश्च मे चतुर्वि छं शतिश्च मे चतुर्वि छं शतिश्च मेऽष्टावि छं शतिश्च मेऽष्टावि छं शतिश्च मे द्वात्रि छं शच मे द्वात्रि छं शच मे षड्वि छं शच मे पड्वि छं, शच मे चत्वारि छं, शच मे चत्वारि छं, शच मे चतुश्चत्वारि छं, शच मे चतुश्चत्वारि छं, शच मेऽष्टाचत्वारि छं, शच मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।

(यजु. 18.25)

4 x 1 =	4	4 x 7 =	28
4 x 2 =	8	4 x 8 =	32
4 x 3 =	12	4 x 9 =	36
4 x 4 =	16	4 x 10 =	40
4 x 5 =	20	4 x 11 =	44
4 x 6 =	24	4 x 12 =	48

3) संख्याएँ 1 से 100 तक -

एकस्मै स्वाहा त्रिभ्यस्स्वाहा पञ्चभ्यस्स्वाहा सप्तभ्यस्स्वाहा नवभ्यस्स्वाहेकादशभ्यस्त्वाहा त्रयोदशभ्यस्त्वाहा पञ्चदशभ्यस्त्वाहा सप्तदशभ्यस्त्वाहेकान्न विश्शत्यै स्वाहा नवविश्शत्यै स्वाहेकान्न चंत्वारिश्शते स्वाहा नवंचत्वारिश्शते स्वाहेकान्न षष्टयै स्वाहा नवषष्टयै स्वाहेकान्नाऽशीत्यै स्वाहा नवांशीत्यै स्वाहेकान्न शताय स्वाहा शताय स्वाहा सर्वस्मै स्वाहा ॥

(तैत्ति. सं. 7.2.11)

तौत्तरीय संहिता के इस मंत्र में 1 से लेकर 100 तक संख्याओं का उल्लेख है जैसे – 1, 3, 5, 7, 9, 11, 13, 15, 17, 19, 29, 39, 59, 69, 79, 89, 99, 100

4) 2 का पहाड़ा 20 तक –

द्वाभ्याः स्वाहा चतुर्भ्यस्स्वाहा षड्भ्यस्स्वाहाऽष्टाभ्यस्स्वाहा दशभ्यस्स्वाहा द्वाभ्यस्स्वाहा द्वादशभ्यस्स्वाहा चतुर्दशभ्यस्स्वाहा षोडशभ्यस्स्वाहाऽष्टादशभ्यस्स्वाहा विश्शत्यै स्वाहाऽष्टानवत्यै स्वाहा शताय स्वाहा सर्वस्मै स्वाहा ॥

(तैत्ति. सं. 7.2.13)

सीढ़ियों के निर्माण में इसका प्रयोग किया जाता है जैसे पहली सीढ़ी 2 फीट पर है तो अगली सीढ़ी 4 फीट पर होगी इसी कम में आगे बढ़ती रहेगी। तैत्तिरीय संहिता के इस मंत्र में 2 का पहाड़ा 20 तक एवं 2 के गुणज 98 एवं 100 का उल्लेख है।

2, 4, 6, 8, 10, 12, 14, 16, 18, 20, 98, 100

5) 4 और 5 का पहाड़ा 20 तक -

# चतुर्भ्यस्त्वाहाष्टाभ्यस्त्वाहा द्वादशभ्यस्त्वाहा षोडशभ्यस्त्वाहा विश्शत्यै स्वाहा षण्णवत्यै स्वाहा शताय स्वाहा सर्वस्मै स्वाहा ॥

(तैत्ति. 7.2.15)

तैत्तिरीय संहिता के इस मंत्र में 4 का पहाड़ा 20 तक एवं 4 का गुणज 96 एवं 100 का उल्लेख है। जैसे- 4, 8, 12, 16, 20, 96, 100

# पञ्चभ्यस्त्वाहा दशभ्यस्त्वाहा पञ्चदशभ्यस्त्वाहा विश्शत्ये स्वाहा पञ्चनवत्ये स्वाहा शताय स्वाहा सर्वस्मै स्वाहा ॥

(तैत्ति. 7.2.16)

तौत्तिरीय संहिता के इस मंत्र में 5 का पहाड़ा 20 तक एवं 5 का गुणज 95 एवं 100 का उल्लेख है। जैसे- 5, 10, 15, 20, 95, 100

6) 10 का पहाड़ा 100 तक -

दशभ्यस्स्वाहा विश्वात्यै स्वाहा त्रिश्वाते स्वाहा चत्वारिश्वाते स्वाहा पश्चावाते स्वाहा षष्ट्यै स्वाहा सप्तत्यै स्वाहाऽशीत्यै स्वाहा नवत्यै स्वाहा शताय स्वाहा सर्वस्मै स्वाहा ॥

(तैत्ति. 7.2.17)

वर्तमान समय में संख्याओं के इन क्रम का प्रयोग सामान्यतः कई स्थानों पर देखने को मिलता

है। तैत्तिरीय संहिता के इस मंत्र में 10 के गुणज का उल्लेख किया गया है। जैसे - 10, 20, 30, 40, 50, 60, 70, 80, 90, 100

# 7) द्विपदा याश्चचतुष्पदास्त्रिपदा याश्च षद्धदाः।

## विच्छन्दा याश्च सच्छन्दाः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ॥

(यजु. 23.34)

अर्थात् अंक कमों में जो द्विपदा 2 + 2 के अनुसार है, जो त्रिपदा 3 + 3 के अनुसार है, जो चतुष्पदा अर्थात् 4 + 4 के अनुसार पद रखते हुए आगे बढ़ते हैं और जो षद्ददा अर्थात् 6 + 6 के अनुसार पग आगे बढ़ाते हैं वे 'सूचीभिः' सूई के समान कमशः सब को एक सूत्र में बांधे रखती हैं।

### 8) क्रमसूचक संख्याएँ

प्रथमा द्वितीयेषु श्रयध्वम् । द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम् । तृतीयाश्चतुर्थेषु श्रयध्वम् । चतुर्थाः पश्चमेषु श्रयध्वम् । पश्चमाः षष्ठेषु श्रयध्वम् । षष्ठाः सप्तमेषु श्रयध्वम् । सप्तमाः अष्टमेषु श्रयध्वम् । अष्टमाः नवमेषु श्रयध्वम् । नवमाः दशमेषु श्रयध्वम् । दशमा एकादशेषु श्रयध्वम् । एकादशा द्वादशेषु श्रयध्वम् । द्वादशास्त्रयोदशेषु श्रयध्वम् । त्रयोदशाश्चतुर्दशेषु श्रयध्वम् । चतुर्दशाः पञ्चदशेषु श्रयध्वम् । पञ्चदशाः षोडशेषु श्रयध्वम् । षोडशाः सप्तदशेषु श्रयध्वम् । सप्तदशाः अष्टादशेषु श्रयध्वम् । अष्टादशाः एकान्नविँशेषु श्रयध्वम् । एकान्नविँशाः विँशेषु श्रयध्वम् । विँशा एकविँशेषु श्रयध्वम् । चतुर्विशाः पञ्चविँशेषु श्रयध्वम् । द्वाविँशास्त्रयोविँशेषु श्रयध्वम् । त्रयोविँशास्त्रयविँशेषु श्रयध्वम् । चतुर्विँशाः पञ्चविँशोषु श्रयध्वम् । पञ्चविँशाः षि श्रयध्वम् । पञ्चविँशाः पञ्चविँशोषु श्रयध्वम् । प्रान्नविँशोषु श्रयध्वम् । द्वानिँशास्त्रयिँशेषु श्रयध्वम् । प्रान्नविँशोषु श्रयध्वम् । द्वानिँशास्त्रयिँशोषु श्रयध्वम् । विँशाः पकिँशोषु श्रयध्वम् । एकिःत्रिँशा द्वानिँशोषु श्रयध्वम् । द्वानिँशास्त्रयिँशोषु श्रयध्वम् । द्वानिँशास्त्रयोष्ठिंशोषु श्रयध्वम् ।

(तैत्तिरीयब्राह्मणम् - 3/11/2/1-4)

1<sup>st</sup> -2<sup>nd</sup>; 2<sup>nd</sup>-3<sup>rd</sup>; 3<sup>rd</sup>-4<sup>th</sup>; 4<sup>th</sup>-5<sup>th</sup>; 5<sup>th</sup>-6<sup>th</sup>; 6<sup>th</sup>-7<sup>th</sup>; 7<sup>th</sup>-8<sup>th</sup>; 8<sup>th</sup>-9<sup>th</sup>; 9<sup>th</sup>-10<sup>th</sup>; 10<sup>th</sup>-11<sup>th</sup>; 11<sup>th</sup>-12<sup>th</sup>; 12<sup>th</sup>-13<sup>th</sup>; 13<sup>th</sup>-14<sup>th</sup>; 14<sup>th</sup>-15<sup>th</sup>; 15<sup>th</sup>-16<sup>th</sup>; 16<sup>th</sup>-17<sup>th</sup>; 17<sup>th</sup>-18<sup>th</sup>; 18<sup>th</sup>-19<sup>th</sup>; 19<sup>th</sup>-20<sup>th</sup>; 20<sup>th</sup>-21<sup>st</sup>; 21<sup>st</sup>-22<sup>nd</sup>; 22<sup>nd</sup>-23<sup>rd</sup>; 23<sup>rd</sup>-24<sup>th</sup>; 24<sup>th</sup>-25<sup>th</sup>; 25<sup>th</sup>-26<sup>th</sup>; 26<sup>th</sup>-27<sup>th</sup>; 27<sup>th</sup>-28<sup>th</sup>; 28<sup>th</sup>-29<sup>th</sup>; 29<sup>th</sup>-30<sup>th</sup>; 30<sup>th</sup>-31<sup>st</sup>; 31<sup>st</sup>-32<sup>nd</sup>; 32<sup>nd</sup>-33<sup>rd</sup>. व संख्याएँ जो हमें किसी वस्तु की मात्रा के बजाय उसकी सटीक स्थिति बताती हैं, वे क्रमसूचक संख्याएँ कहलाती हैं । इस उपर्ययुक्त ब्राह्मण मन्त्र में जो क्रम सूचक संख्या हैं उनमें से त्रयिश्वंश (33) तक की संख्या का उल्लेख कमशः किया गया है । प्रपञ्च के किसी भी संस्कृति में इस तरह की क्रमसूचक संख्याओं का ज्ञान एक विशिष्ट उपलब्धि थी ।



चित्र 9.1 - क्रमसूचक संख्याओं के द्वारा सौरमण्डल में क्रमशः ग्रहों की स्थिति

#### 9.4 भिन्न परिकर्म -

यजुर्वेद में चतुर्थांस अर्थात् ¼ के लिए 'पाद' शब्द का प्रयोग हुआ हैं।

त्रिपादूर्ध्व **ऽ उदैत्पुरूषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः।** (यजु. 31.4

परमात्मा का त्रिपाद अर्थात् ¾ अंश संसार के बाहर है और एक पाद अर्थात् ¼ अंश यह संसार है।

कला 1/16, कुष्ठा 1/12, शक्त 1/8, पाद या पद ¼ अंशः / ऋग्. 7.32.12 / भागम् / ऋग. 8.100.1 भाग या हिस्से के अर्थ मे अंश और भाग शब्दों का प्रयोग हुआ है।

भिन्नों का प्रयोग गणना कार्य में किया जाता हैं।

# विन्यस्य भज्यमानं तस्याधःस्थेन भागहारेण। सदृशापवर्तविधिना भागं कृत्वा फलं प्रवदेत् ॥

(गणित सार संग्रह. 2.18)

अभयनिष्ठ खण्ड को विलग करते हुए भाज्य के नीचे भाजक को लिखकर शेष प्राप्त कीजिए।

प्रतिलोमपथेन भजेद् भाज्यमधःस्थेन भागहारेण। सहशापवर्तनविधिर्यद्यस्ति विधाय तमपि तयोः॥

(गणित सार संग्रह. 2.19)

प्रतिलोम विधि द्वारा बाएँ से दाहिनी और भाग संक्रिया की जाती है।

## 9.5 शून्य क्या है -

शून्य के लिए वेदो में 'ख' शब्द का प्रयोग हुआ है। 'ख' का अर्थ है – आकाश, इन्द्रिय, रिक्त स्थान, छिद्र, द्वार, अन्तरिक्ष।

**"खे रथस्य।"** (ऋग. 8.91.7) अर्थात् रथ के छिद्र में

"ओं खं ब्रह्म।" (यजु. 40.17)" अर्थात् ब्रह्म आकाशवत् शून्य हैं।

ऊँ पूर्णमदः पूर्णिमदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाविशष्यते ॥

(बृहदारण्यक उपनिषद 5.1.1)

इस किण्डिका में शून्य संख्या की ओर संकेत किया गया है। मंत्र में कहा गया है, यह भी पूर्ण है, वह भी पूर्ण है, पूर्ण से पूर्ण की उत्पत्ति होती है। शून्य में शून्य जोड़ने या घटाने पर शून्य ही रहता है।

शून्य का कम्प्यूटर की बायनरी भाषा (0,1) में उल्लेख है।

कम्प्यूटर किसी भी नम्बर को सर्वप्रथम बायनरी भाषा में परिवर्तित करता है फिर उस पर ऑपरेशन कियान्वित करता हैं।

# यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि श्रिताः । अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्युते ॥

(कठोपनिषदु)

कठोपनिषद् में शून्य तथा अन्नत के बारे में उल्लेख किया गया है । यदि किसी व्यक्ति के हृदय की सभी इच्छाएँ या कामनाएँ पूर्ण अथवा शून्य हो जाती है तब व्यक्ति मोक्ष अथवा अन्नत को प्राप्त कर ब्रह्मा के समतुल्य हो जाता है । आधुनिक गणित में उपयुक्त विचार को निम्न प्रकार से व्यक्त किया जाता है –

$$\lim_{W\to 0}\frac{R}{W}=\infty$$

जहाँ R = अधिकार या आधिपत्य

W = इच्छाएँ या कामनाएँ

यदि W=0 तब राशि  $\frac{R}{0}=\infty$  (अनन्त या मोक्ष)

#### 9.6 ज्यामिति या रेखागणित -

कासीत् प्रमा प्रतिमा किं निदानमाज्यं किमासीत् परिधिः क आसीत्। छन्दः किमासीत् प्रउगं किमुक्थं यद्देवा देवमयजन्त विश्वे॥

(ऋग. 10.130.3)

ऋग्वेद के इस मन्त्र में रेखागणित से सम्बद्ध ये शब्द हैं।

प्रमा – नाम, परिमाण

- 2) प्रतिमा नक्शा, रूपरेखा
- 3) निदानम् कारण, मूल सिद्धान्त
- 4) परिधि घेरा
- 5) छन्द नापने का साधन, रज्जु
- 6) प्रउग शुल्बसूत्रों में समद्विबाहु त्रिभुज

# चतुर्भिः साकं नवतिं च नामभिः चक्रं न वृत्तं त्यतीँरवीविपित्।

(ऋग. 1.155.6)

एक वृत्त में  $4 \times 90 = 360$  अंश होते हैं। ऐसे कालचक को भगवान विष्णु घुमाते हैं। एक वृत्त में 90 अंश के 4 खण्ड़ त्रिज्या होते हैं।

# द्वाद्श प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तिचकित। तस्मिन् त्साकं त्रिशता न शङ्कवो ऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः॥

(ऋग. 1.164.48, अथर्व.10.8.4)

एक चक्र है, उसमें 12 प्रियाँ है, अर्थात् 30-30 अंश पर 12 अरे हैं पूरे चक्र में 120 अंश वाले 3 केन्द्र बिन्दु हैं। पूरे चक्र में 360 अंश हैं।

# तिरञ्चीनो विततो रिमरेषामधः स्विदासी ३ दुपरि स्विदासी ३ त्।

(यजु. 33.74)

यह सूर्य की किरणों का वर्णन है। ये तिरछी आती हैं, फिर नीचे फैलती हैं और फिर ऊपर तिरछी जाती हैं। इस प्रकार त्रिभुज की तीन भुजाएँ होती हैं। नीचे एक रेखा और दोनों ओर दो तिरछी रेखाएँ। इस प्रकार त्रिकोण की अनेक आकृतियाँ बनाई जा सकती हैं।

## यज्ञवेदि और रेखागणित -

# द्विप्रमाणा चतुः करणी, त्रिप्रमाणा नवकरणी, चतुः प्रमाणा षोड़शकरणी अर्थप्रमाणेन पादप्रमाणं विधीयते। - कात्यायन शुल्बसूत्र

अर्थात दोगुनी रेखा से 4 वर्ग बनेगे, तिगुनी रेखा से 9 वर्ग बनेगे, चौगुनी रेखा से 16 तथा आधी

रेखा से चौथाई वर्ग बनेगा। जितने मात्रक किसी रेखा में होगे, वर्गों की उतनी ही पंङ्कियां उसके वर्ग में होगी।

1) पाइथागोरस प्रमेय का ज्ञान बोधायन शुल्बसूत्र में मिलता हैं।

# दीर्घचतुस्रस्याक्ष्णयारज्जुः पार्श्वमानी तिर्यद्वानी च।

यत्पृथग्भूते कुरुतस्तदुभयं करोति॥

(बौधायन शुल्बसूत्र 1.48)

अर्थात् दीर्घचतुस्थ (आयत) की तिर्यक्क्मनी और पार्श्वमानी भुजाएँ जो 2 वर्ग बनाती हैं, उनके योग के बराबर अकेली अक्ष्ण्यारज्जु वर्ग बनाती है।

2) पाई का मान – मानव शुल्बसूत्र में कहा गया है कि 2 हाथ का वर्ग, एक हाथ, तीन अंगुल अर्घव्यास पर बने हए वृत्त के बराबर होता है।

# यूपावटाः पद्विष्कम्भाः त्रिपद्परिणाहानि यूपोपराणीति।

(बौ. शु 1-112-113)

बोधायन ने वृत्त को वर्ग में परिणत करने के लिए एक नियम बताया था, जिसमें आर्यभट्ट ने पाई का मान 3.1416 निकाला।

चतुरिधकं शतमष्टगुणं द्वाषष्टिस्तथा सहस्त्राणाम् । अयुतद्वयविष्कम्भस्या आसन्नो वृत्तरिणाहः। (आर्यभटीय गणितपाद)

10 अर्थात् अयुतद्वय 20000 प्रमाण व्यास वाले वृत की परिणाह (परिधि) 1000 में 62 से गुणित तथा 104 में 8 से गुणित संख्या को जोड़ने से प्राप्त संख्या आसन्न होती है।

$$(1000x62) + (104x8) = 6200 + 832 = 62832$$

पाई 
$$(\pi) = \frac{62832}{20000} = 3.1416$$

भास्कराचार्य ने लीलावती में π के मान का स्थूल रूप बताया है। 7 से विभाजित 22 को व्यास से गुणा करने पर उस परिधि का स्थूल मान प्राप्त होता है। आर्कमिड़ीज ने बाद में पाई का मान 3.1428 निकाल लिया था।

3) करणी का ज्ञान आपस्तंब शुल्बसूत्र में उल्लिखित है –

# करणीं तृतीयेन वर्धयेत्तच्च चतुर्थेनात्मचतु स्त्रिंशोनेन स विशेषः।

(का.शु.सू. 2.13)

- 4) भिन्न -
- 1 भिन्नों के योग

# छेदगुणं सछेदं परस्परं तत् सवर्णत्वम्।

(आर्यभट्टीय, गणितपाद 27)

विभिन्न भिन्नों के योग प्राप्त हेतु उन्हें समभिन्न बनाने हेतु उपयुक्त संख्या से गुणा करें।

2. गुणन संक्रिया के गुण

शून्यर्णयोः ख धनयोः।

**ख शून्ययोर्वा वधः शून्यम्॥** (बाह्मस्फुट सिद्धान्त कुट्टकाधाय,33)

किसी संख्या, धन या ऋण का शून्य से गुणा करने पर गुणन फल शून्य आता हैं।

ऋणमृणधनयोर्घातो धनमृणयोर्धनवधो धनं भवति।

शून्यर्णयोः ख धनयोः ख शून्ययोर्वा वधः शून्यम्॥

(ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त कुट्टकाधाय, 33)

ऋणात्मक संख्या एवं धनात्मक संख्या का गुणन करने पर ऋणात्मक संख्या प्राप्त होती है एवं 2 ऋणात्मक संख्याओं का गुणन करने पर धनात्मक संख्या प्राप्त होती है एवं 2 धनात्मक संख्याओं का गुणन करने पर धनात्मक संख्याओं का गुणन करने पर धनात्मक संख्या प्राप्त होती है।

3. योग संक्रिया

# तव च्यौत्नानि वज्रहस्त तानि नव यत् पुरो नवतिं च सद्यः।

(ऋग्वेद. 7.19.5)

द्विअंकीय संख्याओं के योग का उल्लेख है।

4. घटाव **–** 

**ऊनमधिका द्विशोध्यं धनं** (ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त कुट्टकाधाय. 31)

बड़ी संख्या से छोटी संख्या को घटाने पर शेषफल धनात्मक प्राप्त होता है। प्राचीन भारतीय गणित के सिद्धांतो का आधुनिक गणित में प्रयोग कई स्थानों पर मिलता हैं।

# 9.8 आर्यभट्टीय पद्धति एवं कटपयादि पद्धति

## आर्यभट्टीय पद्धति –

# वर्गाक्षराणि वर्गेऽवर्गेऽवर्गाक्षराणि कात् ङमौ यः ।

# खद्विनवके स्वरा नव वर्गेऽवर्गे नवान्त्यवर्गे वा ॥

वर्गाक्षर में क वर्ग से प वर्ग तक ( क से प तक  $5 \times 5 = 25$ ) संख्याएँ होती हैं एवं अ वर्ग में य से ह तक 30 से 100 तक संख्याएँ है । इकाई, दहाई आदि के लिए अ से औ तक 9 स्वर हैं । इस प्रकार पराद्ध तक की संख्या वर्णों के द्वारा बताई जा सकती है जैसे –

$$\xi = 10^2$$
  $3 = 10^4$   $= 10^6$ 

ओ = 
$$10^{14}$$
 औ =  $10^{16}$ 

43,20,000 को हम आर्यभट्टीय पद्धति में खुयुघृ से लिख सकते है।

ख = 2, उ = 10 हजार गुना अर्थात् 20 हजार, यु का अर्थ होगा 3 का 10 हजार गुना = 3 लाख, घ का अर्थ होगा 4 एवं ऋ का 10 लाख गुना अर्थात् 40 लाख। अतः संख्या इस प्रकार लिखी जा सकती है।

$$\mathbf{g} = 20,000 \qquad \qquad \mathbf{g} = 3,00,000$$

इसका सूत्र आर्यभट्ट प्रथम ने दिया था।

## कटपायादि पद्धति –

नञावचरच शून्यानि, संख्याः कटपयादयः ।

मिश्रे तूपान्त्यहल् संख्या, न च चिन्त्यो हलस्वरः ॥

(सद्ररत्नमाला)

न और ज, स्वर शून्य अंक को बताते हैं। क्, ट्, प् और य् से आरंभ होने वाले व्यञ्जन संख्या 1,2,3 को बताते हैं। मिश्र व्यञ्जनों में केवल स्वरयुक्त अंतिम व्यञ्जन ही संख्यासूचक होता है।

सारणी 9.1 - अङ्कों के लिए प्रयुक्त संकेत-शब्द

अङ्क	संकेत - शब्द
0	शून्य, ख, अम्बर, गगन, नभ, वियत्, अनन्त
1	चन्द्र, इन्दु, विधु, सोम, अब्ज, भू, धरा, गो, रूप, तनु
2	यम, अश्विन, नेत्र, अक्षि, कर्ण, कर, पक्ष, द्वय, अयन, युगल
3	राम, गुण, त्रिगुण, भुवन, काल, अग्नि, त्रिनेत्र, लोक, पुर
4	वेद, श्रुति, सागर, वर्ण, आश्रम, युग, तुर्य, कृत, अय, दिश्
5	बाण, शर, इषु, भूत, प्राण, तत्त्व, इंद्रिय, विषय, पाण्डव
6	रस, अंग, ऋतु, दर्शन, अरि, तर्क, कारक, षण्मुख
7	नग, अग, पर्वत, ऋषि, मुनि, वार, स्वर, छन्द, द्वीप, धातु, अश्व
8	वसु, अहि, नाग, गज, सर्प, सिद्धि, भूति, अनुष्टुप्
9	अंक, नन्द, निधि, ग्रह, रंध्र, छिद्र, द्वार, दुर्गा
10	दिश्र, दिशा, अंगुलि, पंक्ति, ककुभ, रावणशिर, अवतार
11	रुद्र, ईश्वर, हर, ईश, भव, महादेव, अक्षौहिणी
12	रवि, सूर्य, अर्क, मास, राशि, व्यय, भानु, दिवाकर
13	विश्वेदेवाः, विश्व, काम, अतिजगती
14	मन, विद्या, इन्द्र, शक, लोक
15	तिथि, दिन, अहन्
16	नृप, भूप, भूपति, अष्टि, कला
17	अत्यष्टि
18	धृति, पुराण

19	अतिधृति
20	नख, कृति
21	उतकृति, प्रकृति, स्वर्ग
22	आकृति
23	विकृति
24	गायत्री, जिन, अर्हत्, सिद्ध
27	नक्षत्र, उडु, भ
32	दन्त, रद
33	देव, अमर, सुर, त्रिदश
48	जगती
49	तान 🧲

# 9.9 भू-माप की इकाईयाँ –

प्राचीनकाल में भू-भाग की लम्बाई एवं क्षेत्रफल ज्ञात करने के लिए निम्न इकाईयों का उपयोग किया जाता था।

## सारणी 9.2

८ परमाणु =	1 त्रसरेणु	24 अंगुल =	1 हस्त
8 त्रसरेणु =	1 रेणु/लिक्षा	4 हस्त =	1 दण्ड
8 रेणु/लिक्षा =	1 बालाग्र/यूकामध्य	10 दण्ड =	1 रज्जु
8 बालाग्र =	1 लिख्य/यवमध्य	2 रज्जु =	1 परिदेश
8 लिख्य =	1 युक	3 रज्जु =	1 निवर्तन
8 युक =	1 यव	10 निवर्तन / 300 दण्ड =	1 धनु
8 यव =	1 अंगुल	1000 दण्ड =	1 मील
4 अंगुल =	1 धनुर्ग्रह	2000 दण्ड =	1 कोस

8 अंगुल =	1 धनुर्मुष्टि	4 कोस =	1 योजन
12 अंगुल =	1 वितास्ति	1 योजन =	5 मील = 8 कि.मी.
14 अंगुल =	1 पद		

सूर्य सिद्धान्त में पृथिवी की परिधि  $4\times 10^7$  दण्ड बताई है । वर्तमान समय में पृथिवी की परिधि को  $4\times 10^7$  मीटर में मापा जाता है अर्थात् 1 दण्ड = 1 मीटर सिद्ध होता है ।



#### अभ्यास प्रश्न 🖋

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए।

- (1) कम्प्यूटर निर्देशों को किस भाषा में परिवर्तित करता है -
  - अ) असेम्बली भाषा
- ब) बायनरी भाषा
- स) क व ख दोनों
- घ) इनमें से कोई नहीं
- (2) सम्पूर्ण वृत्त पर कितने अंश का कोण बनता है -
  - अ)  $90^0$

ब)  $100^{0}$ 

स)  $45^0$ 

- द) 360<sup>0</sup>
- (3) एक अयुत है
  - अ)  $10^2$

=  $10^3$ 

स)  $10^4$ 

द) 10

## प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

- (1) रथ में सिथत छिद्र....संख्या को दर्शाता है।
- (2) बायनरी संख्या......है।
- (3)  $10^2$  का मान........ है।

## प्र.3 निम्निलिखित कथनों के सामने सत्य (√) अथवा असत्य (×) का चिह्न अंकित कीजिए।

- (1) 1, 3, 5, 7 विषम संख्याएँ है।
- (2) 2, 4, 6, 8 सम संख्याएँ है।
- (3) आर्यभट्ट ने पाई का मान 3.1416 निकाला था।

## प्र.4 सही जोड़ी मिलान कीजिए।

कॉलम 'अ' कॉलम 'ब'

- (1) अर्बुद
- क)  $10^2$
- (2) नियुत
- ख) 10<sup>6</sup>

- (3) प्रयुत
- ग)  $10^5$
- (4) शत
- ਬ)  $10^7$

## प्र.5 अति लघूत्तरीय प्रश्न

- (1) यज्ञवेदि का निर्माण किन सूत्रों पर आधारित होता है ?
- (2) सम संख्याओं एवं विषम संख्याओं का क्या उपयोग है ?

## प्र.6 लघूत्तरीय प्रश्न

- (1) पाई का मान निकालने की आर्यभट्ट की विधि लिखिए।
- (2) बौधायन शुल्बसूत्र के द्वारा पाइथागोरस प्रमेय को समझाइए।

## प्र.7 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) ज्यामिति या रेखागणित को वेद वाड्यय के परिपेक्ष्य मे समझाइए।



# अध्याय - 10

# सामाजिक वानिकी एवं जैवविविधता की परिकल्पना

# अध्ययन बिन्दु

10.1	प्रस्तावना
10.2	वाल्मिकी रामायण में पौधों की विविधता का वर्णन
10.3	चित्रकूट वन
10.4	पञ्चवटी वाटिका
10.5	नक्षत्र वाटिका
10.6	औषधीय पर्वत अल्पाइन क्षेत्र (हिमालयी वन)
10.7	अशोक वाटिका
10.8	किष्किंधा वानिकी
10.9	दण्डकारण्य वानिकी
10.10	वैदिक वाङ्मय में जैव विविधता

#### 10.1 प्रस्तावनाः -

जैव विविधता को सभी स्त्रोतों, स्थलीय, समुद्री और अन्य जलीय परिस्थित की प्रणालियों और पारिस्थितक परिसरों के सिहत जीवों एवं पौधों के बीच परिवर्तनशीलता के रूप में परिभाषित किया जाता है।

पृथिवी पर विद्यमान सभी जीवित प्राणी, पौधे, जीव, सूक्ष्मजीव, मिट्टी, जल और पारिस्थिति की तन्त्र मिलकर जैव विविधता बनाते हैं।

संस्कृत वाङ्मय के प्राचीन ग्रन्थ रामायण एवं महाकवि कालिदास द्वारा रचित कुमारसंभवम् आदि ग्रन्थों में प्रकृति का सजीव चित्रण किया है।

## 10.2 वाल्मिकी रामायण में पौधो की विविधता का वर्णन -

प्रसिद्ध महाकाव्य रामायण में चित्रकूट वनम् दण्डक आरण्य वन, किष्किंधा वन, अशोक वाटिका एवं हिमालय पर्वत श्रेणियो में स्थित वनों के बारे में बताया गया है। प्राणदायक हिमालयी सन्जीवनी औषिध का भी उल्लेख मिलता है।

#### रामायण में वर्णित वनों के प्रकार:-

- शांतम्
- 中
   时
   す
- 4. वीभत्स

वनों के स्वभाव के आधार पर उपरोक्त वर्गीकरण किया गया था एवं चार प्रमुख पारिस्थितिकि तन्त्र शामिल है-

- 1. उष्णकटिबंधीय पर्णपाती वन
- 2. शुष्क और नम पर्णपाती वन
- 3. सदाबहार उष्णकटिबंधीय वन
- 4. अल्पाइन क्षेत्र अर्धवन (हिमालयी)

रामायण में वनस्पतियों जीवों, जल, वनों, भूमि का वर्णन विस्तारपूर्वक किया गया हैं। आकार की दृष्टि से वनों को 2 भागों में बाटा गया हैं।

- प्रमुख वन चित्रकूट एवं दण्डकारण्य
- 2. उपवन पञ्चवटी वन

दण्डकारण्य वन में निद्यों झीलों, तालाबों एवं जलीय पौधे कमल और जल लिली का उल्लेख मिलता है सभी तत्त्व मिलकर पारिस्थिक तन्त्र का निर्माण करते हैं एवं झरनों से बहता जल मृदा में नमी को बनाए रखने में मदद करता है। घने जंगल जल चक्र में एक संरक्षण तत्त्व के रूप में कार्य करते हैं।

# 10.3 चित्रकूट वनः-

उष्णकटिबंधीय पर्णपाति वन

स्थान- मध्यप्रदेश के सतना जिले की सीमा एवं उत्तरप्रदेश के चित्रकूट जिले की सीमा पर स्थित है।

जलवायु- निदयों, झीलों, तालाबों आदि जल के स्रोत की उपस्थिति के कारण इस क्षेत्र की शीत जल वायु है एवं घने वन जल चक्र को संरक्षण प्रदान करते हैं।

वर्षा- इस क्षेत्र में दक्षिण-पश्चिमी मानसून द्वारा वर्षा होती है।

वनस्पतियाँ- आकार की दृष्टि से यह प्रमुख वन की श्रेणी के अंतर्गत आता था। इस वन क्षेत्र में नदी, तालाब, झरनें, जलधाराएँ एवं कमल, लिली प्रजाति के पौधे हैं। जल का सतत् प्रवाह वातावरण में नमी को बनाए रखता है।



चित्र 10.1- चित्रकूट वन

2 प्रकार की वनस्पतियाँ विद्यमान थी।

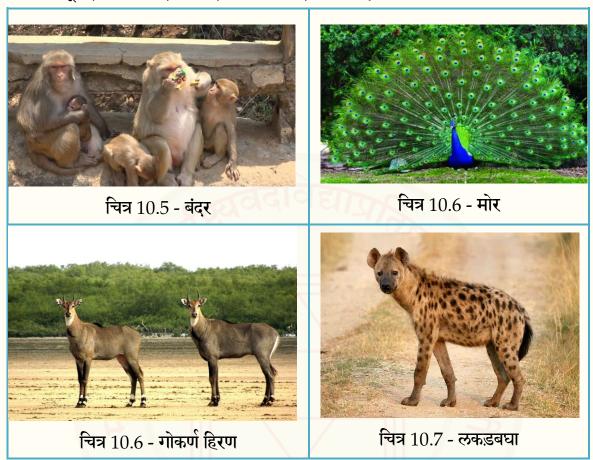
1. खाद्य वनस्पति 2. अखाद्य वनस्पति

आम, कटहल, आँवला एवं खट्टा फल जिसे भव्य के नाम से जाना जाता था। पुष्पीय पौधे लोध्र, नीपा, तिलका, नीम बिजाका आदि।

औषधीय पौधे:- श्वेताकांतकारी, बाह्मी, कतुका, अतीस आदि



जीवः- चित्रकूट के जंगल में पाए जाने वाले जीवो में बंदर, कोयल, भैंस, मोर, भालू, सारस, जंगली सूअर, लकड़बघा, भेड़िया, गोकर्ण हिरण, शेर आदि थे।



## 10.4 पञ्चवटी वाटिका -

स्कंद पुराण मे वर्णित पञ्चवटी का वैज्ञानिक विश्लेषण करने से यह स्पष्ट होता है कि इसकी संरचना में आयुर्वेद, वानिकी, मनोविज्ञान वास्तुशास्त्र एवं पर्यावरण संरक्षण के ज्ञान का उपयोग हुआ है।

## 1. औषधीय महत्व -

इन 5 वृक्षों में अद्वितीय औषधीय गुण हैं। इनमें वे समस्त गुण निहत हैं जिससे मनुष्य दीर्घायु रहकर अपने समस्त रोगों का निदान कर सकता है। आँवला विटामिन सी का सबसे समृद्ध स्रोत है एवं शरीर को रोग प्रतिरोधी बनाने की महाऔषधि है। बरगद का दूध बहुत बलदायी होता है। इसके प्रतिदिन सेवन से शरीर का कायाकल्प हो जाता है। जीवनी शक्ति में विलक्षण अभिवृद्धि होती है एवं शरीर में नवचेतना का संचार होता है। पीपल रक्त विकार दूर करन वाला वेदनाशामक एवं शोथहर होता है। बेल पेट सम्बधी बीमारियों की अचूक औषि है तो अशोक स्त्री विकारों को दूर करने वाला प्रमुख औषधीय वृक्ष है।

#### 2. पर्यावरणीय महत्त्व -

- 1. बरगद शीतल छाया प्रदान करने वाला एक विशाल वृक्ष है। गर्मी के दिनो में अपराह्न में जब सूर्य की प्रचंड़ किरणें असह्य गर्मी प्रदान करती हैं एवं तेज लू चलती है तो पञ्चवटी में पश्चिम के तरफ स्थित वटवृक्ष सघन छाया उत्पन्न कर पञ्चवटी को ठंड़ा व वातानुकृलित रखता है।
- 2. पीपल प्रदूषण शोषण करने एवं प्राण वायु उत्पन्न करने का सर्वोत्तम वृक्ष है। प्रातःकाल जब नवीन आभा लिए अरुणोद्य होता है तो सूर्य की निर्मल रिश्मयों से पीपल का वृक्ष आध्यात्मिक वातावरण उत्पन्न करता है एवं इसके प्रभाव में आने वाले प्राणियों की मेधा प्रखर होती है। सम्भवतः इसी प्राप्त हुआ एवं इसका नाम "बोधि-वृक्ष" पड़ा।
- 3. अशोक सदाबहार वृक्ष है यह कभी पर्ण-रहित नहीं रहता एवं सदैव छाया प्रदान करता है।
- 4. बेल की पत्तियों काष्ठ एवं फल में तेल ग्रन्थियाँ होती हैं जो वातावरण को सुगन्धित रखती हैं।
- 5. पछुआ एवं पुरूवा दोनों की तेज हवाओं से वातावरण में घूल की मात्रा बढ़ती है जिसको पूरब व पश्चिम में स्थित पीपल एवं बरगद के विशाल वृक्ष अवशोषित कर वातावरण को शुद्ध रखते हैं।

## 3. धार्मिक महत्त्व -

बेल व बरगद मे भगवान शंकर का निवास माना गया है तो पीपल और आंवले में विष्णु का। अशोक शोक नाशक व सीता की स्मृति से जुड़ा है।

#### 4. जैव विविधता संरक्षण -

पञ्चवटी में निरन्तर फल उपलब्ध होने से पक्षियों एवं अन्य जीव-जन्तुओं के लिए सदैव भोजन उपलब्ध रहता है एवं वे इस पर स्थाई निवास करते हैं। पीपल व बेल का फल ग्रीष्म ऋतु में पकता है तो बरगद का वर्षाकाल एवं आंवला का जाड़े में। पीपल व बरगद कोमल काष्ठीय वृक्ष हैं जो पिक्षयों के घोंसला बनाने के लिए उपयुक्त हैं। कोटर एवं खोखल प्राकृतिक रूप से इनमें प्रचुरता से उपलब्ध होता है जिनमें पिक्षी एवं अन्य जीव जन्तु निवास करते हैं जिनके कलरव से पञ्चवटी सदैव गुंजायमान रहकर मानिसक प्रफुल्लता प्रदान करती है।

#### श्रेष्ठ छाया मिश्रण -

पञ्चवटी की संरचना के पीछे कदाचित "समिश्रण" की अवधारणा भी रही हो। जैसे कि भिन्न-भिन्न धातुओं को सुनिश्चित अनुपात, ताप व निश्चित वातावरण में सिम्मिश्रण से एक नयी धातु "मिश्र धातु" (एठाय) बनता है जो विशिष्ट गुण िठए होता है। आधुनिक विज्ञान में ऐसी मिश्रधातु का विशेष योगदान है एवं इनका उपयोग सर्वाधिक कठिन प्रयोगों, अन्तरिक्ष यान, वायुयान एवं रक्षा उपकरण बनाने में होता है। कई रसायनों एवं दवाओं को एक निश्चित अनुपात में मिलाने से चमत्कारिक औषधियां प्राप्त होती हैं। हमारे मनीषियों द्वारा भी प्राचीन काल में अनेक प्रयोगों, अनुभवों द्वारा इस प्रकार का मानव कल्याणकारी बहुपयोगी वृक्ष समूह पञ्चवटी अन्वेषित किया गया हो। पञ्चवटी की पाँच वृक्षों की छाया तेजोवलय, औषधीय गुण, पर्यावरणीय एवं अन्य विशिष्ट गुणों का समन्वय एक निश्चित अनुपात, मात्रा एवं तीव्रता के साथ सर्य व चन्द्र के प्रकाश में होने से विशिष्टता प्राप्त करता हो।

पञ्चवटी का अर्थ - पाँच पवित्र छायादार वृक्षों के समूह को पञ्चवटी कहते हैं।

पाँच का महत्त्व - हमारे पौराणिक ग्रन्थों में "पञ्च" (पाँच) शब्द का बड़ा महत्व है। "पञ्चभूत" (पाँच तत्वों) पृथिवी, जल तेज (अग्नि), वायु और आकाश से सृष्टि का निर्माण हुआ है। मानव शरीर को पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, त्वचा, चक्षु, नासिका, जिह्वा श्रोत (कान) एवं पांच कर्मेन्द्रियाँ पूर्ण करती हैं। ठीक इसी प्रकार पञ्चवटी का पांच प्रजातियों पीपल, बरगद, बेल अशोक व आंवला पर्यावरणीय पूर्णता की प्रतीक हैं।

रामायण की पञ्चवटी - रामायण में एक पवित्र स्थल (वन क्षेत्र) को पञ्चवटी के रूप में निरूपित किया गया है। जहाँ श्री राम ने सीता एवं लक्ष्मण के साथ पर्ण कुटीर का निर्माण कर वनवास का समय व्यतीत किया। वर्तमान में यह स्थान नासिक के पास है।

"कबन्ध रामायण" में गोदावरी नदी के दक्षिण तट पर एक वृत्तीय घेरे में स्थित पाँच विशाल वट वृक्ष (बरगद के वृक्ष) को पञ्चवटी कहा गया है। वनवास के समय श्री राम, सीता व लक्ष्मण ने इन पाँच वृक्षों के मध्य पर्ण कुटीर का निर्माण किया था। श्रीराम पञ्चवटी में ही निवास करते हुए पाप एवं अनीति के वाहकों का विनाश किया।



पुराण में वर्णित पञ्चवटी - पौराणिक ग्रन्थ 'स्कन्द पुराण' के हेमाद्रीय व्रत खण्ड के अनुसार पञ्चवटी का वर्णन निम्नानुसार है-

#### 1. पञ्चवटी -

पीपल (अश्वत्थ), बेल (बिल्व), बरगद (वट), आँवला (आमलकी) व अशोक (अङ्गनप्रिय) ये पांचो वृक्ष पञ्चवटी कहे गये हैं। इसकी स्थापना चार दिशाओं में करना चाहिए। अश्ववत्थ (पीपल) पूर्व दिशा में, उत्तर दिशा में वट (बरगद), पश्चिम दिशा में आंवला, दिशा दिशा अशोक की तपस्या के लिए स्थापना करनी चाहिए। पाँच वर्षों के पश्चात चार हाथ की सुन्दर व सुमनोहर वेदि की स्थापना बीच में कराना चाहिए। यह अनन्त फलों को देने वाली व तपस्या का फल प्रदान करने वाली है।

## 2. बृहद् पञ्चवटी -

बृहद् पञ्चवटी के मध्य भाग में चार बेल वृक्ष की स्थापना चारों दिशाओं में करना चाहिए। तत्पश्चात् चार वट वृक्ष का रोपण चारों कोनों में करना चाहिए। इसके बाद पच्चीस अशोक के वृक्ष गोलाकार रूप में रोपित करें। दक्षिण दिशा में दो आमलकी (आँवला) के वृक्षों का रोपण करना चाहिए एवं पीपल के चार वृक्षों को चारों दिशाओं में स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार बृहद् पञ्चवटी का निर्माण होता है।

#### कैसे लगाये ?

## पञ्चवटी -

सर्वप्रथम किसी समतल स्थान का चयन करना चाहिए। फिर केन्द्र से चारों दिशाओं में बीस-बीस हाथ (10-10 मीटर) पर निशान लगायें तथा पूरब एवं दक्षिण दिशा के मध्य अर्थात अग्नि कोण पर भी बीस हाथ (10 मीटर) पर मध्य में एक निशान लगा लें। इन चिह्नित किये गये जगहों पर गृहा बना लें। इनमें पूरब में पीपल, दक्षिण दिशा में आंवला, उत्तर दिशा में बेल, पश्चिम दिशा में वट वृक्ष (बरगद) एवं अग्निकोण पर अशोक वृक्ष की स्थापना पवित्र मन से करें। पाँच वर्ष पश्चात केन्द्र में चार हाथ लम्बा एवं चार हाथ चौड़ा (2 मी. X 2 मी.) का वर्गाकार सुन्दर वेदि का निर्माण करना चाहिए। वेदि सब ओर समतल होना चाहिए एवं चारों दिशाओं में इसका मुख होना चाहिए।

#### वृहदु पञ्चवटी -

यदि अधिक स्थान उपलब्ध हो तो बृहद् पञ्चवटी की स्थापना करें। पौधों का रोपण विधि उपरोक्तानुसार ही होगा। परन्तु इसकी परिकल्पना वस्तुतः वृत्ताकार है। सुन्दर वटी की स्थापना पूर्ववत् ही होगी।

सर्वप्रथम केन्द्र से चारों तरफ 5 मी. त्रिज्या 10मी. त्रिज्या, 20 मी. त्रिज्या, 25 मी. एवं तीस मीटर त्रिज्या के पाँच वृत्त (परिधि) बनायें। अन्दर के 5 मी. त्रिज्या के वृत पर चारों दिशाओं में चार बेल के वृक्ष की स्थापना करें। इसके बाद 10 मी. त्रिज्या के द्वितीय वृत्त पर चारों कोनों में चार बरगद वृक्ष स्थापित करें। 20 मी. त्रिज्या की तृतीय परिधि पर समान दूरी पर (लगभग 5 मी.) के अन्तराल पर 25 अशोक के वृक्ष का रोपण करें। चतुर्थ वृत्त जिसकी 25 मी. त्रिज्या है के परिधि पर दिशा के लम्ब से पाँच-पाँच मीटर पर दोनों तरफ दिशा दिशा में आँवला के दो वृक्ष चित्रानुसार स्थापित करने का विधान है। आंवला के दो वृक्षों कि परस्पर दूरी 10 मी. रहेगी। पाँचवें व अन्तिम 30 मी. त्रिज्या के वृत्त पर परिधि पर चारों दिशाओं में पीपल के चार वृक्ष का रोपण करें। इस प्रकार कुल उन्तालिस वृक्ष की स्थापना होगी। जिसमें चार वृक्ष बेल, चार बरगद 25 वृक्ष अशोक, दो वृक्ष आंवला एवं चार वृक्ष पीपल के होंगे।

# 10.5 नक्षत्र वाटिका (नक्षत्र वृक्षों का रोपण)

जिस तरह पृथिवी के धरातल को भूगोलविद 36 की अक्षांश रेखाओं में चिन्हित करते हैं, उसी तरह प्राचीन काल में धरती के ऊपर आकाश को 27 बराबर भागों में बाँटा गया है। जिसके हर एक भाग को एक नक्षत्र कहते हैं। इन नक्षत्रों की पहचान आसमान के तारों की स्थिति देशान्तर रेखा में व्यक्त की जाती है, उसी तरह पृथिवी के समीप के पिण्डों (ग्रहों) की भ्रमण स्थिति नक्षत्रों में व्यक्त की जाती है, भारतीय मान्यता के सत्ताईस नक्षत्रों के नाम कम निम्न प्रकार हैं - 1. अश्विनी, 2. भरणी, 3. कृत्तिका, 4. रोहिणी, 5. मृगशिरा, 6. आर्द्रा, 7. पुनर्वसु, 8. पुष्य, 9. आश्लेषा, 10. मघा, 11. पूर्वाफाल्गुनी, 12. उत्तराफाल्गुनी, 13. हस्त, 14. चित्रा. 15. स्वाती, 16. विशाखा, 17. अनुराधा, 18. ज्येष्टा, 19. मूला, 20. पूर्वाषाढ़ा, 21. उत्तराषाढ़ा, 22. श्रवण, 23. धनिष्ठा, 24. शतिभषा, 25. पूर्वाभाद्रपद, 26. उत्तरा भाद्रपद, 27. रेवती। इन नक्षत्रों के वृक्षों का नाम आयुर्वेदिक, पौराणिक, ज्योतिषीय व तान्त्रिक ग्रन्थों में मिलता है, इन ग्रन्थों में यह वर्णन है कि अपने जन्म-नक्षत्र के वृक्ष की सेवा व वृद्धि करने से अपना कल्याण होता है और अपने जन्म नक्षत्र के वृक्ष को हानि या कष्ट पहुँचाने से अपनी हर प्रकार से बर्वादी होती है।

## नक्षत्र वाटिका -

हर वृक्ष के नक्षत्र का चित्र व उस नक्षत्र के स्वामी का नाम वृक्ष के नाम साथ लिख कर प्रदर्शित किया जा सकता है।

नक्षत्रों के वृक्षों का संक्षिप्त परिचय निम्नानुसार है -

- कुचिला (कारस्करः) मध्यम उँचाई का वृक्ष जो मध्य भारत के वनों में पाया जाता है।
   इसके टिकियानुमा बीजों में विष बहुत अधिक औषधीय महत्त्व का होता है।
- 2. आँवला (धात्री) इसके फल को अमृत फल कहा गया है जो विटामिन 'सी' का समृद्धतम् स्रोत है।

- 3. गूलर (उदुम्बरः) बड़े आकार का छायादार वृक्ष। शुक्र ग्रह की शान्ति में इसकी सिमधा प्रयुक्त होती है।
- 4. जामुन (जम्बू) बहते जल क्षेत्रों के नजदीक आसानी से उगने वाला वृक्ष। मधुमेह की श्रेष्ठतम औषिध।
- 5. खैर (खिदरः) मध्यम उँचाई का कांटेदार वृक्ष। इसकी लकड़ी से कत्था बनता है।
- शीशम/तेंदू (कृष्णः) आर्द्रा नक्षत्र हेतु वर्णित नक्षत्र वृक्ष शब्द कृष्ण के अर्थ में दोनों वृक्ष आ जाते है।
  - शीशम ऊँचे वृक्ष वाली महत्त्वपूर्ण काष्ठ प्रजाति। तेंदू – काले तने वाला वृक्ष जिसकी पत्तियाँ बीड़ी बनाने के काम आती हैं।
- 7. बांस (वंशः) इसे गरीब की इमारती लकड़ी कहते हैं।
- 8. पीपल (अश्वत्थः) अति पवित्र वृक्ष। भगवान बुद्ध को इसी वृक्ष के नीचे बोधि प्राप्त हुई थी।
- 9. नागकेसर (नागः) मुख्य रूप से असम के आई क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से उगने वाला वक्षा इसकी लकड़ी अत्यधिक कठोर होती है।
- 10. बरगद (वटः) वट सावित्री व्रत में महिलाओं द्वारा पूजा जाने वाला बहुत बड़ी छायादार प्रजाति।
- 11. पलाश (पलाशः) सूखे व बंजर क्षेत्रों में उगने वाला मध्यम उँचाई का वृक्ष।

  फूल से होली पर खेलने वाले रंग बनाते हैं। इसे वन ज्वाला (फ्लेम आफ द फारेस्ट) भी
  कहते हैं।
- 12. पाकड़ (प्लक्षः) घनी शीतल छाया देने के लिए प्रसिद्ध वृक्ष।
- 13. रीठा मध्यम उँचाई का वृक्ष जिसका फल झाग देने के कारण धुलाई के कार्यों में प्रयुक्त होता हैं।
- 14. बेल (बिल्वः) कठोर कवच के फल वाला मध्यम उँचाई का वृक्ष जिसकी पत्तियां शिवजी की पूजा में चढ़ाई जाती हैं।

- 15. अर्जुन (अर्जुनः) जलमग्न या ऊँचे जलस्तर वाले क्षेत्रों में आसानी से उगने वाला वृक्ष है। इसकी छाल हृदय रोग की श्रेष्ठतम औषधि है।
- 16. कटेरी (कण्टकारी) छोटी उँचाई के इस वृक्ष के कांटे बहुशाखित होते हैं, इसके फल त्रिदोषनाशक होते हैं।
- 17. मौलिश्री दक्षिण भारत में प्राकृतिक रूप से उगने वाला छायादार-शोभाकार वृक्ष।
- 18. चीड़ (देवदारू) ठंड़े पहाड़ी क्षेत्र में उगने वाली सुई जैसी पत्तियों वाला सीधी ऊँचाई में बढ़ने वाला वृक्ष जिसकी छाल पतली होती है।
- 19. साल (सर्जः) प्रदेश के तराई क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से उगने वाला अति महत्त्वपूर्ण प्रकाष्ठ वृक्ष।
- 20. वञ्जल (जलवेतसः) बहते जल स्रोतों के किनारे उगने वाला छोटी उँचाई का वृक्ष।
- 21. कटहल (पनसः) मध्यम उँचाई का वृक्ष जिसके बृहदाकार फल की सज्जी खाई जाती है।
- 22. आकड़ा (अर्कः) बंजर शुष्क भूमि पर उगने वाली झाड़ी जैसी प्रजाति।
- 23. शमी छोटे कांटों वाला छोटी उँचाई का वृक्ष जिसे उ.प्र. में छ्योंकर व राजस्थान में खेजड़ी कहते हैं।
- 24. कदम्ब भगवान कृष्ण की स्मृति से जुड़ा ऊँचा वृक्ष जो आर्द्र क्षेत्रों में आसानी से उगता है।
- 25. आम (आम्रः)- भारत में फलों के राजा के नाम से विख्यात है।
- 26. नीम (निम्बः) गाँव के वैद्य नाम से प्रसिद्ध औषधीय महत्त्व का वृक्ष।
- 27. महुआ (मधुः) शुष्क पथरीली व रेतीली भूमि में उगने वाला वृक्ष।

# 10.6 औषधीय पर्वत अल्पाइन क्षेत्र (हिमालयी वन) -

स्थान - ट्रांस हिमालय

जल - सर्दियो में अत्यधिक ठण्ड, बर्फबारी के साथ

वनस्पति - यह कैलाश पर्वत और ऋषभ पर्वत पर स्थित हैं। हिमालय क्षेत्र में कैलाश पर्वत स्थित है इसकी पृष्टि वाल्मिकी रामायण में हनुमान के संदर्भ से होती है। हिमालय क्षेत्र में तीन पर्वत है-

- 1. कैलाश पर्वत
- 2. ऋषभ पर्वत
- 3. औषधी पर्वत

हिमालयी क्षेत्र में कई सुगंधित औषधियाँ उपलब्ध थी जिनका वर्णन वािल्मकी रामायण में किया गया है। प्राचीन महाकाव्य में वर्णित वर्णन के अनुसार राम-रावण युद्ध के समय लक्ष्मण के घायल होने पर वैद्य ने द्रोणागिरी पर्वत से औषधी दिया था। जब हनुमान द्रोणागिरी पर्वत पहुँचे वहां उन्होंने 4 औषधियों को देखा -

- 1. मृत संजीवनी ( जीवन रक्षक औषधि)
- 2. विशालकर्णो (हथियार से लगने वाले, घावों के भरने में सक्षम औषधि)
- 3. स्वर्णकर्णी (शरीर को स्वस्थ अवस्था में लाने में सक्षम औषधि)
- 4. संघानी (टुटे हुए अंग/ हड्डी जोड़ने वाली औषिध)

तीन संभावित प्रजातियाँ हैं जिन्हे संजीवनी जड़ी बूटी के रूप में पहचाना जा सकता है।

- 1. रुद्रवंती या रुदंती (सेरेता केटिका)
- 2. भूती संजीवनी (सेलाजिनेला बायोप्टेरिस)
- 3. जीवंती या जीवका (फ्लिकरिंग रिया विम्बियता)

#### 10.7 अशोक वाटिका -

#### (सदाबहार वन)

अशोक वृक्ष की अधिकता के कारण इसका नाम अशोक वाटिका रखा गया था। अन्य पौधो मे सरला, किर्णकाश, खर्जुश, प्रियाला, कुतजा, केतकी, प्रियांगु, नीपा आदि प्रमुख पौधे अशोक वाटिका में थे। अशोक वृक्ष की विभिन्न रंग की 4 प्रजाति थी। चंपक, संडाना, नागकेसर शाला और उद्धालक आदि का उल्लेख वाल्मिकी रामायण में किया है। जीवों की कुछ सामान्य प्रजातियाँ जैसे कोकिला (कोयला), मयूरा (मोर), मृग (हिरण) हंस, सारस, बतख, केकड़ा आदि अशोक वाटिका में पाए जाते थे।

#### 10.8 किष्किन्धा वानिकी -

किष्किन्धा वन क्षेत्र में फलदार वृक्षो की अधिकता थी उनमे से प्रमुख वृक्ष जम्बू, प्रियाला, बरगद, पीपल, आम, लाल चंदन, अशोक आदि कई प्रकार की लताएँ। जैसे - मालती, मिल्लका, वसंती, माधवी। पम्पा सरोवर झील इसी क्षेत्र में स्थित थी। जीवों की सामान्य प्रजातियाँ लंगूर, बंदर, भालू, मारीच, मछली आदि किष्किंधा वन क्षेत्र में पाए जाते थे।

## 10.9 दण्डकारण्य वानिकी -

इस क्षेत्र में उष्णकिटबंधीय पर्णपाती वन थे। वृक्षों की विशाल पंक्तियों के कारण इसका नाम दण्डक आरण्य रखा गया था। इस क्षेत्र में मधुका साला (साल वृक्ष) बिल्ब वृक्ष बादरी (भारतीय बेर) आदि प्रमुख वृक्ष थे।

जीवों की कुछ सामान्य प्रजातियाँ जैसे महिस (भैंस), चितीदार हिरण, भारतीय सारस, भेड़िया, बाघ आदि दण्डक अरण्य में पाए जाते थे।

# 10.10 वैदिक वाङ्मय में जैव विविधता -

सत्यं बृहदृतम्रुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति। सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतुः॥

(अथर्व. 12.1.1)

पृथ्वी को धारण करने वाले ब्रह्म, तप, यज्ञ दीक्षा तथा विशाल रूप से फैले हुए जल हैं, इस पृथिवी ने भूत काल के जीवो का पालन किया था और भविष्यकाल के जीवों का भी पालन करेगी इस प्रकार की पृथिवी हमे निवास के लिए स्थान प्रदान करे।

> असंबाधं बध्यतो मानावानां यस्या उद्वतः प्रवतः समं बहु। नानावीर्या ओषधीर्या बिभर्ति पृथिवी नः प्रथतां राध्यतां नः॥

> > (अथर्व. 12.1.2)

जो भूमि पर ऊँचे, नीचे तथा समतल जड़ी बूटियों को धारण करती है, वह भूमि हमें सभी प्रकार तथा पूर्ण रूप से प्राप्त हो और हमारी सभी मनोकामनाओं का उल्लेख किया गया है।

# गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तोऽरण्यं ते पृथिवी स्योनमस्तु।

(अथर्व. 12.1.11)

हे पृथिवी। तेरे बर्फ से ढके हुए पर्वत एवं घने वन हमे सुख प्रदान करें। बफीर्ली क्षेत्रों के वनों का उल्लेख किया गया है।

शिला भूमिरक्मा पांसुः सा भूमिः संघृता घृता.. । (अथर्व. 12.1.26)

पृथिवी शिला, भूमि, पत्थर और धूल के रूपों को धारण करती हैं।

ये त आरण्याः पद्मवो मृगा वने हिताः सिंहा व्याघ्राः पुरुषादश्चरन्ति। उठं वृकं पृथिवि दुच्छुनामित ऋक्षीकां रक्षो अप बाधयास्मत्॥

(अथर्व. 12.1.49)

अरण्य (जंगल) के व्याघ्र, भेड़िया, भालुओं आदि जीवों का उल्लेख है।

यां द्विपादः पक्षिणः संपतन्ति हंसाः सुपर्णाः शकुना वयांसि ।

(अथर्व. 12.1.51)

दो पांवो वाले पक्षी हंस,कौवे, गिद्ध आदि का उल्लेख है।

#### अभ्यास प्रश्न 🖋

#### प्र.1 सही विकल्प का चयन कीजिए।

- (1) नक्षत्रों की संख्या है-
  - अ) 20
- ब) 27
- स) 22
- द) 24

- (2) कत्था किस वृक्ष से बनता है
  - अ) बरगद
- ब) पलाश
- स) खैर
- द) गूलर
- (3) निम्न में से किस वृक्ष का नाम बोधि वृक्ष पड़ा
  - अ) अशोक
- ब) बरगद स) पीपल
- द) आम

## प्र.2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

- (1) पञ्चवटी वाटिका में प्रमुखतया कुल......वृक्ष हैं।
- (2) .....विटामिन C का प्रमुख स्त्रोत है।
- (3) नक्षत्र वाटिका में रोपित पौधों की संख्या ......है।

## प्र.3 निम्नलिखित कथनों के सामने सत्य (√) अथवा असत्य (×) का चिह्न अंकित कीजिए।

- (1) पृथिवी पर शिला, पत्थर, धूल के कण उपस्थित होते हैं।
- (2) आम को फलों का राजा कहा जाता है।
- (3) नीम औषधीय महत्व का वृक्ष है।

#### प्र.4 सही जोड़ी मिलान कीजिए।

कॉलम 'अ' कॉलम 'ब'

- (1) कालिदास क) रामायण
- (2) वाल्मिकी ख) कुमारसंभवम्
- ग) मध्यम ऊँचाई का कांटेदार वृक्ष (3) गूलर
- (4) खैर घ) बड़े आकार का छायादार वृक्ष

## प्र.5 लघूत्तरीय प्रश्न

- (1) जैवविविधता किसे कहते है ?
- (2) चित्रकूट वन क्षेत्र के बारे में बताइए।
- (3) नक्षत्र वाटिका क्या है ?

## प्र.6 अति लघूत्तरीय प्रश्न

(1) दण्डक आरण्य वानिकी में किस प्रकार के वन पाए जाते थे।

## प्र.7 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) वैदिक वाङ्मय में जैवविविधता पर प्रकाश डालिए।

# परियोजना कार्य

- (1) अपने गुरुजी की सहायता से अपनी पाठशाला की वाटिका में पञ्चवटी पौधे रोपित कीजिए।
- (2) नक्षत्र वाटिका का चार्ट तैयार कीजिए।

## वेदविभूषण परीक्षा / Vedavibhushan Exam/

## वेद्विभूषण द्वितीय वर्ष/ उत्तरमध्यमा द्वितीय वर्ष/कक्षा 12 वीं

## आदर्श प्रश्न पत्र / Model Question Paper

#### विषय - भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा एवं प्रयोग

#### सेट **–** A

- सभी प्रश्न हल करना अनिवार्य है।
- सभी प्रश्न के उत्तर पेपर में यथास्थान पर ही लिखें।
- इस प्रश्न पत्र में कुल 42 प्रश्न हैं, प्रत्येक प्रश्न के सामने निर्धारित अंक दिये गये हैं।
- उत्तीर्णता हेतु न्यूनतम 40% अंक निर्धारित हैं।

- It is mandatory to attempt all questions compulsorily.
- Write down the answers at the appropriate places provided
- This question paper contains 42 questions Marks for each question is shown on the side.
- The minimum passing marks is 40 %.

# सही विकल्प के सामने (√) चिन्ह बनाइए

 $5 \times 1 = 5$ 

- प्र.1 आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान के कितने प्रयोजन है?
  - (अ) 2

(स) 1

(ब) 3

- (द) 4
- प्र.2 आयुर्वेद को किस वेद का उपवेद कहा जाता है?
  - (अ) ऋग्वेद

(स) अथर्ववेद

(ब) सामवेद

- (द) यजुर्वेद
- प्र.3 ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में भौतिकी के किस सिद्धांत के बारे में उल्लेख है?
  - (अ) ऊर्जा संरक्षण सिद्धांत
- (स) ब्रह्माण्ड उत्पत्ति सिद्धांत
- (ब) गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत
- (द) द्रव्य और ऊर्जा का रूपांतरण

স.4	जन्तुओं का वैज्ञानिक वर्गीकरण कितने प्र	कार से	किया हैं?
	(अ) 2	(स)	5
	(ৰ) 4	(द)	3
प्र.5	अथर्ववेद मे किस धातु का उपयोग युद्ध में प्रयु	क्त होने	। वाले छर्रे (गोली) बनाने में किया जाता
	થા?		
	(अ) सोना (स्वर्ण)	(स)	सीसा
	(ब) रजत (चाँदी)	(द)	ताँबा
बहु वि	कल्पीय प्रश्न		$5 \times 2 = 10$
স.6	प्रसिद्ध ग्रंथ युक्तिकल्पतरू का नौयानयुक्ति	अध्या	य किससे संबंधित है?
	(अ) रसविद्या से	(स)	नौका निर्माण से
	(ब) भौतिकी से	(द)	आयुर्वेद से
ਸ. <i>7</i>	अब तक ज्ञात शुल्बसूत्रों की कुल संख्या है	<b>i</b> ?	
	(अ) 8	(स)	7
	(ৰ) 6	(द)	4
স.8	योग में स्वास्थ्य के घटक बताए गए है ?		
	(अ)5	(स)	2
	(ৰ) 4	(द)	3
স.9	यज्ञ वेदि कितने प्रकार की होती हैं?		
	(अ) 3	(स)	4
	(ৰ) 2	(द)	5
স.10	यंत्रचलित नाव का वर्णन किस ग्रंथ में मित	रुता है <sup>°</sup>	?
	(अ) महाभारत	(स)	युक्तिकल्पतरु
	(न) रामाराण	(군)	उपरोक्त सभी

रिक्त स	थानों की पूर्ति कीजिए			1	.0 x 2 =	= 20
प्र.11	शल्यशास्त्र	का प्रमुख	व आयुर्वेद का ग्रंथ	है।		
স.12	चेचक के टीके का निर्माण		ने किर	ग्रा।		
प्र.13	सूर्य समस्त	का स्त्रो	त है।			
ਸ.14	एककोशिय जीव मे		कोिशका होर्त	हि।		
স.15	वैशेषिक दर्शन में द्रव्य को		भागों में बाँट	ा गया है।		
স.16	1 अंगुल में	से.म	मी. होते हैं।			
ਸ.17	योग के अनुसार श्वासो का	नियमन		के द्वारा होता है।		
प्र.18	जो आयु के हित एवं अहित	का ज्ञान	। कराएँ	<mark>कहलात</mark>	हि।	
प्र.19	चरक संहिता में जीवाणुओ	को	भागों	में विभाजित कि	या गया ह	है।
স.20	उदयनाचार्य की किरणावर्ल	ो में 30	मुहूर्त का	दिन हो	ता है।	
सही ज	गोड़ी मिलान कीजिए			5	$5 \times 2 =$	10
স.21	पंचमहाभूत	(क)	वात, पित, कफ			
স.22	दोष	(ख)	चिकित्सा पद्धति			
স.23	ओज्	(ग)	सात आधारभूत	घटक		
স.24	धातु	(घ)	पाँच तत्व			
স.25	पंचकर्म	( ভ.)	जीवन शक्ति			
सत्य य	गा असत्य बताइए			5	5 x 1 =	5
স.26	आयुर्वेद निवारक एवं उपच	ारात्मक	दोनो दवाओं से स	बंधित है।		
স.27	रोगजनक जीवाणुओं को न	ग्न आँखे	ो के द्वारा देखा ज	ा सकता है।		
স.28	गमन कर्म को गति कहते है	l				
স.29	परमाणु को विभाजित किय	ा जा सक	त्ता है।			
प्र.30	मानव शरीर प्रकृति के 5 त	त्त्वों से गि	मेलकर बना हुआ	है।		

अति ल	ठघूत्तरीय प्र <del>श्</del> न	$5 \times 2 = 10$
प्र.31	आयुर्वेद के ग्रंथो में सबसे प्राचीनतय ग्रंथ है?	
प्र.32	सूर्य से प्राप्त ऊर्जा क्या कहलाती है?	
я.33	जिस रूप में धातुएँ पृथ्वी से उत्खिनत की जाती है उसे क्या कहते है	?
प्र.34	योगसूत्र के रचयिता का नाम लिखिए ?	
प्र.35	पाइथागोरस प्रमेय किस भारतीय प्रमेय पर आधारित है?	
लघूत्तर	रीय प्रश्न	$5 \times 4 = 20$
प्र.36	नक्षत्र वाटिका के बारे में बताइए?	
प्र.37	योगासनों से होने वाले लाभ लिखिए।	
प्र.38	वर्ग का क्षेत्रफल ज्ञात करने का शुल्बसूत्र लिखिए?	
प्र.39	महर्षि कणाद का परमाणुवाद का सिद्धांत लिखिए ?	
ਸ.40	पौधों के रोगयस्त होने के कोई 3 कारण बताइए?	
दीर्घ उ	त्तरीय प्रश्न	$10 \times 2 = 20$
ਸ.41	(क) पंचमहाभूत सिद्धांत को समझाइए?	
	(ख) वेदों में संख्या शब्दों का किस प्रकार से उल्लेख किया गया है?	
ਸ.42	(क) प्राचीन भारतीय सर्जरी की प्रणाली को समझाइए।	
	(ख) ऊर्जा संरक्षण का नियम लिखिए।	

# वेद्विभूषण परीक्षा / Vedavibhushan Exam/

# वेदविभूषण द्वितीय वर्ष/ उत्तरमध्यमा द्वितीय वर्ष/कक्षा 12 वीं

# आदर्श प्रश्न पत्र / Model Question Paper

# विषय - भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा एवं प्रयोग

## सेट – B

सही विकल	प के सामने (✓) चिन्ह बनाइए		$5 \times 1 = 5$
प्र. 1 यइ	ा मण्डप कितने प्रकार के होते हैं?		
(왱)	5 Spagiagiagi	(स)	2
(ब)	4	(द)	1
प्र. 2 शि	खाग्रीव है ?		
(왱)	कॉपर सल्फेट	(स)	ताँबा
(ब)	आर्सोनिक ऑक्साइड	(द)	जिंक
प्र. 3 द्रव	य और ऊर्जा के रूपान्तरण का वर्णन ऋग्वेद	के किर	न मण्डल मे हैं?
(왱)	10 वे	(स)	7 वे
(ब)	5 वे	(द)	9 वे
प्र.4 पश्	कर्म चिकित्सा पद्धति का वर्णन किस संहिता	में दिय	ा गया है?
(अ)	चरक संहिता	(स)	शाईर संहिता
(ब)	सुश्रुत संहिता	(द)	इनमें से कोई नही।
प्र. 5 सा	मान्य चिकित्सा से संबंधित है?		
(왱)	चरक संहिता	(स)	कञ्चप संहिता
(ब)	सुश्रुत संहिता	(द)	शार्ङ्गर संहिता
बहु विकर्ल्प	ोय प्र <del>श्</del> न		$5 \times 2 = 10$
प्र. 6 च	रक संहिता में जीवाणुओं को कितने भागों में व	बाँटा ग	ाया है?
(अ)	2	(स)	4

	(ब)	3	(द)	5
ਸ.7	आ	कृष्टि शक्ति का सिद्धान्त ने दिया था?		
	(왱)	भास्कराचार्य	(स)	सुश्रुत
	(ब)	वराहमिहिर	(द्)	इनमे से कोई नही।
ਸ.8	इन्द्र	धनुष के निर्माण के बारे में किस संहिता में ब	ताया ग	ाया है?
	(왱)	बृहत्संहिता	(स)	चरकसंहिता
	(ब)	सुश्रुतसंहिता	(द)	इनमे से कोई नही।
प्र.9		न में से मिश्रधातु है?		
		स्वर्ण	(स)	पीतल
	(ब)	रजत	(द)	जिंक
ਸ.10	धात्	<sub>]</sub> ओं से सार निकालने में किस यन्त्र का प्रयोग	होता	થા?
	(왱)	डमरू यन्त्र	(स)	धूप यन्त्र
	(ब)	कोष्टी यन्त्र	(द)	इनमें से कोई नही।
रिक्त र	स्थानों	की पूर्ति कीजिए		$10 \times 2 = 20$
प्र.11चिकित्सा पद्धति एक ही समय में शरीर, मन और स्वयं का उपचार करने				
की प्रणाली है।				
ਸ.12	एक	पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्थानांतरित होने वाले	रोग.	कहलाते हैं।
प्र.13	सिर	्र द्मन्तिशरोमणी के अनुसार 2 घटिका में		क्षण होते हैं।
		वेद मेंधातु के निर्घ्कषण की		
		प्रकार की होती है।		
प्र.16 आयुर्वेद कोका उपवेद कहा गया है।				
	प्र.17 स्वास्थ्य केघटक बताए गए है।			
		॥यान प्रमेय मेंकोण के बारे	रे में त	नारा है।
я.19	વરા	षिकदर्शन में द्रव्य कोभागे	। म व	ા પાયા હા

ਸ.20	रसशाला में डमरू यन्त्र का	ा उपयोगमें किया जाता थ	ті
सही जं	ोड़ी मिलान कीजिए		$5 \times 2 = 10$
স.21	वृक्षायुर्वेद (क	<ul><li>हाथियों के उपचार से संबंधित</li></ul>	
স.22	मृगायुर्वेद (र	व) पशु चिकित्सा	
স.23	अरवायुर्वेद (ग	ा) पौधों का उपचार	
ਸ.24	गजायुर्वेद (घ	I) घोड़ों का उपचार	
স.25	चरक संहिता (ड	इ.) शल्यचिकित्सा	
सत्य य	ग असत्य बताइए		$5 \times 1 = 5$
স.26	त्रिदोष की साम्य अवस्था स	वास्थ्य का परिचायक है।	
স.27	योगासनों से शरीर में रक्त	संचरण सुव्यवस्थित होता है।	
স.28	प्रणायाम की उपयोगिता कें	इंसर जैसे दुसाध्य रोगों मे है।	
স.29	संक्राम <mark>क रोग आपसी संप</mark> र	र्क मे आने से फैलते हैं।	
ਸ.30	काँसा <mark>एक</mark> मिश्रधातु है।		
अति ल	ठघूत्तरीय <mark>प्र</mark> श्न		$5 \times 2 = 10$
प्र.31	हठयोग शास्त्रों में किन विष	नयों का वर्णन हैं?	
प्र.32	वासुधैवकुटुम्बकम् का अर्थ बताइए?		
प्र.33	आयुर्वेद के तीन मूलग्रन्थों	के नाम लिखिए?	
प्र.34	शरीर के 7 संरचनात्मक घ	ाटकों के नाम लिखिए।	
प्र.35	शरीर की कार्यात्मक इकाई	का नाम लिखिए।	
लघूत्तर	रिय प्रश्न		$5 \times 4 = 20$
স.36	नाडिशोधन प्राणायाम का	महत्व लिखिए।	
प्र.37	पञ्चवटी वाटिका का निर्माण	ग कैसे किया जाता है ? पञ्चवटी में उल्लेखि	वत वृक्षों के नाम
लिखिप	र।		
प्र.38	अष्टाङ्ग आयुर्वेद क्या हैं?		

प्र.39 न्यायदर्शन में ध्वनि प्रसारण के संदर्भ में तरंग गति के दो उदाहरण दीजिए?

प्र.40 पौधों की उपचार प्रणाली बताइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न  $10 \times 2 = 20$ 

प्र.41 (क) धातु संक्षारण से क्या तात्पर्य है, धातु संक्षारण रोकने के उपाय बताइए। (ख) प्राचीन भारतीय गणित के परिपेक्ष्य में ज्यामिती को समझाइए।

प्र.42 (क) ऋग्वेद में वर्णित समुद्रयान, पोत निर्माण का उल्लेख कीजिए।

(ख) समकोण त्रिभुज का क्षेत्रफल ज्ञात करने के लिए शुल्बसूत्र लिखिए।



# वेद्विभूषण परीक्षा / Vedavibhushan Exam/

# वेद्विभूषण द्वितीय वर्ष/ उत्तरमध्यमा द्वितीय वर्ष/कक्षा 12 वीं

# आदर्श प्रश्न पत्र / Model Question Paper

## विषय - भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा एवं प्रयोग

सेट-C

सही वि	किल्प के सामने (✓) चिन्ह बनाइए		$5 \times 1 = 5$
प्र. 1	सबसे बड़ा एवं प्राचीन शुल्बसूत्र है?		
	(अ) मानव शुल्बसूत्र	(स)	आपस्तंभ शुल्बसूत्र
	(ब) बौधायन <mark>शुल्बसूत्र</mark>	(द)	मैत्रायणी शुल्बसूत्र
प्र. 2 <sup>र</sup>	युक्तिकल्परू के नौयान <mark>य</mark> ुक्ति अध्याय के अनु	सार स	<mark>गमान्य नाव कितने प्रकार की होती है</mark> ?
	(अ) 7	(स)	10
	(ৰ) 5	(द)	6
प्र. 3	रसशाला में पारद धातु की भस्म बनाने में	किस र	प <mark>न्त्र का उ</mark> पयोग होता <mark>था</mark> ?
	(अ) डमरूयन्त्र	(स)	धूपयन्त्र
	(ब) कोष्ठी यन्त्र	(द)	इनमे से कोई नहीं
प्र.4	बेल मेटल मिश्रधातु, धातुओं से मिलकर ब	वनी हुई	₹ है?
	(अ) ताँबा, जिंक	(स)	ताँबा, टिन
	(ब) कॅासा, टिन	(द)	इनमें से कोई नही
प्र. 5	जिसके अणु विभिन्न प्रकार के परमाणुओं र	ने मिल	कर बने होते हैं ?
	(अ) यौगिक	(स)	मिश्रण
	(ब) तत्त्व	(द)	धातु
बहु विव	कल्पीय प्रश्न		$5 \times 2 = 10$

	(अ) 8	(स)	4			
	(ब) 6	(द)	5			
प्र.7	अयस्कों से धातु के निर्फ्कषण की विधि क्या कहलाती है?					
	(अ) धातुकर्म	(स)	ब्लीचिग			
	(ब) शोधन	(द्)	इनमें से कोई नहीं			
प्र.8	जन्तुओं को वैज्ञानिक रूप से कितने भागों में वर्गीकृत किया गया है?					
	(अ) 2	(स)	4			
	(ৰ) 3	(द)	5			
प्र.9	अथर्ववेद में कफ रोग के लिए किस वनस्पतिक औषधि वृक्ष का उल्लेख है?					
	(अ) पीपल	(स)	चीड़ (चीपुद्र)			
	(ब) बरगद	(द)	आम			
স.10	शल्यशास्त्र का प्रमुख ग्रन्थ है?					
	(अ) सुश्रुतसंहिता	(स)	चरक संहिता			
	(ब) भावग्रन्थ	(द)	माध <mark>वनिदान</mark>			
रिक्त र	स्थानों की पूर्ति कीजिए			$10 \times 2 = 20$		
प्र.11	जो आयु के हित एवं अहित का ज्ञान कराएँकहलाता है।					
ਸ.12	कञ्चप संहिताचिकित्सा से सम्बन्धित है।					
प्र.13	शतपथ ब्राह्मण मेंप्रकार के पशुओं का वर्णन हैं।					
प्र.14	अमीबाजीव हैं।					
प्र.15	बहुकोशिकीय जीवों के शरीर का निर्माणसे होता हैं।					
प्र.16	दो या दो से अधिक धातुओं को मिलाकर बनाई जाती है।					
प्र.17	विशेष नावधातु से बनाई जाती है।					
স.18						
प्र.19	राजाभोज द्वारा वर्णित नावों की मापन इकाई कोकहते हैं।					

স.20	दोलन गति का उल्लेख	• • • • • • • •	पुराण में मिलता है।				
सही जोड़ी मिलान कीजिए $5 \times 2 = 10$							
স.21	स्वास्थ्य	(क)	तनाव प्रबन्धन				
স.22	षट् कर्म	(ख)	आर्युयज्ञेन कल्पतां				
प्र.23	समाधि	(ग)	शुद्धिकिया				
স.24	योगनिद्रा	(ঘ)	परमानन्द की प्राप्ति				
স.25	यजुर्वेद	(ड.)	4 घटक				
सत्य य	ा असत्य बताइए			$5 \times 1 = 5$			
স.26	<ul><li>ह शरीर, मन एवं स्वयं मानव जीवन के त्रिपद है।</li></ul>						
স.27	ऊर्जा को नष्ट किया जा सकता है।						
স.28	रघुवंशम्, कालिदास द्वारा रचित ग्रन्थ है।						
স.29	रसरत्नाकार, नागार्जुन की कृति हैं।						
স.30	क्षार, पदार्थ को मृदु बना देता है।						
अति ल	ज्यूत्तरीय <mark>प्रश</mark> ्न			$5 \times 2 = 10$			
प्र.31	यक्तिकल्पतरू में वर्णित जहाज निर्माण की काष्ठ कितने प्रकार बताई गई है?						
স.32	बिना पहिए वाला जलवाहन क्या कहलाता है?						
प्र.33	सूर्यसूक्त के अनुसार प्रकाश की कितनी गति है?						
प्र.34	चरक संहिता किस चिकित्सा पद्धित से संबंधित है?						
प्र.35	त्रिदोष के नाम लिखिए?						
लघूत्तरीय प्रश्न $5 \times 4 = 20$							
স.36	ध्यान का संक्षिप्त वर्णन करे ?						
प्र.37	वैदिक वाङ्मय मे जैवविविधता को समझाइए।						
प्र.38	काँसा धातु से अग्नि उत्पन्न करने की किया को समझाइए।						
प्र.39	यजुर्वेद में वर्णित समुद्रयान, पोत निर्माण का उल्लेख कीजिए?						

प्र.40 समुद्री जहाज में लोहें की कील को क्यों नहीं बाँधना चाहिए?

दीर्घ उत्तरीयप्रश्न  $10 \times 2 = 20$ 

प्र.41 (क) पाई (π) का मान निकालने के लिए बौधायान शुल्बसूत्र को लिखिए। (ख) स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता के संदर्भ में योग की व्यख्या कीजिए।

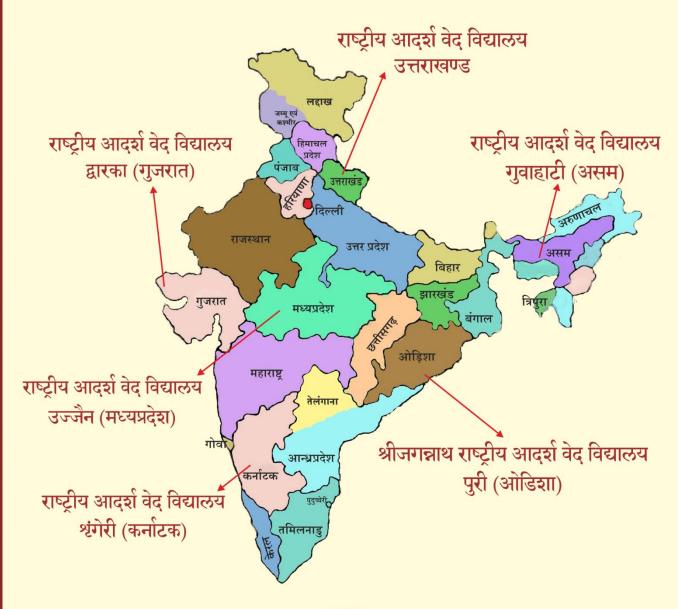
- प्र.42 (क) आयुर्वेद तथा विश्वस्वास्थ संगठन द्वारा वर्णित स्वास्थ्य की परिभाषओं को समझते हुए दोनों के मध्य सम्बन्ध को स्पष्ट कीजिए।
  - (ख) वृक्ष वनस्पतियों का आयुर्वेद की दृष्टि से क्या महत्व है?



# महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

# द्धारा सञ्चालित एवं प्रस्तावित राष्ट्रीय आदर्श वेद विद्यालय





# महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - ४५६००६ (म.प्र.)

Phone: (0734) 2502266, 2502254, E-mail: msrvvpujn@gmail.com, website-www.msrvvp.ac.in